ISSN-0971-8397

योजना

विशेषांक

जनवरी 2011 विकास को समर्पित मासिक मूल्य : 20 रुपये

चौराहे पर भारतीय कृषि

प्रथम स्वतंत्रता संग्राम–1857
प्रकाशन विभाग की चुनिंदा पुस्तकें

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार
सूचना भवन, सी.जी.ओ. कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली

[illegible] सूचना भवन, सी.जी.ओ. कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली (2436[illegible]) [illegible] सूचना सचिवालय, दिल्ली (2[illegible]); सी–70, केंद्रीय सदन, बेलापुर, नवी मुंबई (2[illegible]) [illegible] कोलकाता (2[illegible]); [illegible] चेन्नई (2[illegible]); [illegible] पटना (2[illegible]); [illegible] हिरण्यगर्भपुरम (2[illegible]); [illegible] (2[illegible]); [illegible] (2[illegible]); [illegible] अहमदाबाद (26[illegible]); [illegible] 02, [illegible] (2[illegible])

ज्यादा जानकारी के लिए हमारी वेबसाइट देखें –

[illegible]

योजना

वर्ष : 55 • अंक : 1 • जनवरी 2011 • पौष-माघ, शक संवत 1932 • कुल पृष्ठ : 76

प्रधान संपादक
नीता प्रसाद

वरिष्ठ संपादक
राकेशरेणु

संपादक
रेमी कुमारी

संपादकीय कार्यालय

538, योजना भवन, संसद मार्ग,
नयी दिल्ली-110 001
दूरभाष : 23717910, 23096738
टेलीफैक्स : 23359578
ई-मेल : exeed.yojana@gmail.com
yojanahindi@gmail.com
वेबसाइट : www.yojana.gov.in
www.publicationsdivision.nic.in
a) dpd@nic.in
b) dpd@hub.nic.in

संयुक्त निदेशक (उत्पादन)
जे.के. चंद्रा

व्यापार व्यवस्थापक (प्रसार एवं विज्ञापन)
सूर्यकांत शर्मा
दूरभाष : 26100207, 26105590
फैक्स : 26175516
ई-मेल : pdjucir_icm@yahoo.co.in

आवरण : **आर. एस. रावत**

इस अंक में

संपादकीय	–	5
ग्रामीण-शहरी संबंधों की निरंतरता की चुनौतियां	योगिन्दर के अलघ	6
छोटी जोतों का सुदृढ़ीकरण	वी.एस. व्यास	13
वित्तपोषण : कुछ मुद्दे	के.जी. करमाकर	15
कृषि की अभिवृद्धि हेतु तीन विचार	अशोक गुलाटी कावेरी गांगुली	21
भारत में खेती की समस्याएं	सुभाष शर्मा	25
जैविक खेती : समस्याएं और संभावनाएं	कुलदीप शर्मा सुधीर प्रधान	31
झरोखा जम्मू-कश्मीर का	–	35
भारत में बागवानी : स्थिति और संभावनाएं	बिजय कुमार	38
कृषि का ऊंचा उठता ग्राफ	वेद प्रकाश अरोड़ा	41
भारत में कृषि : चुनौतियां एवं समस्याएं	अनीता मोदी	44
कृषि व्यापार के प्रमुख मुद्दे	सुखपाल सिंह	48
जैविक खादों से कृषि उत्पादन में वृद्धि	सत्यभान सारस्वत	51
अब वक़्त है अनुबंध खेती का	भूपेंद्र राय	53
भारतीय मसाले : अपरिमित संभावनाएं	आर. बी. एल. गर्ग	55
क्या आप जानते हैं : जेनेटिकली मोडिफायड (जीएम) फूड्स	–	57
खुशहाल बनाने वाली प्रमुख कृषि विकास योजनाएं	संगीता यादव	59
स्थानीय पत्रकारिता का अनूठा संसार	सुभाष सेतिया	63
शोधयात्रा : स्वचालित सिंचाई प्रणाली	–	65
जहां चाह वहां राह : तकनीक से तरक़्क़ी	हरि विश्नोई	67
सांस्कृतिक राष्ट्रीयता के जनक : स्वामी विवेकानंद	सरोज कुमार वर्मा	69
ख़बरों में	–	71

योजना हिंदी के अतिरिक्त असमिया, बांग्ला, अंग्रेजी, गुजराती, कन्नड़, मलयालम, मराठी, तमिल, उड़िया, पंजाबी, तेलुगु तथा उर्दू भाषाओं में भी प्रकाशित की जाती है। पत्रिका मंगवाने हेतु, नयी सदस्यता, नवीकरण, पुराने अंकों की प्राप्ति एवं एजेंसी आदि के लिए मनीआर्डर/डिमांड ड्राफ्ट/पोस्टल आर्डर 'निदेशक, प्रकाशन विभाग' के नाम से बनवा कर निम्न पते पर भेजें : व्यापार व्यवस्थापक (प्रसार एवं विज्ञापन), प्रकाशन विभाग, ईस्ट ब्लाक IV, लेवल VII, आर.के. पुरम, नयी दिल्ली-110066 दूरभाष : 26100207, 26105590, तार : सूचनाप्रकाशन।

सदस्य बनने अथवा पत्रिका मंगाने के लिए आप हमारे निम्नलिखित बिक्री केंद्रों पर भी संपर्क कर सकते हैं :- सूचना भवन, सीजीओ कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, नयी दिल्ली-110003 (दूरभाष : 24367260, 5610), हाल सं. 196, पुराना सचिवालय, दिल्ली-110054 (दूरभाष : 23890205) * 701, सी- विंग, सातवीं मंजिल, केंद्रीय सदन, बेलापुर, नवी मुंबई-400614 (दूरभाष : 27570686) * 8, एसप्लानेड ईस्ट, कोलकाता-700069 (दूरभाष : 22488030) * 'ए' विंग, राजाजी भवन, बंसल नगर, चेन्नई-600090 (दूरभाष : 24917673) * प्रेस रोड नयी गवर्नमेंट प्रेस के निकट, तिरुवनंतपुरम-695001 (दूरभाष : 2330650) * ब्लॉक सं-4, पहला तल, गृहकल्प, एमजी रोड, नामपल्ली, हैदराबाद-500001 (दूरभाष : 24605383) * फर्स्ट फ्लोर, 'एफ' विंग, केंद्रीय सदन, कोरामंगला, बंगलुरु-560034 (दूरभाष : 25537244) * बिहार राज्य कोऑपरेटिव बैंक भवन, अशोक राजपथ, पटना-800004 (दूरभाष : 2683407) * हॉल सं-1, दूसरा तल, केंद्रीय भवन, सेक्टर-H, अलीगंज, लखनऊ-226024 (दूरभाष : 2225455) * अंबिका कॉम्प्लेक्स, फर्स्ट फ्लोर, पाल्दी, अहमदाबाद-380007 (दूरभाष : 26588669) * के.के.बी. रोड, नयी कॉलोनी, मकान संख्या-7, चेनीकुटी, गुवाहाटी-781003 (दूरभाष : 2665090)

चंदे की दरें : वार्षिक : 100 रु. **द्विवार्षिक :** 180 रु.; **त्रैवार्षिक :** 250 रु.; **विदेशों में वार्षिक दरें : पड़ोसी देश:** 500 रु.; **यूरोपीय एवं अन्य देश :** 700 रु.

'योजना' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। ज़रूरी नहीं कि ये लेखक भारत सरकार के जिन मंत्रालयों, विभागों अथवा संगठनों से संबद्ध हैं, उनका भी यही दृष्टिकोण हो। पत्रिका में प्रकाशित विज्ञापनों की विषयवस्तु के लिए 'योजना' उत्तरदायी नहीं है।

आपकी राय

विकास को प्रतिबिंबित करता अंक

योजना का नवंबर '10 अंक अन्य अंकों की भांति विशेष सामग्रियों से सजा है। अंक में दूरसंचार नेटवर्क से संबंधित आलेखों का सीधा तथा सरल प्रस्तुतीकरण प्रशंसनीय है। वास्तव में, दूरसंचार माध्यमों की समाज में प्रभावी भूमिका होती है। भारत में ऐसा कोई क्षेत्र नहीं, जहां संचार माध्यमों का लाभ नहीं उठाया जा रहा हो। जे.एस. सरमा, रजत कथूरिया, अजय भट्टाचार्य, विजयलक्ष्मी के. गुप्ता, रचना शर्मा तथा पराग कार के आलेख में दूरसंचार के रूप में मोबाइल तथा टेलीफोन माध्यमों का ही विशेष रूप से उल्लेख किया गया है। दूरसंचार का क्षेत्र जितना व्यापक है, उतना ही प्रभावकारी भी है। दूसरी ओर, जी. रजिता, ए.के. अरुण तथा सतीश चंद्र सक्सेना के आलेखों में दूरसंचार के अन्य माध्यमों का भी उल्लेख हुआ है। वर्तमान समय में दूरसंचार केवल विचारों के आदान-प्रदान तक सीमित नहीं रहा है बल्कि यह शिक्षा, मनोरंजन तथा चिकित्सा आदि क्षेत्रों में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। हर वस्तु, विचार, भाव तथा तकनीक के सकारात्मक तथा नकारात्मक पक्ष होते हैं। यह व्यक्ति पर निर्भर करता है कि वह किस पहलू का चयन करता है। सुभाष शर्मा का आलेख मोबाइल के सकारात्मक तथा नकारात्मक पहलुओं का उल्लेख करता है, किंतु वे मोबाइल फोन के उपयोग के विरोधी लगते हैं। मेरे विचार से मोबाइल तथा अन्य आविष्कार विशुद्ध रूप से गुण-दोष रहित होते हैं। हमारी उपयोग की प्रकृति, प्रवृत्ति तथा संस्कार ही उन्हें उपयोगी या अनुपयोगी बनाते हैं। संपादकीय तथा 'क्या आप जानते हैं' क्रमशः विचारोत्तेजक तथा तथ्यपरक हैं। अंक में अगर दूरसंचार से संबंधित कानूनों का भी समावेश होता तो अच्छा होता। आधुनिक समय में जब भी दूरसंचार की बात होती है तब प्रायः कन्वर्जेंस की आवश्यक रूप से चर्चा होती है अर्थात सूचना, संचार एवं मनोरंजन को एक के अधीन समेकित करने की युक्ति या सुविधा मुहैया करने की बात होती है। इसमें सूचना प्रौद्योगिकी से जुड़े प्रायः सभी क्षेत्र आ जाते हैं। इसी उद्देश्य से भारत में वर्ष 2001 में कन्वर्जेंस विधेयक लाया गया था। संक्षेप में, यह अंक दूरसंचार में आए बदलाव तथा विकास का प्रतिबिंब लगा।

प्रवीण कुमार शर्मा
किशनगंज, बिहार
ई-मेल : prabinkr.@gmail.com

ज़रूरत प्रतिभाओं को तराशने की

योजना का नवंबर'10 अंक पढ़ा। अन्य अंकों की तरह इस बार भी बहुत-सी जानकारियां हासिल हुईं। खासकर पार्थिव कुमार का राष्ट्रमंडल खेल पर आलेख अच्छा लगा।

वास्तव में हिंदुस्तान में प्रतिभाओं की कोई कमी नहीं है, ज़रूरत है तो सिर्फ़ उन्हें तराशने की। विपरीत परिस्थितियों में भी हिंदुस्तान के शेरों ने दिखा दिया कि उनका शौर्य अभी ख़त्म नहीं हुआ है। अगर हमारे देश में भ्रष्टाचार का अंत हो जाए और योग्यता के आधार पर प्रतिभाओं को आगे आने के अवसर सुलभ हों तो हम राष्ट्रमंडल या एशियाई ही नहीं बल्कि ओलंपिक के हीरो बन सकते हैं।

दिलावर हुसैन कादरी
मेहराबाद, जैसलमेर, राजस्थान

जानकारीपूर्ण अंक

दूरसंचार क्रांति को समर्पित नवंबर अंक अच्छा लगा। 'विनियमन, चुनौतियां और भविष्य' शीर्षक जे.एस. सरमा का लेख अच्छा लगा। 'ई-प्रशासन से बदलता ग्रामीण रहन-सहन' शीर्षक लेख दूरसंचार की विविध योजनाओं तथा सेवाओं के बारे में जानकारी देता है। 'विकासपरक संचार की नयी परिभाषा' शीर्षक रचना शर्मा का लेख टेलीफोन क्रांति का उद्देश्य तथा तकनीक के ग्रामीण और शहरी जीवन पर प्रभावों के बारे में बताता है।

राहुल पाडवी
नंदुरबार, महाराष्ट्र
ई-मेल : rahul.padvi9@googlemail.com

नयी तकनीक का नया प्रयोग

योजना का नवंबर अंक प्रेरक व उत्साहवर्धक लगा। संपादकीय में नागरिकों के पहचानपत्र आधार तथा इसके द्वारा श्रमिक की पारिश्रमिक राशि का भुगतान बैंक खाते में जमा करने और प्रौद्योगिकी सूचना क्रांति के द्वारा साधारण से साधारण व्यक्ति को मूलभूत सुविधाओं की विशेष उपलब्धि हासिल होना सराहनीय योजना है। हक़ीक़त में देखा जाए तो प्रधानमंत्री के द्वारा ग्रामीण और शहरी क्षेत्र के व्यक्तियों के लिए जो योजनाएं क्रियान्वित की जाती हैं, उनका प्रारूप

योजना आयोग के आर्थिक विकास रूपी कंधों पर निर्भर होता है। दूरसंचार विभाग ने नयी प्रकार की तकनीक में नये-नये प्रकार के प्रयोगों द्वारा किसानों, मज़दूरों तथा अन्य श्रमिक महिलाओं के लिए मोबाइल उपलब्ध करा करके प्रशंसनीय कार्य किया है।

जसवंत सिंह जनमेजय
कटवारियासराय, दिल्ली

और सुधार की ज़रूरत

नवंबर 2010 की *योजना* पढ़ा, जोकि 'भारत में दूरसंचार नेटवर्क' विषय पर केंद्रित है। अंक बहुत पसंद आया। इस अंक में आपने काफी सारी जानकारियां दूरसंचार के क्षेत्र में दी, जोकि काफी अच्छी है। आज दूरसंचार सेवा का विस्तार इतना हो गया है कि घर-घर में फोन उपलब्ध हो गया है। एक समय था, जब टेलीफोन चंद घरों में या फिर कार्यालयों में ही हुआ करते थे। पर दूरसंचार के क्षेत्र में तेज़ी से आई क्रांति के बाद तो अब ज्यादातर लोगों को सुलभ हैं। मोबाइल फोन के आने से तो सारा परिदृश्य ही बदल गया है। पहले जहां लैंडलाइन से एक निश्चित स्थान से ही बात होती थी, मोबाइल फोन आने के पश्चात् तो हम चाहे कहीं भी हों, झट अपने परिचितों व मित्रों से बात कर सकते हैं। आरंभ में जहां मोबाइल की एक कॉल 10 रुपये की हुआ करती थी तथा सुनने के भी पैसे कटते थे अब वहीं प्रतिस्पर्धा और सरकार की नीतियों के चलते एक कॉल चंद पैसों में हो जाती है। मुझे अच्छी तरह याद है कि पहले जब किसी को एसटीडी फोन करना होता था, तो दूर-दूर से टेलीफोन कार्यालय आया करते थे फोन करने के लिए। आज घर-घर में फोन हो गए हैं। हमारे पास ही पीसीओ, इंटरनेट हो गए हैं जिसके द्वारा मिनटों में हम अपना संदेश अपने परिचितों व मित्रों तक पहुंचा देते हैं। यह सब दूरसंचार के क्षेत्र में आई क्रांति का ही नतीज़ा है। सरकार द्वारा दूरसंचार के क्षेत्र में निजी कंपनियों को लाइसेंस दिए गए, जिससे आज टेलीफोन के क्षेत्र में कई निजी कंपनियां कार्य कर रही हैं। साथ ही सरकारी सेवा का भी निगमीकरण करके भारत संचार निगम लि., विदेश संचार निगम व महानगर दूरसंचार निगम लिमिटेड बनाए गए। बीएसएनएल आज देश की सबसे बड़ी टेलीफोन कंपनी है।

आज बीएसएनएल समेत देश की अन्य निजी कंपनियां उत्तराखंड के सभी जिलों में अपनी सेवाएं दे रही हैं। पर इन सभी कंपनियों को उत्तराखंड में अपनी नेटवर्क सघनता बढ़ाना चाहिए ताकि जो निचले इलाक़े हैं, उनमें भी सिगनल ठीक काम करे। मौजूदा स्थिति यह है कि किसी एक स्थान पर कहीं तो किसी एक कंपनी का नेटवर्क अच्छा आता है। जबकि किसी दूसरे स्थान पर किसी अन्य कंपनी का नेटवर्क सही आता है, जिससे ग्राहकों को खासी परेशानी होती है। कुल मिलाकर पहाड़ों पर मोबाइल फोन नेटवर्क को और ज्यादा सुधार की ज़रूरत है।

इस अंक में 'दुधारी तलवार या दूरसंचार', 'ग्रामीण तंत्र का विस्तार', 'दूरसंचार सेवाओं की स्थिति रिपोर्ट', 'किसानों को दूरसंचार का उपहार', 'ई-प्रशासन से बदलता ग्रामीण रहन-सहन', 'घाटी में अवैद्ध खनन' व 'मिट्टीकूल रेफ्रिजरेटर और मिट्टी का नॉन स्टिक तवा' शीर्षक लेख काफी पसंद आए। दूरसंचार और चिकित्सा शीर्षक लेख तो सबसे ज्यादा अच्छा लगा।

महेंद्र प्रताप सिंह
मेहरागांव, जिला-अल्मोड़ा, उत्तराखंड

योजना
आगामी अंक

फरवरी 2011

इस अंक का फोकस ग्राम सभा पर होगा और *योजना* आपको ग्रामीण भारत के बदलते चेहरे से रू-ब-रू कराएगी।

मार्च 2011 विशेषांक

यह विशेषांक विगत वर्षों की भांति **आम बजट** पर केंद्रित होगा।

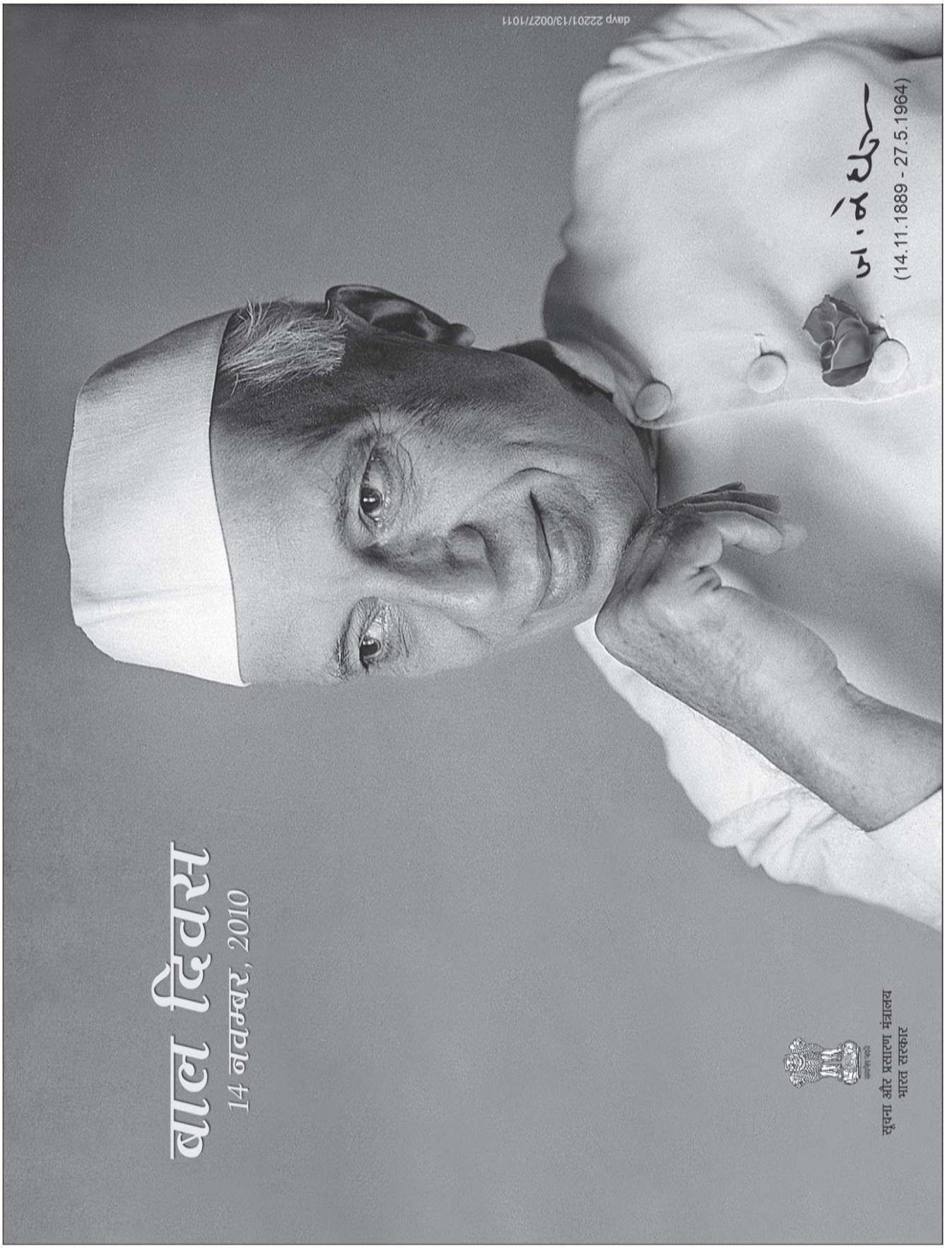
बाल दिवस
14 नवम्बर, 2010
सत्यमेव जयते
सेवा में
भारत सरकार
सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय
पुणे-411001
(14.11.1889 - 27.5.1964)
davp 22201/13/0027/1011

YH-1/11/2

संपादकीय

बीते दशक के दौरान भारतीय उद्योग जहां लगातार उत्साहवर्धक वृद्धि कर रहे थे, भारतीय कृषि की स्थिति यथावत बनी रही। हर आने वाली सरकार ने अनेक उपाय किए किंतु परिणाम संतोषजनक नहीं रहे। यह आश्चर्यजनक इसलिए भी कहा जाएगा क्योंकि वर्ष 2008 को छोड़कर इस पूरी अवधि में मानसून लगातार अनुकूल बना रहा और यह दशक नियमित वर्षा वाली कुछ लंबी अवधियों में शुमार किए जाने लायक दशक बना। इस अनुकूल आरंभिक स्थिति के बावजूद कृषि क्षेत्र की विकासदर अल्प बनी रही। इस कृषि कथा में खेल बिगाड़ने वाली एक चीज़ तो सार्वजनिक निवेश का स्थिर बने रहना ही रही। सरकार पर अपने संसाधनों को अनेक प्रतिस्पर्धी मांगों के बीच विवेकसम्मत रूप से आवंटित करने का दबाव होता है। इसलिए जब यह महसूस किया गया कि सिंचाई तथा अन्य मदों पर सार्वजनिक निवेश के त्वरित परिणाम नहीं हासिल होते, तो धन का आवंटन अन्य क्षेत्रों में किया जाने लगा।

लेकिन वैश्विक मंदी के उपरांत अब जानकारों की सर्वसम्मत राय यह बनी है कि मंदी के वर्षों में भारतीय उद्योग को स्थिरता प्रदान करने वाली ताक़त ग्रामीण भारत की उपभोक्ता वस्तुओं की मांग रही है। गांवों की उपभोक्ता वस्तुओं की मांग को त्वरा कृषि उत्पादकता में बढ़ोतरी से ही हासिल हो सकती है। उत्पादकता में वृद्धि तभी हो सकती है जब कृषि कर्म से जुड़े सभी चरणों में समुचित निवेश किया जाए। आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि इन निवेशों के लिए दबाव लंबे समय तक खाद्य उत्पादों की क़ीमतों में बढ़ोतरी के बाद बना है। खाद्य पदार्थों से जुड़ी मुद्रास्फीति अब जाकर कम होना शुरू हुई है। इस तरह हालिया समय में ऐसी खुशकिस्मत स्थिति बनी है जो भारतीय कृषि की गुणवत्ता में भारी सुधार कर सकती है और इस प्रकार समूचे देश को लाभान्वित कर सकती है। इस सुधार के अंगों से सभी अवगत हैं। वे हैं– बीज प्रौद्योगिकी, फ़सल कटाई के बाद की क्रियाओं का समुचित प्रबंधन, जिसमें गोदामों में उत्पादों का संरक्षण और कृषि उत्पादों का विपणन शामिल है।

इसलिए, बावजूद इसके कि यह बात बार-बार दोहराई जा चुकी है कृषि क्षेत्र में क्रांति का समय अब आ गया है। इसका एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण अवयव संभवतः दूसरी हरित क्रांति की योजना होगी। सरकार पहले ही यह संकेत दे चुकी है कि वह दक्षिण के सूखाग्रस्त इलाकों और पूर्वी भारत के उर्वर किंतु अल्प प्रयुक्त खेतों से इसकी शुरुआत करना चाहती है। देशभर में यह बहस पहले से चल रही है कि उत्पादकता में ऐसी वृद्धि के लिए क्या अनिवार्य रूप से जैविक रूप से परिवर्द्धित फ़सलों की ओर उन्मुख होना भी ज़रूरी है? तेज़ी से बढ़ रही जनसंख्या को भोजन उपलब्ध कराने हेतु समुचित खाद्यान्नों की पूर्ति आसन्न ज़रूरत है। इसलिए जैसा सरकार ने संकेत दिया है, सावधानी से निर्णय किए जाने की ज़रूरत है। इससे संबद्ध विषयों में खेत से बाज़ार तक कृषि उत्पादों के परिवहन के लिए ज़रूरी बुनियादी ढांचे की व्यवस्था सर्वप्रमुख है। अधिकांश राज्यों में सड़कों की दशा दयनीय है और उनको लाने-ले जाने वाले वाहनों की संख्या और कम है। इस संदर्भ में, देशभर में प्रशीतित ट्रकों और शीतगृहों की शृंखला कायम करना आज न केवल निवेश की भारी संभावना पैदा करता है, बल्कि यह समय की मांग भी है। गोदाम रसीद के व्यापार और कृषि उत्पादों को राज्य की सीमा से बाहर ले जाने की अनुमति देने के लिए सरकार को कृषि उत्पाद विपणन कानून में परिवर्तन करना होगा।

यह सूची काफी लंबी है। ज़रूरत इस बात की है कि अविलंब शुरुआत की जाए। ❑

ग्रामीण-शहरी संबंधों की निरंतरता की चुनौतियां

● योगिन्दर के अलघ

हमें इस तथ्य के लिए काम करना होगा कि अगले दशक में भारतीय कृषि खाद्य सुरक्षा की आवश्यकताओं को पूरा करने में समर्थ होगा और उसमें तेज़ी से विविधता आएगी। यह ग्राम-शहर संबंध की निरंतरता को बनाए रखने के लिए काम करेगी

भारतीय कृषि को ग्रामीण-शहरी संबंधों की निरंतरता और उसमें नज़र आने वाले अवसरों के रूप में देखा जाना चाहिए। पिछले कुछ समय से हम यह तर्क़ देते रहे हैं कि शहरीकरण और श्रमबल में संरचनात्मक परिवर्तन पहले की अपेक्षा कहीं अधिक तेज़ी से हो रहे हैं। श्रम ब्यूरो ने हाल ही में इस पर अपने तर्क़ दिए हैं और इससे हमारे विचारों को बल मिलता है।

मांग

कृषि मांग की दीर्घकालीन प्रवृत्ति निवारण और वृद्धि की है। गैर-खाद्यान्न कृषि उत्पादों की मांग, अनाज और अन्य फ़सल आधारित कृषि उपज की मांग से अधिक तेज़ी से बढ़ रही है। पशुपालन जैसे क्षेत्रों में और अधिक तेज़ी से मांग उठी है। फ़सलों की मांग के तहत भी वृक्षों वाली फ़सल की मांग में और तेज़ी से वृद्धि हो रही है। वर्ष 2004-05 से वर्ष 2007-08 की अवधि में कृषि अर्थव्यवस्था में जो सुधार आता दिखा है उसमें यह प्रवृत्ति और अधिक स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। इस छोटी-सी अवधि में विकास दरों में संख्यात्मक सटीकता की कोई आवश्यकता नहीं है। अंतर्निहित प्रवृत्तियों को अर्थव्यवस्था और शहरीकरण में हो रहे विकास से वेग मिलता है क्योंकि मांग के पैमाने शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में अलग-अलग होते हैं। दोनों क्षेत्रों में आय का वितरण भी अलग तरीक़े से होता है, क्योंकि संपन्न वर्ग की उपभोग की आदतें निर्धनों की आदतों से भिन्न होती हैं। जनसंख्या में वृद्धि भी एक महत्वपूर्ण कारक है। अब हम इन कारकों के बारे में चर्चा करेंगे।

किसी वस्तु की मांग के स्तर को प्रभावित करने वाले प्रमुख तत्व इस प्रकार हैं :

- जनसंख्या : इसका आकार, आयु के अनुसार वितरण, शहरी/ग्रामीण लोगों का मिश्रण आदि।
- आय और इसका वितरण।
- अन्य वस्तुओं और सेवाओं का मूल्य और उनकी उपलब्धता।
- संसद और प्राथमिकताएं।

इन कारकों को प्राय: मांग के निर्धारक तत्व भी कहा जाता है (टोमेक और टॉबिन्सन, 1972, पृ. 14)

तालिका-1

संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या पूर्वानुमान

वर्ष	जनसंख्या (दस लाख)
2000	1012.66
2005	1087.46
2010	1152.16
2015	1211.67
2020	1271.17

स्रोत : एफएओ, 2003, 2008; एन अलेक्जेंड्राटॉस, 1995 भी देखें

जनसंख्या

इस अध्ययन के लिए यूएनयू/आईएएस द्वारा दिए गए संयुक्त राष्ट्र के आंकड़ों का उपयोग किया गया है (तालिका-1)। इनका उपयोग खाद्य एवं कृषि संगठन (एफएओ) ने वर्ष 2008 में भारत में खाद्य मांग संबंधी अपने ताज़ा अनुमानों में किया है, जिनमें अनुमान लगाया गया है कि वर्ष 2000 में एक अरब की जनसंख्या वर्ष 2005 तक बढ़कर एक अरब 20 करोड़ हो जाएगी।

इन आंकड़ों की तुलना में, एफएओ के कुछ हालिया प्रकाशनों में कुछ ऊंचे अनुमानों का इस्तेमाल किया गया है। निम्नलिखित आकलनों से यह स्पष्ट हो जाता है :

एफएओ जनसंख्या पुर्वानुमान

वर्ष	जनसंख्या (जनसंख्या अरब में)
2000	11.0
2015	1.2
2030	1.4

स्रोत : एफएओ 2006, एफएओ 2008, पृ. 24 पर उल्लिखित

ग्यारहवीं योजना की जनसंख्या इन प्रवृत्तियों के काफी निकट है। योजना में जनसंख्या का अलग से कोई अध्ययन नहीं किया गया है, परंतु

तालिका-2

भारत में कृषि उत्पादों हेतु आय का लचीलापन संरचना और परिवर्तन

क्र.	जिन्स	एंजेल कर्व विशिष्टता[1]	'70 के दशक हेतु अनुमान		'90 के दशक हेतु अनुमान[2]	
0	1	2	3		4	
			क. शहरी	ख. ग्रामीण	क. शहरी	ख. ग्रामीण
1	धान		0.18	088		
2	गेहूं	3बी. सेमी लॉग	0.15	1.82		
3	ज्वार	3बी. समी लॉग	_0.97	0.15		
4	बाजरा	3बी. सेमी लॉग	_1.26	0.92		
5	अन्य अनाज	3बी. सेमी लॉग	_0.14	0.01	0.14	0.46[3]
6	दालें	3ए. सेमी लॉग 3 बी लिनियर	1.48	0.06	0.33	1.40
7.	सब्ज़ियां	3बी. सेमी लीनियर	0.79	0.05		
8.	फल		1.62	1.21	0.88	1.04[4]
9.	मसाले	3ए. लीनियर	0.40	0.79		
10.	दूध/दुग्ध उत्पादन	3ए. लीनियर	0.10	3.06	0.97	2.36
11.	मांस और अंडे	3ए. लीनियर	0.02	1.55	0.69	1.39
12.	चीनी	3ए. लीनियर	0.79	2.07	0.73	1.47
13.	गुड़	3ए. सेमी लॉग	0.17	1.80		
14.	वनस्पति	3ए. सेमी लॉग			1.03	नेग
15.	खाद्य तेल		0.70	1.33	0.64	1.13
16.	चाय	3ए. लीनियर	0.03	1.37		
17.	कॉफी	3ए. लीनियर	1.55	1.74		

नोट : 1. जहां अन्यथा स्पष्ट नहीं किया गया है कि ये अनुमान दोहरे लॉग कार्यों के लचीलेपन (घट-बढ़) को दर्शाते हैं। अन्य मामलों में ये अनुमान विशिष्ट कार्यों के ढलवा गुणांक हैं।
2. ये अनुमान संपूर्ण मांग प्रणालियों से लिए गए हैं। ग्रामीण ग़रीब की श्रेणी 'साधारण रूप से ग़रीब' और 'शहरी गैर-ग़रीब' की है। इसी प्रकार गैर-ग़रीब श्रेणी में भी है।
3. सभी प्रकार के अनाजों के बारे में है।
4. फलों और सब्जियों के बारे में है।

स्रोत : *मनीष अलघ, 2006, पृ. 59 (सत्तर के दशक के अनुमान 1973-74 के 28वें चक्र के राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण (एनएसएस) के मासिक पारिवारिक उपभोग आंकड़ों से लिए गए हैं। देखें भारत सरकार पीबीडी, योजना आयोग, 1979। नब्बे के दशक के आंकड़े सी. रवि, 2001 से उद्धृत हैं)*

इसके एक खंड में जो संख्या दी गई है वह इस प्रकार है:

वर्ष	जनसंख्या
2011-12	1 अरब 20 करोड़ 30 लाख
2016-17	1 अरब 28 करोड़ 30 लाख

स्रोत : *जीओआई 2008, ग्यारहवीं योजना, अंक 1, पृ. 75*

मांग व्यवहार

तालिका-2 में 70 के दशक में भारत में शहरी अमीरों और ग्रामीण ग़रीबों का अनुमान लगाया गया है और नब्बे के दशक हेतु संपूर्ण मांग प्रणालियों से आय (व्यय) के लोच (घट-बढ़) का अनुमान लगाया गया है।

आय वृद्धि

अनुमान लगाया गया है कि भारत 6 से 8 प्रतिशत की वार्षिक दर से विकास करेगा और इस अवधि में विश्व की तीसरी या पांचवीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बन जाएगा। हाल के अनुभव को ध्यान में रखते हुए जिन संशोधनों के बाद ये अनुमान लगाए गए हैं उन पर आधारित प्रदर्श के लिए देखें वी.पी. पंडित, 2004 और वाई.के. अलग, 2000। निवेश दर और उत्पादकता में वृद्धि ही इसके वाहक होंगे। मिसाल के तौर पर वर्ष 1997-2003 में भारत के सकल घरेलू उत्पाद की एक-तिहाई वृद्धि प्रौद्योगिकी के दम पर हो रही थी। लेकिन इसके साथ-साथ व्यापार का महत्व भी बना रहेगा और भारत का व्यापार विश्व व्यापार के 4 प्रतिशत के लगभग रहेगा।

इसके वाहक होंगे निवेश, प्रौद्योगिकी और उत्पादकता; ज्ञान, व्यापार और प्रतिस्पर्धा।

उत्पादकता में वृद्धि के विश्लेषण का परिदृश्य इस बात की ओर संकेत करता है कि तथाकथित परिदृश्य 'सी' में दर्शाए

तालिका-3

भारत में उत्पादन वृद्धि, उत्पादन के कारक और टीएफपी : 1970-2020

अवधि	जीडीपी	पूंजी	श्रम	टीएफपी (प्रतिशत)
1970-80	2.60	3.59	1.98	0.49
1970-90	5.67	4.41	1.13	4.21
1990-00	5.73	5.97	1.82	3.68
2000-10	7.54	4.97	2.69	4.62
2010-20	9.24	4.04	3.49	5.69

स्रोत : *वाई. के. अलघ, यूएफयू, 2000 और वाई. के.अलघ, 2006ए*

गए 8 से 9 प्रतिशत की उच्च विकास दर वाली अर्थव्यवस्था को बनाए रखने के लिए टीएफपी में 5 प्रतिशत या अधिक की दर से वृद्धि होनी चाहिए। व्यापार और प्रतिस्पर्धा में इससे लाभ होगा। कुछ अनुमानों के अनुसार विश्व व्यापार के क़रीब 4 प्रतिशत अंश की आवश्यकता होगी। मितव्ययिता के लिए आवश्यक है कि निवेश दरों में वृद्धि हो। यदि सकारात्मक नतीज़े प्राप्त करने हैं तो इन आर्थिक पूर्व शर्तों को पूरा करना होगा (देखें डी. नाचाने, 2006)।

तालिका-4

मांग का पूर्वानुमान

खाद्य समूह	1999-2001	2015	2030 (करोड़ में)
अनाज	15.9	19.9	22.5 (13.1 प्रतिशत)
आलू आदि	2.5	3.7	4.6 (24.3 प्रतिशत)
फल एवं सब्जियां	10.8	16.0	20.8 (30.0 प्रतिशत)
खाद्य तेल	1.1	19.9	22.5 (13.1 प्रतिशत)
चीनी	2.9	19.9	22.5 (13.1 प्रतिशत)
अंडे	.2	19.9	22.5 (13.1 प्रतिशत)
मुर्गी का मांस	.1	19.9	22.5 (13.1 प्रतिशत)
दूध	6.6	19.9	22.5 (13.1 प्रतिशत)
बीफ, मटन एवं पोर्क	.4	.5	.7

कोष्ठक में दिए गए आंकड़े 2030/2020 × 100 हैं।

स्रोत : *वाई. के. अलघ, यूएफयू, 2000 और वाई. के.अलघ, 2006ए*

मांग

ये अनुमान उपर्युक्त तालिका-2 में दर्शाए गए एन्जेल कर्व के सर्वोत्तम फिटिंग का उपयोग करते हुए तैयार किए गए हैं। ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के लिए अलग-अलग आकलन किया गया है। जनसंख्या के पूर्वानुमानों और व्यावहारिक आकलन के आधार पर मानव उपभोग हेतु आवश्यकताओं की गणना की गई है। इनमें, बीज, आहार और अपव्यय को जोड़कर कुल मांग की गणना की गई है। ये पूर्वानुमान तालिका-4 में दर्शाए गए हैं।

2020 और 2030 के बीच अनाज की मांग में वृद्धि पिछले दशक से 13 प्रतिशत अधिक है। इसके दूसरी ओर फल एवं सब्जियों, अंडे, चिकन और दूध की मांग में वृद्धि काफी अधिक है। दशक की वृद्धि पर आलू के लिए 40 प्रतिशत, अंडों के लिए 200 प्रतिशत और मुर्गी के मांस के लिए 250 प्रतिशत अधिक रही। बीफ, मटन और पोर्क (सुअर मांस) की मांग में बढ़ोतरी हुई है, परंतु धार्मिक कारणों से आंकड़ों में कमी दिख रही है। अनाज की मांग में कमी की भरपाई गैर अन्न आधारित और गैर फ़सली कृषि सामग्री की मांग में वृद्धि से हो रही है।

ग्रामीण-शहरी परिप्रेक्ष्य

एक महत्वपूर्ण अद्र्धसत्य यह है कि भारत में शहरीकरण की प्रक्रिया कम है और यह तेज़ी से नहीं बढ़ रही है। परंतु यहां पर यह ध्यान रखना होगा कि भारत में शहरीकरण की प्रक्रिया विकेंद्रित है। बहुत छोटी शहरी बस्तियों का विकास नहीं हो पा रहा है, परंतु अपेक्षाकृत छोटे श्रेणी, कस्बों (1,00,000 की आबादी वाले) की हिस्सेदारी अच्छी-खासी है। अंतरराष्ट्रीय व्यापार पर अपने कार्य के लिए नोबल पुरस्कार से सम्मानित पी. क्रुगमैन ने शहरीकरण और क्षेत्रीय विकास पद्धतियों का भी अध्ययन किया है। उन्होंने शहरीकरण की व्याख्या करते हुए इसे केंद्रविमुखी और केंद्राभिमुखी, दोनों का परिणाम बताया है। शहरी विकास दर में 1980 के दशक में जहां 3.8 से लेकर 3.12 प्रतिशत तक गिरावाट आई, वहीं श्रेणी-1 के शहरों की विकास दर 6.39 प्रतिशत से बढ़कर 8.39 प्रतिशत हो गई। भविष्य के अपने अध्ययनों में हमने अनुमान लगाया है कि यह प्रवृत्ति आगे भी जारी रहेगी। (वाई. के. अलघ, यूएनयू, 2000, 2006)। दूसरे शब्दों में 1980 के दशक के बाद से श्रेणी-1 के शहरों का जो विकास शुरू हुआ है वह आगे भी जारी रहेगा। यही वह समय है जब से भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास में तेज़ी आई।

यह विश्वास करने का कोई कारण नहीं है कि न्यूनतम आकार (1,00,000 जनसंख्या) वाली शहरी बस्तियों का लचीलापन प्रतिव्यक्ति आय के संदर्भ में सिकुड़ जाएगा। क्रुगमैन ने इस लचीलेपन को 'बी' का नाम दिया है। दरअसल, यह भविष्य में इस प्रकार के शहरों के विकास को निर्धारित करेगा, परंतु छोटे शहरों की जनसंख्या का अंश सिकुड़ जाएगा। इस विशेषता को प्रतिमान बनाया गया है (अलघ, तदैव, यूएनयू, 2000)।

इस प्रतिमान में निम्नलिखित धारणाओं का उपयोग किया गया है :

- श्रेणी-1 शहरों का विकास उसी तरह होगा जैसा पिछली सदी के अस्सी के दशक में हुआ था।
- श्रेणी-1 शहरों में शहरी जनसंख्या के हिस्से में वृद्धि उसी प्रकार की होगी, जैसी अस्सी के दशक में हुई थी।

पहली धारणा अनुमानित शहरी विकास में वृद्धि करेगी तो दूसरी धारणा उसको रोक देगी। छोटे शहरों का विकास नहीं हो सकेगा और बड़े शहरों के आसपास के क्षेत्र उसी में विलीन हो जाएंगे। यहां यह गौरतलब है कि नब्बे के दशक के आंकड़ों का उपयोग नहीं किया जा सकता, क्योंकि उनमें इन प्रवृत्तियों का कम अनुभाग लगाया गया है, जिनको नीचे स्पष्ट किया गया है। दस लाख से अधिक जनसंख्या वाले शहरों के क्षेत्र एक लाख और उससे अधिक की आबादी वाली बस्तियों के रूप में विकसित होंगे। इस प्रतिमान का समीकरण निम्न प्रकार से व्यक्त किया जा सकता है:

1. $यू_{1टी}$ = ए (वाईटी)बी
2. $यू_{पीटी}$ = $यू_{टी}$/के + $यू_{10}$

यहां

$यू_1$ = श्रेणी/कस्बों में जनसंख्या

$यू_{पी}$ = शहरी जनसंख्या

वाई = स्थिर मूल्यों में प्रतिव्यक्ति आय

$यू_1$ = शहरी जनसंख्या में श्रेणी-1 कस्बों में जनसंख्या का अंश

के = स्थिरांक $यू_{1टी}$ – $यू_{10}$, और

बी = जनसंख्या में श्रेणी-1 कस्बों में जनसंख्या का अंश आय के संदर्भ में

शहरी जनसंख्या का पूर्वानुमान अब निम्न प्रकार से लगाया जाएगा :

3. $यू_{पीटी}$ = ए$(वाई_{टी})^{बी}$/के + $यू_{10}$

यदि यह मान लिया जाए कि प्रतिव्यक्ति आय में प्रतिवर्ष 6.6 प्रतिशत वृद्धि हो रही है तो श्रेणी-1 शहरों की विकास दर वर्ष 1991 से

2020 की अवधि के लिए 4 प्रतिशत होगी क्योंकि बी 0.6 है। शहरी जनसंख्या का अंश वर्ष 2020 में 42 प्रतिशत हो जाएगा जबकि सरकारी आंकड़ों में इसे 32 प्रतिशत बताया गया है। (देखें भारत सरकार, तकनीकी समूह, 2006)।

इस प्रतिमान में शहरी जनसंख्या का विकास प्रतिव्यक्ति आय में वृद्धि के अनुसार घनात्मक रूप से होता है जबकि अंश की चर संख्या के अनुपात में ऋणात्मक रूप से। शहरी निराशावादी मेरे मित्र स्व. पी. बिसारिया का कहना था कि बड़े शहरों की ओर पलायन में बाधा छोटे-छोटे समुदायों में रहने वाले श्रमिकों की ओर से आती है जो काम के लिए प्रतिदिन आवागमन करते हैं। हमने भविष्य के अपने अध्ययन में यह तर्क रखा था कि यह प्रतिमान महानगरों के आसपास बसने वाली बस्तियों के समूहों में होने वाले शहरीकरण की पद्धति जैसी है। जैसाकि 1980 के दशक में अनुमान लगाया था कि प्रतिव्यक्ति आय में प्रतिवर्ष लगभग 4 प्रतिशत की वृद्धि होने के हिसाब से वर्ष 2020 तक शहरी जनसंख्या के बढ़कर 53 करोड़ पहुंच जाने का अनुमान है। यहां हमारा मुख्य उद्देश्य यह बताना है कि नीति को ग्रामीण और गैर-कृषि उत्पादन और रोज़गार पर ही केंद्रित नहीं होना चाहिए। वास्तव में भारत जैसी गतिशील अर्थव्यवस्था में गांव और छोटी शहरी बस्तियों के बीच का अंतर उलटा असर डाल सकता है और इससे तमाम तरह की संरक्षणवादी विकृतियां जन्म ले सकती हैं। अधिक लाभप्रद सोच यह होगी कि एक ऐसी नीति तैयार की जाए जो विविध प्रकार के कृषि कार्यों में जुटे आधार केंद्रों और विकास केंद्रों के आसपास पनप रही समृद्धि के चारों ओर विकास पर ध्यान केंद्रित करे। ऊपर जो संख्यात्मक ढांचा सुझाया गया है वह दर्शाता है कि भारत में इस प्रकार की पर्याप्त संभावनाएं हैं और उन्हें वास्तव में क्रियान्वित किया जा सकता है।

परिवहन, भूमि-उपयोग, विपणन-संरचना और प्रौद्योगिकी प्रकीर्णन नीतियां– सभी को इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए उन्मुख किया जा सकता है। वास्तव में यह अधिक टिकाऊ होगा। श्रेणी-1 के छोटे कस्बों में दस लाख से अधिक जनसंख्या वाले शहरों की अपेक्षा मलिन बस्तियों के वासियों की संख्या 20 से 40 प्रतिशत कम होती है। इन बस्तियों का विस्तृत ब्यौरा वर्ष 2020 के लिए यूएनयू संपोषणीय विकास अध्ययन में दिया गया है। (वाई.के. अलघ, 2000, 2006)

संयुक्त राष्ट्र के हाल के अध्ययनों ने अंतरराष्ट्रीय तुलनाओं के जरिये यह बात साबित कर दी है कि

भारत जितना बताता है उससे कही अधिक शहरी हो चुका है। इसकी गैर-कृषि रोज़गार की स्थिति की तुलना वैश्विक स्थिति से की जा सकती है। खाद्य एवं कृषि संगठन (एफएओ) ने वैश्विक तुलना और विश्लेषण में इसे स्पष्ट कर दिया है। एफएओ और विश्व बैंक ने तीन प्रकार के देशों का वर्गीकरण किया है : कृषि आधारित, परिवर्तनकारी और शहरी। कृषि आधारित देश से परे जाते हुए, भारत को परिवर्तनकारी देश की श्रेणी में रखा गया है (एफएओ, 2008, पृ. 4)।

एफएओ ने इस बात पर गौर किया है कि लोकप्रिय आंकड़ों के अनुसार भारत का शहरीकरण कम हुआ है, परंतु उनका कथन है कि :

"इसके दूसरी ओर, जिसे ग्रामीण कहा जाता है वह दसअसल, एक प्रकार से व्यक्तिगत धारणा है और जिसे शहरी अथवा ग्रामीण माना जाता है। अलग-अलग देशों में उनके अलग-अलग कारण होते हैं। ब्राजीलियाई परिभाषा, जिस पर राजनीतिक विवाद बना हुआ है, अंशतः प्रशासनिक विभाजनों पर आधारित है और उसमें ग्रामीण जनसंख्या 19 प्रतिशत दर्शाई गई है। दूसरी ओर ओईसीडी ने प्रतिवर्ग किमी. क्षेत्र में 150 लोगों की जनसंख्या घनत्व के सरल पैमाने का इस्तेमाल किया है। इस

रेखाचित्र : विकेंद्रीकृत बाज़ार

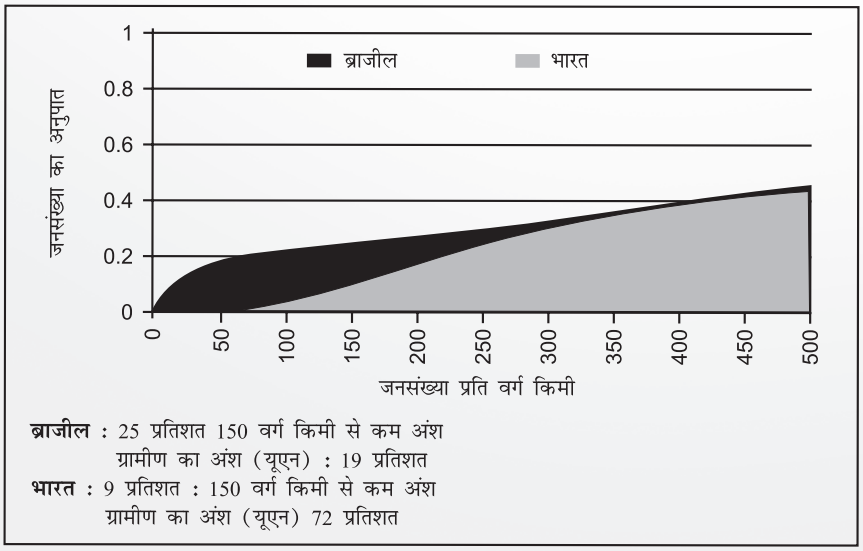

स्रोत : *सेंटर फार इंटरनेशनल अर्थ साइंस इन्फर्मेशन (2004)*

हिसाब से तो ब्राजील ग्रामीण जनसंख्या कुल 25 प्रतिशत ही रह जाती है। यदि यह मापदंड हम भारत पर लागू करें, जहां बहुत थोड़े अनुपात में ही लोग इस घनत्व से कम वाले क्षेत्रों में रहते हैं तो भारत की ग्रामीण जनसंख्या कुल 9 प्रतिशत के क़रीब ठहरती है जोकि 70 प्रतिशत की ग्रामीण जनसंख्या वाले भारत के सामान्य दृष्टिकोण से सर्वथा विपरीत है। हालांकि, जैसा हमने देखा है ब्राज़ील कहीं अधिक शहरी जनसंख्या वाला देश है। वहां की 20 प्रतिशत जनसंख्या उन क्षेत्रों में निवास करती है जिनका जनसंख्या घनत्व प्रतिवर्ग किमी. 50 से भी कम है। भारत में मुश्किल से एक प्रतिशत लोग ऐसे इलाकों में रहते हैं" (एफएओ, 2008, पृ. 5)।

विद्वानों के पूर्व के अनुमानों की तुलना में शहरीकरण अधिक तेज़ी से हो रहा है। कुन्डू ने 1991, 2001 की अवधि की जनगणना के दौरान शहरीकरण की निम्न विकास दर पर काम किया था। उदाहरण के तौर पर योगिन्दर के अलघ और पी.एच. ठक्कर ने गुजरात के बारे में जो अध्ययन किया उससे पता चला कि अनेक ऐसी बस्तियां थीं जो 2001 की जनगणना में शहरीकरण की निर्धारित कसौटी के हिसाब से गांवों की श्रेणी में आती थीं। जनगणना-2001 के अनुसार 'जनगणना शहर (सेन्सस टाउन्स) कानूनी परिभाषा वाले शहर नहीं हैं और वे वास्तव में ग्रामीण क्षेत्र हैं, परंतु निम्नलिखित मापदंडों को पूरा करते हैं :

तालिका-5

गुजरात में शहरीकरण का स्तर और विकास

वर्ष	शहरों की संख्या	जनसंख्या (10 लाख में)		शहरीकरण (प्रतिशत में)
		संपूर्ण राज्य	शहरी क्षेत्र	
1	2	3	4	5
1961	181	20.63	5.32	25.77
1971	216	26.70	7.50	28.08
1981	255	34.09	10.60	31.10
1991	264	41.30	14.25	34.49
2001	242	50.67	18.93	37.36
2001 संशोधित	364	39.46	30.14	39.57

***स्रोत :** योगिन्दर के अलघ और पी.एच. ठक्कर, 2006 ए*

विकेंद्रीकृत बाज़ार

रेखाचित्र से इसे दर्शाया गया है। एफएओ आगे कहता है कि यह विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। इस पर विस्तृत चर्चा नीचे की गई है। यदि इस परिभाषा के संदर्भ में देखें कि 5,000 से अधिक की आबादी वाले बाज़ार के शहर तक पहुंचने के लिए पांच घंटे का समय लगता है तो इस बात का अंदाजा लगाया जा सकता है कि बाज़ार की सुविधा की दृष्टि से ग्रामीण जनसंख्या कितनी अलग-थलग रहती है। इस लिहाज़ से केवल पांच प्रतिशत दक्षिण एशियाई 'दूरस्थ क्षेत्रों में' रहते हैं, जबकि अफ्रीकी देशों में ऐसे ग्रामीणों की जनसंख्या 30 प्रतिशत से अधिक है। इसी प्रकार के लक्षण उच्चतर संभावना वाले कृषि क्षेत्रों में रहने वाली जनसंख्या के प्रतिशत के बारे में भी पाए जाते हैं (एफएओ, 2008, पृ. 4)।

इसलिए हमारा कहना है कि ए.कुन्डू जैसे

- 5,000 की न्यूनतम जनसंख्या।
- जनसंख्या का घनत्व कम से कम 400 व्यक्ति प्रतिवर्ग किमी।
- कार्यशील पुरुषों की जनसंख्या का 75 प्रतिशत गैर-कृषि गतिविधियों में संलग्न।

यह देखा गया है कि 1991-2001 के दशक में, गुजरात में ग्रामीण गैर-कृषि मुख्य श्रमिकों की संख्या शहरी गैर-कृषि मुख्य श्रमिकों के मुकाबले अधिक हो गई। 2001 की जनगणना के अनुसार, गुजरात में 122 बड़े गांव थे। इनमें से प्रत्येक गैर-कानूनी परिभाषा से परे शहरों की तीन कसौटियों को संतुष्ट करते थे। इन गांवों की कुल जनसंख्या 11.21 लाख थी। यदि इसे शुद्धि कारक के रूप में देखा जाए, तो 1991-2001 की अवधि के लिए गुजरात के शहरीकरण की मात्रा का संशोधित अनुमान लगभग 39.57 प्रतिशत रहेगा। इससे पूर्व 37.36 प्रतिशत का अनुमान लगाया गया था, तब शुद्धिकारक (करेक्शन फैक्टर) 2.21 प्रतिशत थी।

अतएव गुजरात में शहरीकरण प्रक्रिया में 2.87 प्रतिशत अंकों की वृद्धि नहीं हुई है, बल्कि 5.06 प्रतिशत की वृद्धि हुई है, जो पहले के अनुमान से लगभग दो गुना है। इससे नीति निर्धारित और पूर्वानुमान कार्यों के लिए काफी अंतर पैदा हो जाता है, क्योंकि यह सर्वविदित है कि शहरी पूर्वानुमान शहरी-ग्रामीण विकास के अंतर पर आधारित होते हैं। पूर्व में जो अनुमान लगाए गए हैं, उनमें अंतर आने से नतीज़ों पर भारी असर पड़ सकता है। उदाहरण के लिए, शहरीकरण के लिए दशक में जो भूमि छोड़ी गई थी वह आमतौर पर 5 प्रतिशत से कम था। अब यह स्थिति बदल गई है।

वैश्विक कार्यों और विशेषज्ञ अध्ययनों में पहले के शहरी कारण के निराशावादी पूर्वानुमानों की तुलना में अब अधिक ऊंचे अनुमान लगाए जाते हैं। इस प्रकार, अंतरराष्ट्रीय जल प्रबंधन संस्थान की राष्ट्रीय नदी संपर्क परियोजना के रणनीतिक विश्लेषण में ए. महमूद और ए. कुन्डू ने जनसांख्यिकीय अनुमान पेश किए हैं। (अमरसिंह, शाह और मलिक, 2008 शोधपत्र 6)। परंतु उन्होंने पानी के भविष्य के बारे में तीन अंकों के अपने अध्ययन में, सरकारी आंकड़ों की तुलना में शहरीकरण की ऊंची दरों का विश्लेषण किया है। उनके अनुसार, "अन्य लोगों के अनुसार, यह भारत में जनसंख्या वृद्धि का एक रुढ़िवादी आकलन है। (वाइ. के. अलघ, अमर सिंह और शर्मा द्वारा उद्धृत, 2008) (यू. अमरसिंह, टी शाह एवं पी. एस. मलिक, संपा, 2008, पृ-12)। आईडब्ल्यूएमआई के अध्ययनों में 2025 तक 45 प्रतिशत शहरीकरण का अनुमान लगाया गया है जोकि उसी वर्ष के 37 प्रतिशत के निम्न आकलन से अधिक है। (एस. वर्मा और एस. फन्सलकर, 2008, अमर सिंह, शाह और मलिक, 2008 संपा, पृ. 29 में उद्धृत और 21वीं शताब्दी की शहरी शताब्दी के रूप में चर्चा की है, पृ-40)।

जैसाकि ऊपर बताया गया है, संयुक्त राष्ट्र ने भी अभी हाल ही में भारत के लिए अनुमानित शहरीकरण के क्रुगमैन मॉडल के अलघ संस्करण को ही प्रस्तुत किया है (देखें संयुक्त राष्ट्र, 2008)। इस अध्ययन के अंत में हमारा यह अनुमान है कि 2020

में ग्रामीण जनसंख्या का अंश कम होकर 58 प्रतिशत रह जाएगा और 2025 तक 55 प्रतिशत जबकि सरकारी आंकड़ों के अनुसार यह 2020 तक 68 प्रतिशत और 2025 तक 64 प्रतिशत तक सिमट जाएगी (भारत सरकार, 2026, तालिका 10, पृ. 56)।

अतएव, 2020 तक 1 अरब 27 करोड़ 30 लाख की कुल जनसंख्या में से ग्रामीणों की जनसंख्या 73 करोड़ 80 लाख रह जाएगी। ग्यारहवीं योजना में 2016-17 तक ग्रामीण श्रमिकों का प्रतिशत 45.7 प्रतिशत तक सीमित रहने का अनुमान लगाया है। यह अंतिम वर्ष है, जिसके बारे में उन्होंने अनुमान लगाए हैं (भारत सरकार 2008, अंक 1, पृ. 75, तालिका 14क)। ग्रामीण क्षेत्रों हेतु अलग से आयु केंद्रित सहभागिता दर की गणना करते हुए जी.एस. भल्ला और पी. हैज़ेल (भल्ला और हैज़ेल, 2003, पृ. 348) ने पहले जो आंकलन प्रस्तुत किया था, उसके अनुसार ग्रामीण क्षेत्र का प्रतिशत 46.9 था। हमारा मानना है कि 46 प्रतिशत की सहभागिता दर से कुल श्रमिकों की संख्या 34 करोड़ ठहरेगी। भल्ला और हैज़ेल ने 40 करोड़ 40 लाख श्रमिकों की संख्या का जो अनुमान लगाया है, उससे यह संख्या काफी कम है।

अगले दो दशकों में भारतीय कृषि खाद्य सुरक्षा की आवश्यकताओं को पूरा करने में समर्थ हो जाएगी और उसमें तेज़ी से विविधता आएगी। बाज़ारों का त्वरित विकास और कार्यशील जनसंख्या का गांवों से जुड़े शहरों की ओर स्थानांतरण और फसलोत्पादन से हटकर मूल्य वर्धित गतिविधियों को अपनाना ग्राम-शहर संबंधों की निरंतरता को बनाए रखेगा। आर्थिक विकास की उच्चदर का पीछा करते हुए इन गतिविधियों में रोज़गार के ढेरों अवसर पैदा होंगे और उनका विकास होगा। यह सब तभी हो पाएगा जब संस्थागत संरचना, प्रौद्योगिकी और संगठनात्मक सहयोग के रूप में उपयुक्त संकेत तथा मूल्य निर्धारण एवं ढांचागत सहयोग के रूप में आवश्यक आर्थिक सहायता प्रदान करेगी। अन्यथा खाद्य पदार्थों के मूल्यों में वृद्धि होगी और कई वस्तुओं की कमी हो जाएगी। इस प्रकार की चर्चा के लिए फ्रेमवर्क मुहैया कराने के लिए हमने एक लघु प्रतिमान अलग से तैयार किया है (वाई.के. अलघ, 2010)। इसकी प्रमुख रूपरेखा इस प्रकार है :

तालिका-6

	भारत 2010
कुल जनसंख्या (10 लाख)	1273
ग्रामीण जनसंख्या (10 लाख)	738
श्रमिक भागीदारी दर प्रतिशत	46
श्रमिक संख्या (10 लाख)	340
सकल घरेलू उत्पाद (प्रतिशत वार्षिक)	8.5
तदैव कृषि विकास (प्रतिशत वार्षिक)	4 प्रतिशत
रोज़गार में घट-बढ़	-0.3 प्रतिशत
कृषि विकास (कम के संदर्भ में)	
रोज़गार में घट-बढ़ कृषि	
विकास (उच्च) के संदर्भ में	-0.1 प्रतिशत
सघन फ़सल से भूमि आवर्धन (उच्च)	0.5 प्रतिशत
फ़सल सघनता में वृद्धि	0.0 से 0.2 प्रतिशत

निम्नलिखित व्यापक फ्रेमवर्क में एक साधारण प्रक्रिया होगी। विकास के उदार फ्रेमवर्क में कृषि का विकास प्रतिवर्ष 4 प्रतिशत की दर से होगा। प्रौद्योगिकीय परिवर्तन और विविधीकरण काफी अधिक होगा। अत: कृषि से इस दिशा में बदलाव 2010-2020 के दशक के मुक़ाबले में 20 प्रतिशत अधिक होगा। (0.3 प्रतिशत का लचीलापन कम/अधिक)। इसका अर्थ है कि कृषि श्रमिकों के वास्तविक पारिश्रमिक (वेतन) में भी उसी हिसाब से बढ़ोतरी होगी।

कृषि उत्पादकता में मामूली वृद्धि की वज़ह से यदि सकारात्मक बदलाव नहीं आता, तो रोज़गार में 0.1 प्रतिशत की गिरावट और इन प्रतिशतों की वार्षिक विकास दर के कारण कुल 4 प्रतिशत का ही बदलाव आ सकेगा और कृषि श्रमिकों के वेतन में मामूली वृद्धि ही हो पाएगी। श्रमिकों के वेतन की स्थिति बिगड़ने के कारण मनरेगा जैसे कार्यक्रमों की आवश्यकता बहुत बढ़ जाएगी। आर्थिक रूपांतरण की यह बहुत कठोर प्रक्रिया होगी।

इस तार्क़िक फ्रेमवर्क के परिणामों को केवल एक अन्य कारक ही प्रभावित कर सकता है और वह है भारतीय कृषि के भूमि आधार का आवर्धन। इस पहलू के बारे में नीचे भूमि और जल प्रश्नों के संदर्भ में चर्चा की गई है। यदि भूमि और जल के परस्पर जुड़े मुद्दों पर सफलता के साथ भूमि आवर्धन का मसला फिर उभरकर सामने आता है, तो 2010-20 के दशक में फ़सल लेने की तीव्रता (सघनता) प्रतिवर्ष 0.5 प्रतिशत बढ़ जाएगी। वास्तविक वेतन में 7 प्रतिशत की अतिरिक्त वृद्धि होगी अथवा कुल 27 प्रतिशत की वृद्धि होगी और शहर और गांव की असमानता में कमी आएगी। इनके अलावा दो विशाल प्रश्नचिह्न और भी हैं। वे गैर-नवीकरणीय संसाधनों, विशेषकर भूमि और जल से संबंध रखते हैं।

निष्कर्ष

हमें यह विश्वास करना होगा और इस तथ्य के लिए काम करना होगा कि अगले दशक में भारतीय कृषि खाद्य सुरक्षा संबंधी देश की आवश्यकताओं को पूरा करने में समर्थ होगी और उसमें तेज़ी से विविधता आएगी। बाज़ारों के त्वरित विकास और कार्यशील जनसंख्या का गांवों से सटे शहरों की ओर अंतरण और फ़सलोत्पादन से हटकर मूल्यवर्धित गतिविधियों को अपनाने से गांव-शहर संबंध की निरंतरता को बनाए रखा जा सकेगा। आर्थिक विकास की उच्चदर का पीछा करते हुए इन गतिविधियों से रोज़गार के अनेक अवसरों का सृजन होगा। यह सब तभी संभव हो सकेगा जब संस्थागत संरचना, प्रौद्योगिकी और संगठनात्मक सहयोग के तौर पर उपयुक्त संकेत और मूल्य निर्धारण एवं ढांचागत समर्थन के रूप में आवश्यक आर्थिक सहायता प्रदान करेगी। अन्यथा, खाद्य पदार्थों के मूल्यों में वृद्धि होगी और कुछ वस्तुओं की कमी हो जाएगी। ❑

(लेखक ग्रामीण प्रबंधन संस्थान, आणंद के अध्यक्ष, नगालैंड विश्वविद्यालय के कुलपति और सरदार पटेल अर्थशास्त्र एवं सामाजिक अनुसंधान संस्थान के उपाध्यक्ष हैं। वह केंद्रीय ऊर्जा नियोजन, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्री भी रह चुके हैं।

ई-मेल : yalagh@gmail.com)

साहित्य भवन द्वारा प्रस्तुत

प्रतियोगिता साहित्य

सम्पूर्ण मासिक कॅरियर पत्रिका

टॉपर से भेंटवार्ता

बृजबिहारी लाल
SSC Graduate Level

"मेरे विचार से एक प्रमाणिक पत्रिका में वह सब कुछ होना चाहिए जिसकी एक प्रतियोगी परीक्षार्थी को कामयाबी के लिए जरूरत है। यानि कि **'एक सम्पूर्ण पत्रिका'**।"

गुलबीर सिंह
UGC NET

"'प्रतियोगिता साहित्य' पत्रिका एक श्रेष्ठ पत्रिका है। आज की प्रतियोगीय परीक्षा की दृष्टि से अच्छी है, क्योंकि प्रतियोगी परीक्षाओं में करेन्ट अफेयर्स पर भी प्रश्न पूछे जाते हैं। प्रतियोगिता साहित्य में इस पर पर्याप्त सामग्री मिलती है। प्रतियोगिता साहित्य की पुस्तकें पढ़कर मैंने महसूस किया कि ये गागर में सागर की तरह हैं।"

प्रमुख आकर्षण :

- राष्ट्रीय
- अंतर्राष्ट्रीय
- राज्य
- आर्थिक
- विधि/विधान
- विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी
- पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण
- खेलकूद समाचार
- प्रमुख अंतर्राष्ट्रीय संगठन/विश्व के देश
- परीक्षाओं में सफलता की रणनीति
- नवीनतम सामान्य ज्ञान
- समसामयिक आलेख
- कॅरियर लेख
- हल व मॉडल प्रश्न पत्र
- टॉपर से भेटवार्ता
- पूछें आप, बताएं हम
- रोजगार के अवसर
- निबन्ध प्रतियोगिता
- मासिक सफरनामा

मूल्य 20/-

सदस्यता कूपन

YHDec10

मैं 'प्रतियोगिता साहित्य' हिन्दी मासिक पत्रिका की सदस्यता के लिए बैंक ड्राफ्ट/मनीआर्डर संख्या .....

दिनांक ..... आहरित बैंक (बैंक का नाम) .....

से भुगतान **'प्रतियोगिता साहित्य'** के पक्ष में भेज रहा/रही हूं।

☐ 1 वर्ष (12 अंक) भुगतान रु. 200/– ☐ 2 वर्ष (24 अंक) भुगतान रु. 350/–

नाम : .....

पूरा पता : .....

.....

जिला : ..... पिनकोड .....राज्य .....

फोन : .....मोबाईल .....

ईमेल : .....

नोट : • कूपन पूर्ण भरें • भुगतान के साथ कूपन भी भेजें • बैंक ड्राफ्ट के पीछे अपना नाम, फोन नं. भी लिखें • चैक स्वीकार नहीं है

नियम : • धनराशि भेजते समय अपना नाम व पता (डाक पिनकोड सहित) स्पष्ट लिखें। • पत्रिका हर माह की 7 तारीख को साधारण डाक से भेजी जाएगी। डाक सम्बन्धी किसी भी गड़बड़ी के लिए 'प्रतियोगिता सहित्य 'प्रबन्धतंत्र उत्तरदायी नहीं होगा। कूपन भेजने का पता :

प्रतियोगिता साहित्य, 3/20बी, आगरा मथुरा बाईपास, निकट तुलसी सिनेमा, आगरा–282 002 (उ.प्र.)

फोन : 089585 00222 फैक्स 2851568 Email : subscribe@psagra.in Website : www.psagra.in

YH-1/11/7

छोटी जोतों का सुदृढ़ीकरण

● वी.एस. व्यास

भारत में कृषि संरचना में पिछले कुछ दशकों के दौरान बड़े परिवर्तन आए हैं। देश में जोत छोटी हो रही है और धीरे-धीरे अधिकांश ज़मीन औसत दर्ज़े के और छोटे किसानों में बंट रही है। इस तरह से जोतों की संख्या बढ़ रही है और इन किसानों द्वारा जोती जाने वाली ज़मीन का रक़बा भी बढ़ रहा है। कुल मिलाकर देशभर में छोटे किसानों का प्रतिशत 83.5 है। इनमें से अधिकांश उत्तर प्रदेश, बिहार और आंध्र प्रदेश में हैं। इन राज्यों में ऐसे किसानों द्वारा जोती जाने वाली ज़मीन खेती की कुल ज़मीन के एक-तिहाई या इससे ज्यादा के बराबर है। इस मामले में अपवादस्वरूप महाराष्ट्र (31.7), पंजाब (29.9) और राजस्थान (22.60) है।

अधिकांश छोटे किसान गरीबी रेखा से नीचे आते हैं और सामाजिक रूप से वंचित समूहों के होते हैं। अर्थव्यवस्था के उदारीकरण और मध्यम वर्ग के बढ़ने के साथ उन्हें अधिक अवसर मिले हैं और इन छोटे किसानों की संसाधनों तक पहुंच बन गई है। इस संदर्भ में कहा जा सकता है कि अगर छोटे किसानों की उपेक्षा की गई तो इससे ग्रामीण क्षेत्र में विभाजन आ सकता है। 70.5 प्रतिशत लघु जोतों पर अनाज की खेती होती है। बहुत कम ज़मीन पर फ़सली फल और सब्ज़ियां उगाई जाती है तथा यह अधिकांशत: किसानों के इस्तेमाल में ही खप जाती है। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण 2003 के 59वें चक्र के अनुसार छोटे किसानों की आय और खपत में 655 रुपये प्रतिमाह का अंतर होता है।

उपलब्ध विकल्प

हालांकि गैर-कृषि क्षेत्रों में छोटी जोतों को बदल देने का एक सीधा विकल्प दिखाई देता है लेकिन इतनी भारी संख्या में मौजूद छोटे किसानों को उद्योगों और सेवाओं में खपाना मुश्किल होगा। इन क्षेत्र में भी अधिक पूंजी की ज़रूरत पड़ेगी। इसीलिए हमारा उद्देश्य होना चाहिए कि हम छोटे किसानों को आर्थिक रूप से संभाव्य बनाएं ताकि वे लाभ कमा सकें। इस उद्देश्य से कुछ विकल्प नीचे दिए जा रहे हैं :

- कृषि जोतों का विस्तार करना।
- मौजूदा फ़सलों की उत्पादकता में सुधार लाना।
- अधिक क़ीमत वाले फ़सलों की खेती शुरू करना।

ये समावेशी विकल्प हैं और बहुत संभाव्य हैं।

कृषि जोतों का विस्तार

छोटे किसानों की ज़मीन में अगर थोड़ा भी इज़ाफ़ा हो तो इससे उनमें काफी अंतर आएगा। ये बात सीमांत (यानी एक हेक्टेयर से कम ज़मीन पर खेती करने वाले) किसानों और छोटे (एक से दो हेक्टेयर तक ज़मीन पर खेती करने वाले) किसानों की स्थिति से स्पष्ट है। ऐसे तीन तरीक़े हैं जिनसे छोटे किसानों की जोत बढ़ाई जा सकती है– (1) जमीन पट्टे पर देकर, (2) भूमि सुधारों के जरिये फालतू भूमि अर्जित करके और (3) बाज़ार से ज़मीन खरीदकर।

बटाईदारी को कानूनी मान्यता देना

काफी बड़ी संख्या में सीमांत और छोटे किसान अपनी कम ज़मीन भी पट्टे पर देते हैं। अधिकांश राज्यों में बटाईदारी को कानूनी मान्यता प्राप्त नहीं है जिसका कारण है कि इस प्रकार के लेन-देन को रिकॉर्ड में दर्ज़ नहीं किया जाता। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण 2003 ने पाया है कि किसी क्षेत्र में 7 प्रतिशत ज़मीन पट्टे वाली है और 11.5 प्रतिशत ग्रामीण परिवार पट्टे वाले ज़मीन पर खेती कर रहे हैं। देशभर में अध्ययनों से मालूम हुआ कि 15 से 35 प्रतिशत तक ज़मीन पट्टे वाली है। बटाईदारों में अधिकांश किसान औसत दर्ज़े और छोटे स्तर के हैं। सिर्फ़ अधिक व्यापारिक क्षेत्रों में रिवर्स टेनेंसी मौजूद है। अगर बटाईदारी को सीलिंग (हदबंदी) के प्रावधानों के अंतर्गत मान्यता दी जाए और उसका पंजीकरण किया जाए तो छोटे और सीमांत किसानों को और ज्यादा ज़मीन बेहतर शर्तों पर उपलब्ध कराई जा सकती है।

भूमि सुधार

पहले भी आज़माइश के तौर पर भूमि सुधारों के अंतर्गत ज़मीन का फिर से वितरण किया जा चुका है। इसके लिए बनाए गए कानून के अंतर्गत एक सीमा से ज्यादा ज़मीन को सरप्लस माना जाता है जिसे भूमिहीनों और छोटे और औसत दर्ज़े के किसानों के बीच फिर से वितरित किया जाता है। यह अच्छा उपाय है लेकिन ज़मीनी हक़ीक़त में इसमें बहुत खामियां नज़र आईं। हर चरण में इसमें कमियां देखी गईं। पहले तो बहुत कम ज़मीन सरप्लस घोषित की गई (खेती वाली ज़मीन की सिर्फ़ 1.86 प्रतिशत)। सरप्लस घोषित किए जाने के बाद बहुत कम ज़मीन कब्ज़े में ली गई और इसमें से भी बहुत कम ज़मीन लाभार्थियों में आवंटित की गई। आवंटन के बाद भी बहुत कम ज़मीन का कब्ज़ा दिया गया। अनेक अध्ययनों से ज़ाहिर हुआ कि जहां भी भूमि सुधारों के अंतर्गत ज़मीन का फिर से वितरण किया गया, इससे ज़मीन पाने वालों को फायदा हुआ। राज्य कृषि और भूमि सुधार से संबंधित समिति ने कहा कि फिर से वितरण के लिए काफी ज्यादा ज़मीन अर्जित की जा सकती थी बशर्ते कि हदबंदी संबंधी वर्तमान कानूनों को ठीक से लागू किया जाता। परिस्थितियोंवश माना जा सकता है कि यह एक ऐसा विचार था जो अब संगत नहीं रहा।

भूमि बाज़ारों का संचालन

अपने देश में जोतों का रक़बा बढ़ाने के लिए बाज़ार का इस्तेमाल नहीं किया जाता। इस दृष्टिकोण को बदलने की ज़रूरत है। ज़मीन ख़रीदने के लिए लोगों को बैंकों द्वारा वित्तपोषण देना व्यवहार्य नहीं है। लेकिन जहां कहीं भी सरकार ने रुचि ली वहां बड़ी मात्रा में ज़मीन अर्जित कर ली गई है। उदाहरण के लिए विशेष आर्थिक क्षेत्रों को लें।

नाबार्ड ने बैंकों द्वारा ज़मीन ख़रीदने के लिए ऋण देने की एक पुनर्वित्त योजना शुरू की है। इसकी शुरुआत जनवरी-मार्च 2002 में की गई थी। इस योजना से शायद ही किसी राज्य ने फायदा उठाया। हरियाणा एकमात्र ऐसा राज्य था जिसने कुछ रुचि दिखाई। वहां पांच वर्षों में आठ हज़ार से भी कम लोगों ने इस योजना से लाभ उठाया। अन्य राज्यों में इसी अवधि के दौरान इस योजना से फायदा उठाने वालों की संख्या एक हज़ार तक भी नहीं पहुंची।

यह योजना एक तरह से विफल हो गई। इसके निम्न कारण हैं :

- बैंक या राज्य सरकारों द्वारा सूचना का प्रचार नहीं किया गया।
- ज़मीन के रिकॉर्ड अद्यतन नहीं किए गए जिसके चलते बैंकों को ऋण देने में मुश्किलें पेश आईं।
- जिला भूमि हदंबदी दर और बाज़ार की दरों में काफी अंतर होना। बैंक जिला भूमि हदबंदी दर पर ऋण देते हैं। अत: छोटे/मार्जिनल किसान संसाधनों की कमी पूरा करने में असमर्थ रहे।
- आमतौर पर ज़मीन मालिक सिंचित भूमि नहीं बेचते और असिंचित और छोटे टुकड़े वाली ज़मीन खरीदने में किसान रुचि नहीं दिखाते।
- बड़े किसान ज़मीन नहीं बेचना चाहते क्योंकि ज़मीन की क़ीमत लगातार बढ़ रही है।

ऊपर बताई गईं मुश्किलें दूर की जा सकती हैं और छोटे किसानों के लाभ के लिए भूमि बाज़ार को सक्रिय बनाया जा सकता है। लेकिन इसके लिए राज्य सरकारों और बैंकों के सक्रिय सहयोग की ज़रूरत पड़ेगी।

कर्नाटक, आंध्र प्रदेश और पश्चिम बंगाल, ये तीन ऐसे राज्य हैं जिन्होंने बेघर लोगों के लिए मकान बनाने के वास्ते बड़ी मात्रा में ज़मीन अर्जित की है। इसके लिए अपनाया गया तरीक़ा, खासतौर से कर्नाटक में जो तरीक़ा अपनाया गया, उसमें बाज़ार की स्थिति का ध्यान रखा गया और सरकार तथा पंचायतों ने सक्रिय भागीदारी की। सीमांत किसानों के लिए ज़मीन खरीदे जाने के मामले में भी ऐसा ही कार्यक्रम चलाना संभव है।

उत्पादकता में सुधार

1960 और 1970 के दशक में कृषि क्षेत्र में जोतों के आकार और पैदावार के बारे में काफी अनुसंधान किए गए। इससे जो निष्कर्ष सामने आए उनसे मालूम हुआ कि छोटी जोतें ज्यादा उपजाऊ होती हैं। इसका जो स्पष्टीकरण दिया गया वह यह था कि छोटे किसान अपने संसाधनों का इस्तेमाल बहुत सोच-समझकर करते हैं जिससे उनकी उत्पादकता बढ़ती है। हाल के वर्षों में इस निष्कर्ष को तब चुनौती दी गई जब पाया गया कि ख़रीदे गए उर्वरक आदि का निवेश में काफी बड़ा भाग था और छोटे किसान नकदी या ऋण के अभाव में ये सामग्रियां नहीं खरीद पाए। लेकिन अखिल भारतीय स्तर पर हाल ही में ऐसे सबूत मिले हैं जिससे मालूम होता है कि छोटी जोतों से आजकल ज्यादा पैदावार मिल रही है जबकि औसत दर्ज़े के और बड़े फार्म इतने लाभकारी नहीं हैं। सीमांत जोतों के मामले में प्रति हेक्टेयर आमदनी 14,754 रुपये थी जबकि छोटी जोतों के मामले में यह आय 13,001 रुपये थी। इसकी तुलना में सभी आकार के जोतों को मिलाकर औसत आमदनी रुपये 12,335 बैठी। लेकिन जोत छोटी होने के चलते यह आमदनी काफी नहीं है और आकार छोटा होने से जो नुक़सान होता है उसकी भरपाई प्रति हेक्टेयर अधिक पैदावार से नहीं हो पाती।

यह याद रखने की बात है कि दक्षिण-पूर्व और पूर्वी एशिया के अधिकांश देशों के किसानों की कृषि उत्पादकता अधिक है और वे अधिक आमदनी प्राप्त करते हैं। इनमें चीन भी शामिल है। उत्पादकता बढ़ाने की बहुत गुंजाइश है और छोटी जोतों से परंपरागत खेती के जरिये अधिक कमाई की जा सकती है। अपने देश में धान, गेहूं, मक्का आदि की पैदावार अन्य देशों के मुक़ाबले कम है तथा देश के ही कई क्षेत्रों में प्रगतिशील किसान अच्छी उपज ले रहे हैं। सभी प्रकार के जोतों से अधिक पैदावार लेने की संभावना उन क्षेत्रों में दिखाई दे रही है जहां बीटी कपास और मक्के की फ़सलें उगाई गई हैं। इन फ़सलों में पैदावार बढ़ने के मुख्य कारक हैं– क) उन्नत किस्म के बीज, ख) उर्वरकों आदि के इस्तेमाल में किफायत, ग) बेहतर गुणवत्ता, घ) उर्वरकों, बीजों जैसे निवेश की आपूर्ति में निजी क्षेत्र का सक्रिय योगदान, ङ) बढ़ता बाज़ार। इस प्रकार की संभावनाएं अन्य प्रमुख फ़सलों (उदाहरण के लिए उन्नत धान) के लिए भी बनती है। परंपरागत फ़सलों को उगाने की भी ऐसी तकनीकें हैं जिनके जरिये लागत में कमी लाई जा सकती है और पैदावार बढ़ाई जा सकती है। ऐसी सुधरी तकनीकों का एक उदाहरण है सिस्टम ऑफ राइस इंटेनसीफिकेशन। ❑

(लेखक प्रधानमंत्री की आर्थिक सलाहकार परिषद के सदस्य हैं।
ई-मेल : vsvyas@mac.com)

वित्तपोषण : कुछ मुद्दे

● के.जी. करमाकर

भारत 1990 के दशक के बाद विश्व की सबसे तेज़ी से विकसित होने वाली अर्थव्यवस्थाओं के रूप में उभरा है। इसके सकल घरेलू उत्पाद की विकास दर पिछले कुछ वर्षों में बेजोड़ रही और इसकी तुलना सिर्फ़ पड़ोसी देश चीन के साथ की जा सकती है। लेकिन, आर्थिक-समाजिक विकास गति में तेज़ी के बावजूद नयी विकास नीतियों के सामने कई नयी चुनौतियां भी सामने आईं। सतत आर्थिक विकास के लिए महत्वपूर्ण कृषि क्षेत्र को भी सकल घरेलू उत्पाद के मुक़ाबले लगातार चार प्रतिशत की दर से बढ़ना चाहिए। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि हमारी खेती का 60 प्रतिशत मानसून पर निर्भर है, खाद्य उत्पादन में सतत विकास सुनिश्चित करना एक बड़ी चुनौती बन गई। धरती का तापमान बढ़ने और उसके परिणामस्वरूप जलवायु परिवर्तन ने यह चुनौती और भी बढ़ा दी।

खेती की पैदावार बढ़ाने में ऋण और निवेश गतिविधियों का बहुत महत्वपूर्ण योगदान है। दसवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान उम्मीद की जा रही थी कि कृषि क्षेत्र को ऋण प्रवाह चक्रवर्ती वार्षिक वृद्धि (कंपाउंड एनुअल ग्रोथ रेट-सीएजीआर) 26.38 प्रतिशत रहेगी। नौवीं योजना में यह दर 18.63 प्रतिशत थी। हालांकि कुल कृषि ऋण पिछले 6 वर्षों में बढ़ा लेकिन मात्रा और गुणवत्ता दोनों के हिसाब से चिंता के गंभीर कारण मौजूद हैं। एक गंभीर मुद्दा यह है कि हमारी संस्थागत ऋण संरचना काफी विस्तार वाली नहीं है। यह एक गंभीर मुद्दा है जिसे जल्द-से-जल्द दुरुस्त किए जाने की ज़रूरत है। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन (एनएसएसओ) ने वर्ष 2003 में 59वें दौर में निष्कर्ष निकाला कि कुल के सिर्फ़ 27 प्रतिशत किसान परिवारों को औपचारिक सूत्रों से ऋण मिल सका, जबकि 22 प्रतिशत को अनौपचारिक सूत्रों से ऋण मिला। बाकी परिवार सामान्यतया छोटे और औसत दर्ज़े के किसान थे जिन पर कोई ऋण बक़ाया नहीं थे। नये उत्पाद और सेवाएं देकर वित्तीय सेवाओं में सुधार लाने और संस्थागत ऋण उपलब्ध कराने के नये तरीक़े और सेवाओं के वित्तीय समावेशन के हिसाब से व्यापक उपाय किए जाने की ज़रूरत है। बटाईदार किसानों को ऋण प्रवाह सुनिश्चित करने और जटिल प्रलेखन प्रक्रिया आसान बनाने, लागत घटाने और सभी क्षेत्रों में अच्छी गुणवत्ता वाले कृषि निवेशों की उपलब्धता सुधारने के लिए उपाय किए जाने की ज़रूरत है। अपर्याप्त और निष्प्रभावी ज़ोखिम शमन प्रबंध किए जाने, विस्तार सेवाओं में बढ़ोतरी करने, विपणन और क्षेत्रीय मुद्दों में सुधार लाना भी आवश्यक है। ऐसा करके ही इन समस्याओं का हल ढूंढा जा सकता है। ग्रामीण क्षेत्रों में ऋण ब्यूरो नहीं है जिससे कृषि ऋण मंजूर करने की प्रक्रिया में विलंब होता है और ऋण ज़ोखिम तथा प्रलेखन प्रक्रिया बढ़ती है।

कृषि क्षेत्र की सीमाएं

भारतीय अर्थव्यस्था में कृषि का बहुत महत्व है क्योंकि इस क्षेत्र में 65 करोड़ आबादी को रोज़ी-रोटी के अवसर मिलते हैं और इससे ही अनेक उद्योगों को कच्चा माल मिलता है। सतत आधार पर भारतीय अर्थव्यवस्था की विकास गति बनाए रखने के लिए कृषि क्षेत्र को हाल के वर्षों में महत्वपूर्ण भूमिका निभानी है। दसवीं पंचवर्षीय योजना के पहले चार वर्षों के दौरान कृषि क्षेत्र की वास्तविक विकास दर औसतन मात्र दो प्रतिशत प्रतिवर्ष रही जबकि योजना अवधि (2002-07) के दौरान चार प्रतिशत वार्षिक विकास दर की परिकल्पना की गई थी। वर्ष 1980-81 में जहां कृषि सकल घरेलू उत्पाद का समग्र घरेलू उत्पाद में हिस्सा घटकर क़रीब 35 प्रतिशत रह गया, जो अब मात्र 18 प्रतिशत है। इसी तरह से पहले जहां आबादी के 70 प्रतिशत लोग कृषि क्षेत्र पर निर्भर हुआ करते थे, वहीं अब खेती में लगी जनशक्ति मात्र 66 प्रतिशत रह गई है। कृषि क्षेत्र में लगे ग्रामीण लोगों की प्रतिव्यक्ति आय भी गैर-कृषि क्षेत्र में काम करने वालों की तुलना में कम हो रही है, जो चिंता की बात है। जहां अब अधिकांश जनशक्ति खेती पर निर्भर है वहीं सकल घरेलू उत्पाद की विकास दर खेती में बढ़ रही आबादी की दर से थोड़ा ही ज्यादा है, जबकि गैर-कृषि क्षेत्र की विकास दर इससे काफी ऊंची है। दूसरे, हर क्षेत्र और हर फ़सल की विकास दर अलग-अलग रही है। इस प्रकार से जहां अनाज उत्पादन और कृषि के तकनीकी विकास में राष्ट्रीय स्तर पर हमें आत्मनिर्भरता मिल गई हैं वहीं अब भी भुखमरी के कारण होने वाली मौत और खुदकुशी की घटनाएं जारी हैं और देश के विभिन्न भागों में किसानों का एक बड़ा हिस्सा इनकी चपेट में है।

सकल घरेलू उत्पाद में कृषि क्षेत्र में पूंजी निर्माण में गिरावट आई है। 1990 के दशक के अंतिम वर्षों में जहां यह दर 2.2 प्रतिशत थी वहीं वर्ष 2004-05 में यह दर घटकर 1.7 प्रतिशत हो गई जो चिंता की बात है। '90 के दशक के दौरान कृषि क्षेत्र की लाभप्रदता में 14.2 प्रतिशत की गिरावट आई जो कृषि क्षेत्र में निज़ी क्षेत्र द्वारा निवेश बढ़ाने में कमी का प्रमुख कारण बना। सिंचाई, भूमि विकास, जल संभरण विकास, कृषि विपणन, मूल सुविधा और ग्रामीण सड़कों में बढ़ोतरी के कारण कृषि उत्पादकता और आय बढ़ रही है। वैद्यनाथन समिति की सिफ़ारिशों के अनुसार कानूनी और संस्थागत सुधारों के जरिये सहकारी संस्थागत ऋण फिर से शुरू किए गए और इस प्रकार से वित्तीय सहायता उपलब्ध कराई गई जिसके कारण कृषि क्षेत्र को ऋण प्रवाह में सुधार और इस क्षेत्र में निवेश बढ़ने की उम्मीद है।

कृषि ऋण प्रवाह की सीमाएं

किसी विकासशील देश में मुद्रा और ऋण नीतियों का उद्देश्य कृषि क्षेत्र और ऋण नीति में कृषि क्षेत्र के ज़ोखिम को कम करना होना चाहिए। कृषि ऋण पुनर्वित्त नीतियों को बाज़ार सुधार का साधन माना जाना चाहिए और इसके

जरिये ज़ोखिम में कमी लाकर विकास दर तेज़ की जानी चाहिए। मुद्रा संबंधी संकीर्ण दृष्टिकोण अपनाकर ऋण और पुनर्वित्त नीतियों को प्रभावित नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि इस समय ये कृषि क्षेत्र में विकास को प्रतिंबिबित करते हैं और अर्थव्यवस्था के बहुत महत्वपूर्ण घटक बने हुए हैं। ज़रूरत इस बात है कि राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक को कम दर पर निधियां उपलब्ध कराई जाएं ताकि किसानों को कम दरों पर वित्त पोषण मिले और वर्ष 2007 में डॉ. एम. एस.स्वामीनाथन के नेतृत्व में बने राष्ट्रीय किसान आयोग की सिफ़ारिशों के अनुसार कृषि क्षेत्र को कुल के चार प्रतिशत ऋण का हिस्सा मिल सके। लेकिन किसान फिर भी बीज/उर्वरक/ कीटनाशकों और सिंचाई और मजदूरी जैसे ज़रूरी अंतर्निवेशों की लागत कम करने में असमर्थ रहेंगे। लागत घटाने का एकमात्र तरीक़ा यह है कि सब्सिडी देकर सस्ते ऋण उपलब्ध कराए जाएं।

वर्ष 2010-11 के अपने बजट भाषण में वित्तमंत्री ने 5 प्रतिशत की प्रभावी ब्याज दर का एलान किया था जिसमें दो प्रतिशत ठीक समय पर ऋण वापसी के लिए दिया जाने वाला प्रोत्साहन है। अगर भारतीय कृषि को प्रतियोगी और प्रफुल्ल बनाना है तो यह सही दिशा में एक क़दम है। लेकिन 80 प्रतिशत ऋण फ़सलों और कारपोरेट संस्थाओं को मिल रहे हैं। सिर्फ़ 20 प्रतिशत ऋण कृषि में निवेश के लिए है जिसमें से अधिकांश थ्रेशर, फ़सल कटाई मशीनों और ट्रैक्टरों आदि के लिए है और बहुत कम हिस्सा सिंचाई, पशुपालन तथा मछलीपालन क्षेत्रों को जाता है। 1990 दशक से व्यावसायिक बैंक उन ग्रामीण शाखाओं को बंद कर रहे हैं जो लाभप्रद नहीं हैं। झारखंड जैसे अनेक ग़रीब राज्यों में किसान कम ब्याजदर पर ऋण नहीं पाते और उन्हें 11 प्रतिशत से ज्यादा ब्याज देना पड़ता है। रिज़र्व बैंक ऑफ इंडिया/कृषि मंत्रालय आदि को इन बातों की छानबीन करनी चाहिए। वर्ष 1987 में अमरीका ने फार्म क्रेडिट असिस्टेंस कॉरपोरेशन गठित किया। भारत में भी उसी तर्ज़ पर एक निगम बनाए जाने की ज़रूरत है। अमरीका में कृषि क्षेत्र का योगदान अर्थव्यवस्था में मात्र 1.6 प्रतिशत है जबकि कुल जनशक्ति का मात्र दो प्रतिशत भाग खेती में लगा हुआ है।

वर्ष 2004 से भारत सरकार के उपायों के चलते कृषि क्षेत्र को मिलने वाले ऋण में बढ़ोतरी हुई है। भारत सरकार ने वर्ष 2004-2006 में कृषि ऋण दुगुना करने, वर्ष 2008 में किसान ऋण माफ़ी योजना लाने और वैद्यनाथन समिति-1 की सिफ़ारिशों के अनुसार सहकारी समितियों को सुदृढ़ बनाने के उपाय किए जिनसे कृषि क्षेत्र को मिलने वाले ऋण में वृद्धि हुई। लेकिन वैद्यनाथन समिति-2 की सिफ़ारिशों के अनुसार लंबी अवधि के लिए ऋण देने वाली सहकारी समितियों की स्थापना अभी तक नहीं हो पाई है। पिछली तीन योजनाओं के दौरान कृषि ऋण का परिदृश्य अच्छा रहा लेकिन निम्नलिखित विवरणों के अनुसार कृषि की सकल घरेलू उत्पाद विकास दर घटती जान पड़ती है :

हालांकि कृषि ऋण आंकड़े कागज़ पर प्रभावशाली जान पड़ते हैं लेकिन छोटे और मझोले किसानों की पहुंच अभी इन तक आसानी से नहीं है और महानगरीय क्षेत्रों में कृषि क्षेत्र को ज्यादा ऋण मिल रहा है जिसके कारण भंडारगृहों, शीतागारों, सिंचाई, ग्राम विद्युतीकरण आदि जैसी गतिविधियों के लिए दिया जाने वाला ऋण भी कृषि ऋण में शामिल हो गया है। इस बात के सबूत हैं कि कुछ चुनिंदा किसान ऋण सुविधाओं से लाभ उठा रहे हैं जबकि नये ऋण मांगने वाले अब भी सुरक्षित ऋण पाने के लिए संघर्ष करते हैं। भारत सरकार ने समय पर ऋण लौटाने वाले किसानों के लाभ के लिए ऋण माफ़ी योजना और रियायती ब्याज की योजनाएं चलाई जिससे किसानों को बैंक ऋण मिलने लगा और ऋण वापसी में चूक न करने वाले किसानों को ऋण प्रवाह बढ़ गया। ये लाभान्वित किसान आमतौर

कृषि विकासदर

(1997-98 से 2001-02)	नौवीं योजना	2.50
(2002-03 से 2006-07)	दसवीं योजना	2.47
(2007-08 से 2009-10)	ग्यारहवीं योजना	2.20

1997-98 से योजनावार कृषि ऋण का लक्ष्य और वास्तविक उपलब्धियां तालिका-1 में दी गई है।

पर बड़े और औसत दर्ज़े के किसान हैं जिनके आय के अनेक साधन हैं और जो सिर्फ़ कृषि ऋण पर ही पूरी तरह निर्भर नहीं रहते। छोटे और मझोले किसानों को अपने आप को साहूकारों के चंगुल से मुक्त कर लेना चाहिए और उन्हें संस्थागत तंत्र के जरिये कम लागत वाले ऋण उपलब्ध कराने में प्राथमिकता दी जानी चाहिए। किसानों की खुदकुशी की वारदातें ख़ासतौर से कपास उपजाने वाले किसान समुदाय में कम हुई है। इसका प्रमुख कारण है कि उन्हें कीट मुक्त बीटी कॉटन के बीज उपलब्ध कराए गए जिससे फ़सल बरबाद होने से बच गई। इस सुधार का प्रमुख कारण उन्हें संस्थागत वित्त मिलना नहीं रहा। हाल ही में वित्त व्यवस्था के संकट के चलते छोटे और औसत दर्ज़े के किसानों की ऋण स्रोतों तक पहुंच घटी। अगर वित्तीय समावेशन को संगत माना जाए तो केंद्र और राज्य सरकारों को यह बात भली-भांति सुनिश्चित करना चाहिए कि सभी किसानों और ख़ासतौर से छोटे और मझोले किसानों को सस्ते कृषि ऋण उपलब्ध हो सकें और यह सुविधा वे खाते-पीते किसान न हथियाने पाएं जिन्हें आसानी से संस्थागत ऋण मिल जाता है।

हालांकि राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) कृषि क्षेत्र को मिलने वाली सुविधा की लागत घटाने और किसानों को कम लागत वाली निधियां उपलब्ध कराने की कोशिश करता रहा है, लेकिन इस क्षेत्र की चुनौतियों का सामना करने और ज़रूरतमंद तबके को ऋण उपलब्ध कराने की उसकी कोशिशों पर बराबर सवाल उठते रहे हैं। तालिका-2 में दिए गए आंकड़ों के अनुसार नाबार्ड ग्रामीण कृषि क्षेत्र को जो वित्तीय सहायता देता है वह वर्ष 1982 में नाबार्ड की स्थापना के समय से बढ़ा है। वर्ष 1989-90 में यह 1982 के 23 प्रतिशत से बढ़कर 51 प्रतिशत हो गया। लेकिन वर्ष 2009-10 में यह घटकर दस प्रतिशत रह गया। इस प्रकार से अब नाबार्ड का पुनर्वित्त कृषि क्षेत्र के लिए महत्वपूर्ण नहीं रहा। नाबार्ड द्वारा दी जाने वाली लघु सिंचाई के लिए वित्तीय सहायता वर्ष 1982-83 में जहां कुल की 52 प्रतिशत होती थी वहीं यह वर्ष 2009-10 में घटकर 5 प्रतिशत से कम रह गई जबकि डेयरी विकास, पशुपालन, वानिकी और मछलीपालन को मिलाकर 12 प्रतिशत पुनर्वित्त हुआ।

अब नाबार्ड के ऋणों का मुख्य ज़ोर निम्नलिखित है :

- खेतिहर मज़दूरों सहित किसानों को सतत जीविका के लिए साधन सुनिश्चित कराना।
- तकनीकी परिवर्तनों के जरिये उत्पादकता बढ़ाना ताकि किसानों की आमदनी गुज़र-बसर के स्तर से बढ़कर पर्याप्त स्तर तक पहुंच जाए।
- प्रौद्योगिकी, विपणन, बाज़ार और ऋण सुविधाओं तक पहुंच बढ़ाने के लिए संस्थाओं की स्थापना करना।

- स्वास्थ्य, सफ़ाई, पेयजल और शिक्षा जैसी मूल सुविधाओं की ज़रूरतें पूरी करना।
- अलग-थलग पड़े वर्गों की सामाजिक सुरक्षा और ज़ोखिम शमन।

तद्नुसार नाबार्ड ने आज़माइश की है और नीचे दिए गए मुद्दों को सुलझाने के लिए कई प्रकार के सफल उपाय किए हैं :

1. बाड़ी दृष्टिकोण

इसका उद्देश्य जनजातीय समुदायों का बुनियादी तौर पर बागवानी आधारित कृषि व्यवस्थाओं के जरिये समन्वित विकास अथवा उन्हें सतत जीविका के अवसर उपलब्ध कराना है। इसका एक उदाहरण है कि बागवानी विकास के पहले पांच वर्षों में से तीन वर्षों के दौरान 20-25 जनजातीय ग्रामों को 40 हज़ार रुपये प्रति परिवार की दर से 7-8 वर्षों तक बागवानी गतिविधियों के लिए 4 करोड़ रुपयों की सहायता दी गई और इस तरह की बाड़ी परियोजनाओं से एक हज़ार परिवारों को लाभान्वित किया गया। बाड़ी परियोजनाओं से जनजातीय समुदाय के 1.7 लाख परिवार लाभान्वित हो चुके हैं । इसके लिए ₹ 1,150 करोड़ की राशि रखी गई थी।

– वाटरशेड (जल संभरण)- प्राकृतिक संसाधनों का सतत प्रबंधन

1992 से सतत उत्पादक तंत्रों के लिए सूक्ष्म जल संभरण विकास का काम शुरू किया गया और इसके लिए 12,103 करोड़ रुपये का कोष स्थापित किया गया। इसके अंतर्गत 330 गांवों के 15 से 32 लाख किसानों के लाभ वाली 1,915 परियोजनाएं स्वीकृत की गईं। इस परियोजना में श्रमदान का विशेष महत्व है और इसका सारा ज़ोर स्वसहायता, पर्यावरण निरंतरता और ग़रीबी हटाने पर है। इसके अंतर्गत गतिविधियों की देखरेख ग्राम संभरण समितियां करती हैं।

– धान की खेती में सुधार

इसके लिए 25 वर्ष पहले मैडागास्कर ने एक नया पैकेज़ विकसित किया था। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद ने भले ही इसका समर्थन न किया हो लेकिन यह तरीक़ा तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश और त्रिपुरा की राज्य और केंद्र सरकार द्वारा छिटपुट रूप तथा अन्य राज्यों में भी अपनाया जा रहा है। इसके लिए सघन प्रशिक्षण और अग्रगामी परियोजनाएं शुरू की गईं। छोटे और मझोले किसानों के लिए खेती का यह तरीक़ा वरदान के समान है क्योंकि इस तरीक़े से बीजों की लागत में 60 प्रतिशत, सिंचाई की लागत में 40 प्रतिशत और उर्वरकों की लागत में 30 प्रतिशत तक की कमी की जा सकती है तथा परंपरागत तरीक़े से धान की रोपाई से मिलने वाली पैदावार में 35 प्रतिशत बढ़ोतरी होती है। जौ, गेहूं और गन्ने की खेती में ऐसे ही तरीक़े अपनाने के बारे में अनुसंधान शुरू किए गए हैं और उनके अच्छे नतीज़े सामने आए हैं।

तालिका-1

नाबार्ड द्वारा पुनर्वित्त/वित्तीय सहायता (1982-83 से 2009-10)

(करोड़ रुपये में)

वर्ष	अल्प अवधि पुनर्वित्त		निवेश पुनर्वित्त	औसत अवधि (परिवर्तन शामिल)	आरआई डीएफ/ राज्य सरकारों को ऋण	कुल योग (3+4+5+6)
	आवंटित सीमा	अधिकतम बकाया				
1	2	3	4	5	6	7
1982-83	1658	1231	703	108	13	2055
1983-84	1880	1259	892	73	9	2233
1984-85	1733	1251	1061	90	9	2411
1985-86	1901	1339	1192	132	7	2670
1986-87	2009	1370	1334	236	12	2952
1987-88	2699	1841	1482	343	88	3754
1988-89	3362	2487	1270	316	45	4118
1990-91	3904	2988	1702	135	30	4855
1991-92	4135	3103	1902	233	28	5266
1992-93	4223	3104	1902	129	29	5316
1993-94	4748	3694	2745	78	31	6548
1994-95	5770	4802	3011	151	75	8039
1995-96	6667	5340	3064	85	495*	8984
1996-97	7023	5702	3523	70	1164	10459
1997-98	7140	6000	3922	288	1149	11359
1998-99	8083	6340	4521	393	1354	12608
1999-2000	8169	6746	5215	58	2327	14346
2000-2001	8595	7011	6158	130	3238	16537
2001-2002	8701	7295	6683	316	3840	18134
2002-2003	8763	7038	7419	19	4131	18607
2003-2004	9954	6967	7605	230	4007	18809
2004-2005	11260	9451	8577	808	4328	23164
2005-2006	12080	10769	8622	1806	6000	27197
2006-2007	16089	14168	8795	60	6239	29262
2007-2008	18291	16352	9046	266	8053	33717
2008-2009	19627	17212	10635	0	10477	38324
योग	**192911**	**158474**	**115492**	**6832**	**57202**	**338000**

– बीज ग्राम अवधारणा

किसानों को उपलब्ध बीजों की कम अंकुरण दर 55-60 प्रतिशत और अच्छे बीजों की जगह लेने के लिए सिर्फ़ 15 प्रतिशत बीजों की उपलब्धता कृषि क्षेत्र की उत्पादकता की सबसे बड़ी बाधा रही है। क्षेत्र की ज़रूरत के अनुसार स्थानीय स्तर

तालिका-2

नाबार्ड द्वारा संचालित विभिन्न कोष

(करोड़ रुपये में)

क्रम सं.	कोष का नाम	सृजन तिथि	उद्देश्य	लाभ प्राप्तकर्ता/ ग्राहक/प्रयोक्ता	31 मार्च 2009 को बकाया ऋण
1.	एनआरसी(एलटीओ)	1982	दीर्घावधि निवेश साख	ग्रामीण वित्तीय संस्थाएं एवं राज्य सरकारें	14016.00
2.	एनआरसी(सटैब)	1982	उत्पादन हेतु परिवर्तन ऋण	राज्यस्तरीय साख बैंक/ क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक	1555.00
3.	आर एंड डी	1983	ग्रामीण एवं कृषि विकास से संबद्ध शोध/ संगोष्ठी/कार्यशालाएं	विश्वविद्यालय/शोध संस्थान	50.00
4.	सीआरएफ	1983	पूंजी रिज़र्व	–	74.80
5.	सीडीएफ	1992-93	प्रशिक्षण गतिविधियां	सहकारी साख संस्थाएं	125.00
6.	एआरईआईएफ	1993	ज़ोख़िमयुक्त किंतु संभावनाशील परियोजनाओं को समर्थन	–	5.00
7.	आरआईडीएफ	1995-96	ग्रामीण बुनियादी ढांचा तैयार करने के लिए राज्य सरकारों को ऋण	राज्य सरकारें, पंचायती राज संस्थाएं आदि	47023.00
8.	डब्ल्यूडीएफ	2000-01	सूखाग्रस्त ज़िलों में जलसंभरण विकास परियोजनाएं	वर्षा पर निर्भर गांवों के निवासी	1125.20
9.	एमएफडीईएफ	2000-01	विभिन्न युक्तियों द्वारा सूक्ष्म वित्त क्षेत्र को विकास हेतु समर्थन	स्वसहायता समूह, स्वयं सेवी संगठन/गांवों में स्थित कार्यकर्ता, साख बैंक, सूक्ष्म वित्त संस्थाएं, बैंक, नाबार्ड प्रशिक्षण इकाई	
10.	एडीएफ	2002-03	समान आदिवासी विकास परियोजनाओं को समर्थन	जनजातीय परिवार	3.4
11.	टीडीएफ	2004	एकीकृत जनजातीय विकास	जनजातीय आबादी	574.98
12.	एफआईपीएफ	2005	कृषि एवं संबद्ध क्षेत्र का प्रोन्नयन	किसान/नवाचारी	50.00
13.	आरआईएफ	2005	ग्रामीण क्षेत्रों में आजीविका के अवसरों और रोज़गार सृजन के उद्देश्य से कृषि/गैर-कृषि/ सूक्ष्म वित्त नवाचारों को समर्थन	किसान/कारीगर/स्वसहायता समूह सदस्य	89.28
14.	आरपीएफ	2005	ग्रामीण गैर-कृषि क्षेत्र की गतिविधियों को प्रोत्साहन	वित्तीय संगठन/स्वयंसेवी संगठन	7.25
15.	एफआईएफ	2007	पिछड़े क्षेत्रों के कमज़ोर तबकों के लिए विकासपरक गतिविधियों को समर्थन देने हेतु वित्तिय निवेश सुनिश्चित करना	सूक्ष्म वित्तीय संस्थाएं, वित्तीय समितियां, प्रशिक्षण अनुसंधान संगठन आदि	34.08
16.	एफआईटीएफ	2007	वित्तिय संस्थाओं के प्रवर्धन के लिए सूचना-संचार गतिविधियां बढ़ाना	–वही–	48.37
17.	एफटीटीएफ	2008	किसानों को प्रौद्योगिकी प्रदान करना	कृषक समुदाय	50.00

पर बीज पैदा करने और अच्छी गुणवत्ता वाले बीज उपलब्ध कराने के उद्देश्य से किसानों में वितरण और अच्छे किस्म के बीज स्थानीय आधार पर किसानों के ही नियंत्रण में होने चाहिए। इससे बीजों की लागत कम होगी और ख़र्च हुए बीजों की बेहतर भरपाई हो सकेगी तथा ढुलाई का ख़र्चा भी बचेगा। किसानों को 90 प्रतिशत की अंकुरण दर वाला अच्छे किस्म का बीज मांगना चाहिए।

– किसानों की सहायता के लिए संस्था निर्माण

- **लीड बैंक योजना, 1970**

अब इसकी समीक्षा करने की ज़रूरत है वर्ष 2010 में इस योजना में संशोधन करने की रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया की कोशिशों के बावजूद ज़मीनी हक़ीक़त स्तर वाली योजनाएं पूरी होने में संदेह है। साथ ही, सभी किसानों के लिए 5 वर्षों के फ़सल चक्र वाली वित्तीय समावेशन योजनाएं लागू की जानी चाहिए। ग्रामीण रोज़गार और ख़ासतौर से कृषि प्रसंस्करण, कृषि से इतर अन्य गतिविधियां, जिनमें ग्रामीण युवा वर्ग को रोज़गार मिल सके, प्राथमिकता के आधार पर शुरू की जानी चाहिए। ग्रामीण विकास मंत्रालय के राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन में नाबार्ड और रिज़र्व बैंक सहित सभी बैंकों को सहयोग देना चाहिए।

- **किसान क्लब एसोसिएशन और संयुक्त देनदारी समूह**

विभिन्न बैंकों की सहायता से नाबार्ड ने 55 हज़ार से ज्यादा किसान क्लब शुरू किए हैं जिनसे 587 ज़िलों के 1.05 लाख किसानों को लाभ पहुंचा है। इस योजना के जरिये वर्ष 2012 तक एक लाख किसान क्लबों का लक्ष्य निर्धारित किया गया था। इन क्लबों के जरिये प्रौद्योगिकी अपनाने का कार्यक्रम लागू करना सुनिश्चित किया जाता है। ऋण संबंधी काउंसलिंग और विपणन की नीतियां भी लागू की जाती हैं। साथ ही उन्हें अन्य राज्यों के किसानों के खेत देखने, प्रशिक्षण, स्वसहायता समूहों को बैंक/विश्वविद्यालयों आदि से संपर्क करवाने और बाज़ार की प्रवृत्तियों की जानकारी दी जाती है जिससे ऋण वसूली, संयुक्त देनदारी समूह गठित करने आदि में मदद मिलती है। किसान संघों को इसलिए भी प्रश्रय दिया जा रहा है क्योंकि वे उत्पाद श्रेणीकरण, कास्टिंग, पैकेजिंग और ढुलाई में सुकरकर्ताओं की महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इससे किसान अपनी वित्तीय क्षमता बढ़ा सकेंगे और वे लाभ प्राप्त कर सकेंगे जो अभी बिचौलिए हथिया लेते हैं।

- **किसानों के लिए आईसीटी**

नयी प्रौद्योगिकी अपनाने से ठीक समय पर और सही-सही ज़रूरी आंकड़े मिल जाते हैं। ये आंकड़े वित्त, विपणन और तक़नीकी हो सकते हैं। इसके कारण उत्पादकता में काफी वृद्धि होती है और किसानों की आमदनी बढ़ती है। इस प्रकार के जो उपाय सफल रहे हैं, उनमें से कुछ निम्नलिखित हैं :

- ई-सागू हैदराबाद, आंध्र प्रदेश : कपास की फ़सल संबंधी छानबीन के लिए।
- ई-कुटीर (नयागढ़, ओडीसा)- समग्र कृषि निवेशी सलाहकार विपणन आंकड़े और ऋण सुविधाओं के लिए।
- ई-चौपाल (मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ आदि) बाज़ार मूल्य और दरों के लिए।
- रायटर्स लाइट महाराष्ट्र - फसलों के लिए मौसम और बाज़ार संबंधी आंकड़े।

- **उत्पादक कंपनियां**

उत्पादक कंपनियों की अवधारणा की शुरुआत जाने-माने अर्थशास्त्री डॉ. वाई. के अलघ की सिफ़ारिशों के आधार पर कंपनी अधिनियम, 1956 में एक नया खंड 9-ए जोड़कर किया गया था। यह क़दम सहकारी समितियों को मिलाकर और मौजूदा सहकारी समितियों को कंपनियों में बदलने के लिए एक कानून बनाए जाने के लिए उठाया गया ताकि कंपनियों के लिए नियामक तंत्र के अंतर्गत सहकारिताओं के विशेष गुण व्यापारिक मॉडल में अपनाए जा सकें।

निष्कर्ष

खाद्य सुरक्षा एवं ग़रीबी शमन

भारत में जब से योजनाबद्ध तरीक़े से विकास की शुरुआत हुई है तभी से खाद्य सुरक्षा एक प्रमुख उद्देश्य रहा है। भारत ने वर्ष 1970 में अनाज उत्पादन में आत्मनिर्भरता प्राप्त कर ली थी और तब से इसे लगातार बनाए हुए है। हाल के वर्षों में परिवार स्तर पर खाद्य सुरक्षा देने और प्रतिव्यक्ति खाद्य ऊर्जा ग्रहण करने का नीतिगत उद्देश्य अपनाया गया और इसके लिए खाद्य सुरक्षा का उपाय इस्तेमाल किया गया। वर्ष 2010 में तेंदुलकर समिति की रिपोर्ट आने के बाद यह दृष्टिकोण बदल दिया गया। तब से सरकार कई प्रकार के पोषक कार्यक्रम चला रही है जिनका उद्देश्य परिवार और व्यक्तिस्तर पर खाद्य सुरक्षा का लक्ष्य प्राप्त करना है। इसके लिए अनाज और इसके उत्पाद सार्वजनिक वितरण व्यवस्था के जरिये उपलब्ध कराए जाते हैं और इन्हें उचित दर दुकानों से निर्धारित क़ीमत पर बेचा जाता है। काम के बदले अनाज और कई ऐसे ही अन्य रोज़गारपरक कार्यक्रम शुरू किए गए हैं। सरकार ने एक और ऐसा ही कार्यक्रम शुरू किया है जिसका सीधा लक्ष्य महिलाएं और बच्चे हैं। इसमें स्कूली बच्चों के लिए दोपहर का भोजन कार्यक्रम और गर्भवती महिलाओं तथा बच्चों के लिए पूरक पोषण कार्यक्रम शामिल हैं।

भारत अपनी बढ़ती हुई आबादी से उत्पन्न खाद्य सुरक्षा की चुनौती से कुछ हद तक निपटने में समर्थ हुआ है। 1960 के दशक के मध्य में खाद्य सुरक्षा बहुत ख़तरनाक स्थिति में पहुंच गई थी जिसके कारण हरित क्रांति की शुरुआत करनी पड़ी और जिससे खाद्य निर्भरता प्राप्त हुई। वर्ष 1970 के मध्य तक इसके परिणामस्वरूप अनाज का भंडार बढ़ गया। अब इस प्रकार की अनाज की कमी की स्थिति देश में नहीं है। पिछले तीन दशकों से अनाज उत्पादन में वृद्धि आबादी की वृद्धि से ज्यादा हो रही है। लेकिन अब लोगों की जीवनशैली में शारीरिक परिश्रम की कमी आने और समृद्धि के चलते खाने-पीने की आदतों में बदलाव के कारण खाद्य सुरक्षा की समस्या बनी हुई है। अब ज़रूरत इस बात की है कि अन्न भंडारों में काफी मात्रा में अतिरिक्त अनाज रखा जाए।

अब अनेक प्रकार की क़ीमती वस्तुओं और सेवाओं का प्रचलन हो गया है जिन्हें तैयार करने में प्राकृतिक संसाधन ख़र्च हो रहे हैं लेकिन जो हमारे जीवन और समृद्धि के लिए ज़रूरी बन गए हैं। इन्हें कृषि संकट के मूल कारणों में से एक माना गया है।

कृषि उत्पादकता में सतत वृद्धि के लिए ज़रूरी प्राकृतिक संसाधन और पर्यावरण संबंधी बुनियादी चीज़ें खेती की उत्पादकता के लिए ज़रूरी हैं लेकिन उनका तेज़ी से क्षय हो रहा है। तेज़ आर्थिक-सामाजिक दबाव, जलवायु परिवर्तन, मानसून के अनिश्चय और बार-बार आने वाली बाढ़ और पड़ने वाले सूखे, समुद्री स्तर में वृद्धि और धरती का तापमान बढ़ने के कारण परिवर्तन सामने आ रहे हैं। कार्बन और ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन के परिणामस्वरूप धरती का तापमान बढ़ रहा है और इसका असर खेती पर पड़ रहा है। अगर कृषि विकास को सतत आधार पर जारी रखना है तो इन समस्याओं से निपटने पर भी ध्यान देना होगा। ❑

(लेखक नाबार्ड के प्रबंध निदेशक हैं।

ई-मेल : md@nabard.org)

संघ लोक सेवा आयोग प्रारम्भिक परीक्षा

सिविल सर्विसेज एप्टीट्यूड टेस्ट, 2011

संशोधित पाठ्यक्रम पर आधारित

CSAT

Civil Services Aptitude Test

प्रथम प्रश्न–पत्र

847	इतिहास : भारत एवं विश्व	185/-
849	भारतीय राजव्यवस्था एवं संविधान	225/-
850	भूगोल : विश्व एवं भारत	195/-
851	भारतीय अर्थव्यवस्था	160/-
853	सामान्य विज्ञान	300/-
172	भारतीय कला एवं संस्कृति	85/-
968	Indian Polity	250/-
A353	The Constitution of India	95/-
	समसामयिक घटनाएं [पढ़ें प्रतियोगिता साहित्य (करेन्ट अफेयर्स) मासिक पत्रिका]	20/-

द्वितीय प्रश्न–पत्र

497	वस्तुनिष्ठ हिन्दी	100/-
852	सामान्य मानसिक योग्यता	80/-
766	सामान्य बुद्धि एवं तर्कशक्ति परीक्षण	240/-
A723	तर्कशक्ति परीक्षण	135/-
A939	सामान्य बुद्धि एवं तर्क परीक्षण	145/-
A568	TRICKY MATHEMATICS (हिन्दी संस्करण)	250/-
A635	Quantitative Aptitude	140/-
A647	General Intelligence & Test of Reasoning (Verbal & Non-Verbal)	180/-
A655	General Mental Ability & Reasoning (Verbal & Non-Verbal)	100/-
A676	Test of Reasoning and Numerical Ability	110/-
960	Objective English	90/-
A765	TRICKY MATHEMATICS (English Edn.)	200/-

प्रतियोगिता साहित्य सीरीज

☎ 089585 00222 www.psagra.in

YH-1/11/8

कृषि की अभिवृद्धि हेतु तीन विचार

● अशोक गुलाटी
कावेरी गांगुली

कृषि क्षेत्र में नवाचार के प्रोत्साहन हेतु तीन 'आई' यथा– इंवेस्टमेंट, इंस्टीट्यूशन्स और इंसेंटिव्स में सुधार निर्णायक होगा

1. कृषि में और अधिक निवेश

भारतीय नीति-निर्माताओं और नियोजकों को इस बात का भलीभांति अहसास है कि समावेशी विकास को सार्थक बनाने के लिए कृषि में 4 प्रतिशत की विकासदर कितना महत्वपूर्ण है। यह बात भी महसूस की गई है कि इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सरकारी और निजी, दोनों क्षेत्रों द्वारा भारी निवेश की आवश्यकता होगी। इसे दृष्टिगत रखते हुए, सार्वजनिक क्षेत्र द्वारा 2003-04 से कृषि क्षेत्र में पहले से कहीं अधिक बजटीय संसाधनों का आवंटन किया जा रहा है। सार्वजनिक लेखे में कृषि में सकल पूंजी विन्यास (जीसीएफए) में तेज़ी से हुई वृद्धि से यह तथ्य भलीभांति स्पष्ट होता है। निजी क्षेत्र में कृषि में पूंजी विन्यास, सार्वजनिक क्षेत्र की तुलना में लगभग तीन गुना अधिक है। इसमें यह बढ़त 1999-2000 से आनी शुरू हुई। फलस्वरूप, सन् 2000 के अंतिम महीनों में स्थिर मूल्य के अनुसार सकल जीसीएफए 1990 के दशक के मध्य की स्थिति की तुलना में दो या तीन गुना अधिक हो चुकी थी (चित्र-1)। कृषि जीडीपी के प्रतिशत के रूप में भी, जीसीएफए पिछले एक दशक में दोगुने से भी अधिक बढ़ चुका है (चित्र-1)। बावजूद इसके, कृषि की सकल घरेलू उत्पाद दर में कोई ख़ास तेज़ी नहीं आई है (तालिका-1)। और, यदि कुछ हुआ भी है तो वर्ष 2000-01 से 2009-10 तक की वास्तविक विकासदर (औसत वार्षिक अथवा प्रवृत्ति विकास) 1992-93 से 1999-2000 अथवा 1980-81 से 1991-92 के सुधार पूर्व काल के दौरान हासिल विकास से कुछ कमतर ही रही है (तालिका-1)।

इस प्रकार के प्राय: अप्रत्याशित परिणाम, यानी कृषि में बढ़ते निवेश और पूंजी विन्यास के बावजूद कृषि के विकासदर पर स्थिर बने रहना या फिर उसमें गिरावट आना, हैरान करने वाली बात है। यह तभी हो सकता है जब यह मानकर चला जाए कि पूंजी की समग्र उत्पादकता काफी गिर चुकी है या फिर पूंजी विन्यास के आंकड़े महज़ कागज़ी हैं और ज़मीन पर उनका सही-सही अवतरण नहीं हो रहा है। यानी सार्वजनिक पूंजी विन्यास सही ढंग से नहीं हो रहा है और उसमें कहीं कोई गड़बड़ी हो रही है, अथवा ख़र्च की गई राशि के रूप में दर्शाए गए पूंजी विन्यास (यथा– बांध, जलाशय, नहरें आदि) और उससे मिलने वाले लाभ के बीच लंबा अंतराल है। या फिर जलवायु परिवर्तन के कारण कृषि के सामने आने वाली चुनौतियों, भूगर्भीय जल का गिरता स्तर अथवा भूमि

चित्र-1

सार्वजनिक और निजी लेखे में सकल पूंजी विन्यास

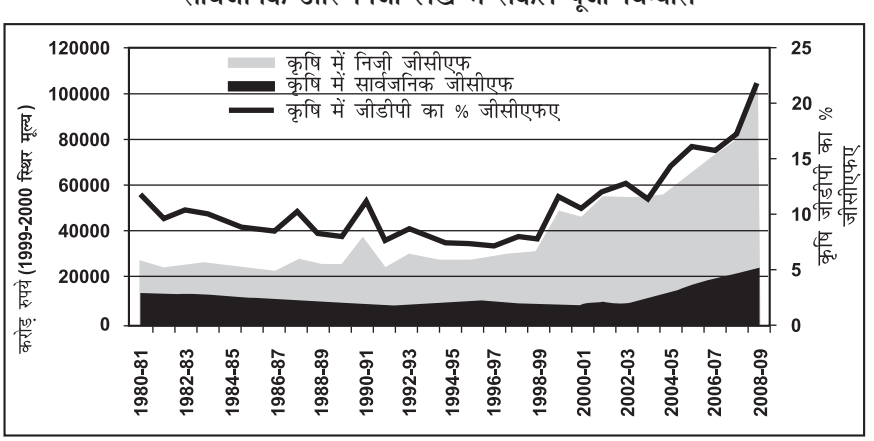

स्रोत : राष्ट्रीय लेखा सांख्यिकी, के.सां.सं, भारत सरकार

विकृति (मिट्टी की ऊपरी उपजाऊ परत का ह्रास आदि) इतनी अधिक बढ़ गई है कि कृषि में अधिक निवेश के बावजूद कृषि की विकास दर 3 प्रतिशत से अधिक नहीं बढ़ पा रही है। हो सकता है, यह इन सब कारकों के मिले-जुले प्रभाव के कारण हो रहा हो। इस पहेली को सुलझाने के लिए और अधिक शोध की आवश्यकता है।

तालिका-1

भारत में कृषि और समग्र जीडीपी निष्पादन

	कृषि जीडीपी	कुल जीडीपी
वार्षिक औसत विकास दर एवं सीवी		
1980/81 से 1991/02	3.8(1.5)	5.2(0.5)
1992/93 से 1999/00	3.8(1.1)	6.3(0.2)
2000/01 से 2009/10	2.4(1.9)	7.2(0.3)
प्रवृत्ति विकास दर		
1980/81 से 1991/92	3.0	5.1
1992/93 से 1999/00	3.2	6.3
2000/01 से 2009/10	2.9	7.6

स्रोत : *राष्ट्रीय लेखा सांख्यिकी, के.सां.सं., भारत सरकार*

नोट : *सीवी का अर्थ है परिवर्तन गुणांक*

यहां यह ग़ौर करने की बात है कि समग्र आर्थिक विकास के तरीक़े के विपरीत, भारत में कृषि क्षेत्र का निष्पादन काफी उतार-चढ़ावभरा है। परिवर्तन का गुणांक (सीवी) सन् 2000-01 से 2009-10 के बीच जहां 1.9 था, वहीं 1992-93 से 1999-2000 के बीच यह 1.1 था। देश के सकल घरेलू उत्पाद के सीवी की तुलना में यह गुणांक प्रायः 6 गुना अधिक है (तालिका-1), जिससे यह संकेत मिलता है कि ऊंची और संभवतः बढ़ती परिवर्तनशीलता कृषि के लिए वास्तव में एक चुनौती है। जलवायु परिवर्तन के कारण भविष्य में उसमें और भी वृद्धि होने की संभावना है। अनुमान पर आधारित परिकल्पना के अनुसार यदि ऐसा हुआ है, तो 2009-10 में कृषि की विकास दर में लगभग शून्य प्रतिशत की वृद्धि, 1972-73 के बाद पड़े सबसे भीषण सूखे को देखते हुए, सराहनीय उपलब्धि मानी जानी चाहिए। कहा जा सकता है कि कृषि क्षेत्र में हुआ निवेश निराशाजनक परिणाम देने वाला नहीं रहा। तात्पर्य यह है कि विकास में निवेश का उचित विश्लेषण करने के लिए, सर्वप्रथम, मौसम के प्रभाव के बारे में विचार करना होगा। हमारा इरादा इस समय ऐसा करने का नहीं है, परंतु हम इसे उन शोधकर्ताओं और नीति-निर्माताओं के विचारार्थ छोड़ देते हैं जो कृषि के विकास में कमी को लेकर चिंतित हैं।

भारतीय कृषि की विकास गाथा की एक अन्य विशेषता यह है कि विभिन्न राज्यों और उपक्षेत्रीय स्तर पर इसके निष्पादन में काफी भिन्नता रही है। सन् 2000-01 से 2008-09 की अवधि में गुजरात में कृषि की विकास दर 10.2 प्रतिशत रही तो बिहार में 4.2 प्रतिशत, उत्तर प्रदेश में 2.2 प्रतिशत और पश्चिम बंगाल में 2.4 प्रतिशत रही। कृषि उत्पादों की पैदावार के दृष्टिकोण से देखा जाए तो उच्च मूल्य वर्ग के उत्पाद (फल और सब्ज़ियां, पशुधन और मत्स्यपालन) के मामले में, पारंपरिक फ़सलों की तुलना में अधिक तेज़ी से वृद्धि हुई है। इसमें वृद्धि की अभी और भी अधिक संभावनाएं हैं। कृषि उत्पादन के सकल मूल्य में उच्च मूल्य वाले उत्पादों के बढ़ते अंश को देखते हुए (टीई 2008-09 में 48.4 प्रतिशत), यह संभावना और बलवती होती जा रही है कि यह क्षेत्र आने वाले समय में कृषि के विकास को और अधिक गति प्रदान करेगा। परंतु इस वर्ग में शामिल प्रायः सभी उत्पादों के शीघ्र ही नष्ट हो जाने की प्रकृति को देखते हुए इनके उत्पादक क्षेत्रों अर्थात खेतों (बागानों) और प्रसंस्करण संयंत्रों एवं विक्रय केंद्रों के बीच बेहतर और त्वरित संपर्क की आवश्यकता है। यद्यपि कृषि-प्रणाली में संरचनात्मक परिवर्तन का दौर जारी है, तथापि भारत में कृषि के विविधीकरण को गति देने के लिए बेहतर नीति संप्रेषण और सुधारों की आवश्यकता है।

2. खेत-कारखानों के बेहतर संपर्क हेतु संस्थागत सुधार

कृषि-प्रणाली में जारी अनेक नियंत्रणों से संबंधित संस्थाओं के अनुसार से इस क्षेत्र में सुखद परिवर्तन आने की संभावनाएं हैं। इसके लिए आवश्यक वस्तु अधिनियम के अंतर्गत चावल और चीनी जैसे जिन्सों की अनिवार्य लेवी प्रणाली (चावल के मामले में पंजाब और हरियाणा जैसे राज्यों में 75 प्रतिशत तक की लेवी ली जाती है), जिन्सों की आवाजाही, क्षेत्रीकरण और भंडारण प्रतिबंधों को समाप्त करना होगा और प्राथमिक कृषि उत्पादों पर करारोपण की प्रणाली के स्थान पर मूल्य संवर्धित कर प्रणाली अपनानी होगी। यह ज़रूरी है कि एक एकीकृत बाज़ार तैयार किया जाए, जिसमें सरकारी और निजी क्षेत्र दोनों को समान अवसर उपलब्ध हों। कृषि उत्पाद विपणन समिति अधिनियम पर लंबे समय से चर्चा हो रही है। निजी क्षेत्र की भागीदारी को बढ़ावा देने और संविदा कृषि व्यवस्था के माध्यम से खेतों और कारखानों के बीच सीधा संपर्क स्थापित करने के इरादे से केंद्र ने 2003 में राज्यों से भी इसी आदर्श अधिनियम का अनुकरण करते हुए अपने-अपने कानूनों में संशोधन की सलाह दी थी। हालांकि अनेक राज्यों का दावा है कि उन्होंने अपने कानूनों को संशोधित कर दिया है, परंतु यह सब आधा-अधूरा ही है। ज़मीनी यथार्थ कुछ और ही है और इसके संपूर्ण मूल्यांकन और परीक्षण की अति आवश्यकता है। आवश्यकता इस बात की है कि नष्टप्राय जिन्सों की उभरती मूल्यशृंखला को प्रोत्साहित किया जाए और उसमें निवेश बढ़ाया जाए ताकि इन उत्पादों की बरबादी को रोका जा सके और मूल्य शृंखला का मूल्य संवर्धन हो सके। खेत-कारखानों के सीधे संपर्कों को सुदृढ़ बनाकर, मूल्यशृंखला को सीमित कर लघु एवं सीमांत किसानों को बाज़ार के और नज़दीक लाया जा सकता है। समावेशी विकास के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए यह बहुत महत्वपूर्ण है।

वायदा बाज़ार, भंडार गृह रसीद प्रणाली, उभरते बाज़ार का लाभ उठाने के लिए सूचना प्रौद्योगिकी के उपयोग से उत्पादकों को सशक्त बनाना और यहां तक कि उत्पादक कंपनियों को बड़े प्रसंस्करण और विक्रय कंपनियों से सीधे संपर्क बनाने के लिए प्रोत्साहित करने जैसे मुद्दों पर अभी भी विवाद चल रहा है। यदि हमें सही बाज़ार की तलाश है तो हमें सुधारों के समूचे पैकेज़ पर काम करना होगा और उसे दुरुस्त करना होगा।

यह समय पट्टे पर ज़मीन देने के बाज़ार को भी मुक्त कर देने का है। पट्टे पर ज़मीन देने की

प्रणाली जीवंत हो तो उसमें भी बड़े पैमाने पर निवेश हो सकता है, विशेषकर निजी क्षेत्र से। इससे बाज़ार प्रेरित जोतों की चकबंदी का रास्ता भी साफ़ हो सकता है और इस प्रकार जो किफ़ायत होगी, उसका भी लाभ मिलेगा। परंतु इस कार्य को इस प्रकार संपन्न करने के लिए कि पट्टे पर ज़मीन देने वाले लोग उसे दूसरे किसानों अथवा कंपनियों को देते समय (पट्टे पर) सुरक्षित महसूस करें, भू-अभिलेखों का कंप्यूटरीकरण आवश्यक है, ताकि इसकी पारदर्शिता और विश्वसनीयता सुनिश्चित की जा सके। इस समय जो सरकारी आंकड़े हैं उनसे पता चलता है कि केवल 7 प्रतिशत ज़मीने पट्टे पर दी गई है। परंतु विभिन्न राज्यों का बारीकी से अध्ययन करने से पता चलता है कि 20 प्रतिशत ज़मीन को अनौपचारिक रूप से पट्टे पर दिया जा चुका है। किरायेदारी के अनौपचारिक करारों में सीमित मात्रा में ही ऋण मिल पाता है और वह भी काफी ऊंची दरों पर और इस प्रकार ज़मीन को अधिक उत्पादनशील बनाने के लिए जितने निवेश की आवश्यकता होती है, वह नहीं मिल पाता। छोटे-छोटे टुकड़ों में खेती करने की चुनौतियों से निपटने के लिए पट्टे पर ज़मीन देने के बाज़ार में भी सुधारों की आवश्यकता है ताकि इस उद्योग को चाक-चौबंद बनाया जा सके। लगभग 88 प्रतिशत जोत दो एकड़ से कम वाले हैं (क्षेत्र के लगभग 44 प्रतिशत में)। इस स्थिति में उभरती मूल्य शृंखला से जुड़ी किसी भी बड़ी प्रसंस्करण अथवा विक्रेता कंपनी के लिए अपने उत्पादकों का संग्रहण और मानकीकरण एक बड़ी चुनौती बन जाती है। पट्टे पर ज़मीन देने के बाज़ार को बंधनों से मुक्त करने से इस चुनौती से काफी हद तक निपटा जा सकता है।

कृषि ऋण बाज़ार में भी भारी सुधार और परिवर्तन की आवश्यकता है। कर्ज़माफी से समस्या का हल स्थायी तौर पर नहीं निकाला जा सकता। सभी कृषक परिवारों की लगभग 42.4 प्रतिशत और दो एकड़ ज़मीन वाले किसान परिवारों के क़रीब 50 प्रतिशत लोग ग़ैर-संस्थागत स्रोतों से ऊंची ब्याज दरों पर कर्ज़ लेते हैं। केंद्रीय वित्त मंत्रालय द्वारा गठित कृषि ऋणग्रस्तता पर विशेषज्ञ समूह की रिपोर्ट से इस तथ्य का खुलासा हो जाता है। कुल बैंक ऋणों की 18 प्रतिशत राशि कृषि के लिए देने के लक्ष्य को पूरा करने में बैंक विफल रहे हैं, हालांकि इसे प्राथमिकता वाला क्षेत्र माना जाता है। सूक्ष्म वित्त संस्थाओं का प्रवेश इस क्षेत्र में हाल ही में हुआ है, परंतु उनकी ब्याज़ दरें भी काफी अधिक हैं और कहीं-कहीं तो ये दरें सूदखोर महाजनों के जैसी हैं। औपचारिक क्षेत्र को नियमित करने और किसानों के लिए उसे और अधिक सुलभ बनाने से अनौपचारिक क्षेत्र पर किसानों की निर्भरता कम की जा सकती है।

3. प्रोत्साहन : संसाधन-उपयोग में किफ़ायत के लिए अनुदानों को युक्तिसंगत बनाना और निवेश बढ़ाना

संसाधन सामग्री और उत्पादन के लिए दिए जाने वाले अनुदानों को युक्तिसंगत बनाए जाने से संसाधनों के बेहतर उपयोग की संभावना का रास्ता खुलेगा और कृषि में निवेश को गति मिलेगी। वर्ष 2009-10 में खाद्यान्न, उर्वरक, विद्युत और सिंचाई के लिए दी जाने वाली सब्सिडी कृषि के सकल उत्पाद दर के 15.1 प्रतिशत के बराबर थी जबकि 1995-96 में यह दर 7.8 प्रतिशत ही थी। वर्तमान रूप में अपना महत्व खो चुके इन अनुदानों को युक्तिसंगत बनाने का समय अब आ गया है। सिंचाई अनुदानों को युक्तिसंगत बनाने और जल उपयोगकर्ता संघों अथवा एकीकृत जल प्रबंधन प्रणालियों के माध्यम से संसाधनों के किफ़ायती उपयोग को बढ़ावा देने की आवश्यकता है। मुफ्त बिजली देने के बजाय कृषि उपयोग के लिए अलग से फीडर लाइनें मुहैया कराना आर्थिक रूप से अधिक फायदेमंद हो सकता है। गुजरात के ज्योतिग्राम प्रयोग से यह बात सिद्ध भी हो जाती है। जहां तक संभव हो, उर्वरकों, बिजली, बीज, कृषि यंत्रों आदि पर दी जाने वाली सब्सिडी किसानों को सीधे दी जानी चाहिए, विशेषकर छोटी जोत वाले और अलाभदायक क्षेत्र के किसानों को। इससे किसानों की आय में वृद्धि के लिए काफी मदद मिलेगी और इससे उन्हें संसाधनों के किफ़ायती उपयोग के लिए प्रोत्साहन भी मिलेगा। ग्रामीण क्षेत्रों में बुनियादी ढांचे, सड़कों, बाज़ारों, शीत शृंखला (शीत-भंडारों की शृंखला), प्रसंस्करण इकाइयों और कृषि संबंधी अनुसंधान एवं विकास में निवेश बढ़ाना कृषि के उच्चतर विकास के लिए महत्वपूर्ण है। सड़कों, कृषि (अनुसंधान एवं विकास) आदि में सार्वजनिक निवेश पर आंशिक लाभ उर्वरक सब्सिडी अथवा मुफ़्त बिजली की तुलना में कहीं अधिक होता है। सड़कें, बाज़ार और अन्य ढांचागत सुविधाओं जैसी जनसाधारण के उपयोग वाले क्षेत्र में सरकार को ही निवेश करना चाहिए। मूल्य शृंखला, प्रौद्योगिकी आदि से संबंधित मामलों में निजी क्षेत्र से निवेश होगा।

कृषि क्षेत्र में नवाचार को प्रोत्साहित करने के लिए तीन 'आई' यथा– इंवेस्टमेंट (निवेश), इंस्टीट्यूशन्स (संस्थाएं) और इंसेंटिव (प्रोत्साहन) की भूमिका काफी महत्वपूर्ण और निर्णायक होगी। जैसाकि 1960 और 1970 के दशक में हरित क्रांति के दौरान देखा जा चुका है, उत्पादकता में सुधार और प्रमुख उपलब्धियां हासिल करने में प्रौद्योगिकी ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। कपास और संकर मक्का के उत्पादन में 2000 के दशक में आई क्रांति को अन्य क्षेत्रों में भी दोहराया जा सकता है। बागवानी, उद्यानिकी अथवा पशु पालन क्षेत्र में इसी प्रकार का प्रौद्योगिकीय अथवा विपणन नवाचार इन क्षेत्रों से संबद्ध तमाम छोटे किसानों के लिए लाभदायक हो सकता है। किसानों को बाज़ार से सीधे जोड़ने के लिए मूल्य शृंखलाओं में नवाचार ताकि उनका मूल्य संवर्धन हो सके, उच्च विकास दर और छोटे किसानों की आय में वृद्धि की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। अनेक निजी उद्यमी हैं जो अब संगठित प्रसंस्करण, खुदरा व्यापार और कृषि सामग्री/सेवा क्षेत्रों में प्रवेश कर चुके हैं और वे अपना निवेश बढ़ाने की क्षमता भी रखते हैं। परंतु व्यापार में संस्थागत अवरोध और रुको-बढ़ो के नीतिगत दृष्टिकोण के कारण इस क्षेत्र में तेज़ी नहीं आ पा रही है।

यह पूर्णतः स्पष्ट है कि भारतीय कृषि मांग के अनुसार आगे बढ़ती रहेगी और विकास के भावी स्रोत उच्च मूल्य क्षेत्र में निहित हैं। अतएव उचित सुधारों की शुरुआत महत्वपूर्ण होगी। दीर्घावधि में उच्च और स्थायी विकास को सुनिश्चित करने के लिए सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों में समन्वयन की महती भूमिका रहेगी। यह सब उपलब्ध कराने का उत्तरदायित्व केवल सार्वजनिक क्षेत्र का ही नहीं है। उसका दायित्व तो केवल ऐसा अनुकूल वातावरण प्रदान करना है जोकि कृषि की उच्च विकासदर के लिए निर्णायक दोनों क्षेत्रों- सार्वजनिक और निजी की सहभागिता को सुदृढ़ रूप दे सके। ❑

(लेखकद्वय अंतरराष्ट्रीय खाद्य नीति अनुसंधान संस्थान में क्रमशः एशिया में निदेशक और वरिष्ठ अनुसंधान विश्लेषक हैं।

ई-मेल : a.gulati@cgiar.org
k.ganguly@cagiar.org)

निर्माण IAS

Give the best ... Take the best

हिन्दी माध्यम का सर्वश्रेष्ठ संस्थान

by कमल देव (K.D.)

सफलता का पर्याय

Why Nirman IAS is the Best ? इतिहास और सामान्य अध्ययन में सर्वाधिक सफल अभ्यर्थी

सफलता का सफर

SAROJ KUMAR
CSE - 07

BHANU CHAND
CSE - 08

JAI PRAKASH
CSE - 09

SADANAND KUMAR
बिहार प्रशासनिक सेवा में प्रथम स्थान प्राप्त

के साथ टॉप 10 में 6 और अन्य 50 सफल अभ्यर्थी

APTITUDE TEST (2011) हेतु सम्यक रणनीति के साथ

ARVIND PANDEY

मेरी सफलता में कमलदेव सर का मार्गदर्शन निर्णायक रहा। संघर्ष के कठिन दिनों में सर की सकारात्मक प्रेरणा से मैं निरन्तर ऊर्जावान बना रहा। उत्तर-लेखन में सुधार तथा साक्षात्कार में सर के मित्रवत् सहयोग ने एक उत्प्रेरक का कार्य किया। निश्चय ही सामान्य-अध्ययन पढ़ाने में निर्माण टीम का कोई विकल्प नहीं।

KARAMVEER SHARMA

निर्माण IAS के श्री कमलदेव सर का मेरी सफलता अच्छा योगदान रहा है। इनके पढ़ाने की पद्धति प्रभावशाली है। ये सामान्य अध्ययन को सरल एवं सुबोध ढंग से ही नहीं पढ़ाते बल्कि बदलते परीक्षा पैटर्न के अनुसार अपनी रणनीति में भी परिवर्तन करते हैं सर जिस प्रकार इतिहास से इतिहास बोध के साथ पढ़ाते हैं उसी प्रकार साक्षात्कार में वे विद्यार्थी के सम्पूर्ण व्यक्तित्व के विकास का प्रयत्न करते हैं।

कर्मवीर शर्मा
IAS 2009
AIR - 28th

कक्षाएँ उपलब्ध

सामान्य अध्ययन

इतिहास

राजनीति शास्त्र

CSAT

12 Mall Road, Hudson Line, Kingsway Camp, Delhi - 9

Ph. : 9990765484, 9891327521, 47058219

YH-1/11/5

भारत में खेती की समस्याएं

● सुभाष शर्मा

महात्मा गांधी ने बहुत पहले कहा था "भारत की आत्मा गांवों में बसती है।" तत्पश्चात स्वतंत्रता की प्राप्ति के समय भारत के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने खेती की उपादेयता एवं तात्कालिकता को इंगित करते हुए स्पष्ट कहा था, "दूसरी हर चीज़ इंतज़ार कर सकती है, मगर खेती नहीं।" सो उन्होंने पंचवर्षीय योजनाएं शुरू की मगर खेती पर राष्ट्रीय बजट में हिस्सा कम से कमतर होता गया। उनके बाद दूसरे प्रधानमंत्री लालबहादुर शास्त्री ने 'जय जवान, जय किसान' का नारा देकर किसानों की नीतियों को केंद्र में लाने की कोशिश की। मगर अफ़सोस कि यह भी सिर्फ नारा ही बनकर रह गया। जो किसान कड़ी धूप, मूसलाधार बारिश-सूखे की मार सहकर भारत के 115 करोड़ लोगों को अन्न देते हैं, उन्हें कभी कोई राष्ट्रीय नागरिक सम्मान नहीं मिला। स्वतंत्रता प्राप्ति के साढ़े छह दशकों के बावजूद जिन किसानों को अपने परिवार के सदस्यों से गैर-कृषि आय से सहायता नहीं मिलती, वे भारी मुसीबत में हैं। वे धीरे-धीरे किसान से भूमिहीन मज़दूर बनने को अभिशप्त हैं। इनके लिए राष्ट्रीय कृषि नीति, 2002 घोषित की गई जिसमें कई ख़ामियां थीं। अत: कृषि मंत्रालय भारत सरकार के संकल्प दिनांक 18 नवंबर, 2004 के द्वारा प्रसिद्ध कृषि वैज्ञानिक प्रो. एम. एस. स्वामीनाथन की अध्यक्षता में राष्ट्रीय किसान आयोग का गठन किया गया। इसमें दो पूर्णकालिक सदस्यों के अलावा चार अंशकालिक सदस्य एवं एक सदस्य-सचिव थे। भारत में खेती और उस पर निर्भर किसानों की समस्याओं का सांगोपांग विश्लेषण राष्ट्रीय किसान आयोग की विभिन्न रिपोर्टों में किया गया है। अस्तु, भारत में खेती और किसानों की समस्याओं एवं उनके निराकरण के उपायों पर प्रकाश डाला जा रहा है।

यहां सबसे पहले हम चर्चा करेंगे कि वर्तमान में भारत में खेती की क्या-क्या विशेषताएं, समस्याएं और खामियां मौजूद हैं। इसकी पहली विशेषता यह है कि कृषि एवं अनुषंगी उत्पादों में भारत का स्थान पूरे विश्व में दूसरा है। मगर कृषि का सकल घरेलू उत्पाद में अब मात्र 16.6 प्रतिशत (2007) हिस्सा है जबकि संपूर्ण कार्यबल का 52 प्रतिशत कृषि में नियोजित है। इस प्रकार इसकी प्रतिव्यक्ति एवं प्रतिएकड़ उत्पादकता बहुत कम है। कई दशक पहले नोबेल पुरस्कार विजेता अर्थशास्त्री गुन्नार मिर्डल ने *एशियन ड्रामा* नामक अपनी पुस्तक में कहा था कि भारतीय कृषि में 'छद्म रोज़गार' होता है, क्योंकि जो काम एक व्यक्ति कर सकता है, उसे कई व्यक्ति करते हैं। इसकी दूसरी विशेषता है कि भारत कई कृषि उत्पादों के उत्पादन में पूरी दुनिया में सबसे बड़ा उत्पादक है जैसे– ताज़े फल, जीरा, जूट, मटर, दालें, मसाले, ज्वार, तिल्ली, नींबू, दूध, मिर्च, काली मिर्च, अदरक, हल्दी, अमरूद, आम एवं गोश्त। इसकी तीसरी विशेषता है कि भारत में पालतू पशुओं की संख्या पूरी दुनिया में सर्वाधिक है। चौथे, काजू, गोभी, कपास बीज, लहसुन, रेशम, इलायची, प्याज, गेहूं, चावल, गन्ना, मसूर, मूंगफली, चाय, आलू, लौकी, सीताफल एवं मछली उत्पादन में भारत का स्थान पूरी दुनिया में दूसरा है। पांचवें, तंबाकू, अलसी, नारियल, अंडा और टमाटर उत्पादन में भारत का स्थान पूरी दुनिया में तीसरा है। छठवें, भारत विश्व के फल उत्पादन का दसवां हिस्सा उत्पादित करता है जिसमें आम, केला, पपीता आदि का प्रमुख स्थान है। सातवें, भारत के किसान अपनी-अपनी ज़मीन के स्वतंत्र मालिक हैं और यह सदियों से पंचायती राज व्यवस्था लागू है। अर्थात किसान अब जमींदारों-जागीरदारों के अधीन नहीं हैं।

उल्लेखनीय है कि किसी उत्पादन के पांच कारक होते हैं– भूमि, श्रम, पूंजी, उद्यमशीलता एवं संगठन। खेती के लिए भूमि सबसे महत्वपूर्ण कारक है। आबादी के बढ़ने के साथ-साथ खेतिहर जोतों का विभाजन तेज़ी से हुआ जिसके फलस्वरूप भारत की तीन-चौथाई जोतें एक हेक्टेयर से कम हैं। औसतन जोत का आकार बीस हज़ार वर्गमीटर से कम है। जोतों का आकार छोटा होने से कई प्रकार की तकनीक़ी का उपयोग असंभव हो जाता है। भारत के छह लाख गांवों में 72 प्रतिशत आबादी रहती है और नगरों-महानगरों-कस्बों में मात्र 28 प्रतिशत आबादी निवास करती है। मात्र 52.6 प्रतिशत (2003-04) खेती की सिंचाई सुनिश्चित हो पाती है। कहने का आशय यह है कि लगभग आधी खेती पूर्णत: वर्षा पर आधारित है। जो भूमि सिंचित दिखाई जाती है उसकी भी सिंचाई नलकूप के बिगड़ने, बिज़ली की आपूर्ति समय पर न होने, जल-वितरण में विषमता एवं अवैज्ञानिक होने, नाली टूटने, परस्पर असहयोग आदि के कारण सुनिश्चित नहीं होती। वस्तुस्थिति यह है कि अधिकतर गांवों में किसान वर्षा जल का समुचित संचयन नहीं करते क्योंकि दबंगों ने तालाबों का अस्तित्व ही मिटा दिया है और भूजल का दोहन अत्यधिक होने के कारण जल-स्तर काफी नीचे चला गया है। अशिक्षा तथा विकल्प न होने के कारण प्राय: पूरे खेत को डुबोकर ही सिंचाई की जाती है, स्प्रिंकलर से नहीं। इस प्रकार जिस वर्ष अच्छी वर्षा होती है, उस वर्ष खेती की पैदावार अधिक होती है (उत्पादन और उत्पादकता दोनों मामले में)। उत्तर प्रदेश जैसे तमाम राज्यों ने नया सरकारी नलकूप नहीं गाड़ने का नीतिगत निर्णय ले

लिया है, जिसके कारण सिंचाई की समस्या ज्यादा गंभीर हो गई है। खेती राज्य सूची में है, यानी राज्य सरकारें ही इस पर नीतिगत निर्णय लेती हैं। भारत में कुल वर्षा का 75 प्रतिशत हिस्सा दक्षिण-पश्चिमी मानसून से होता हैं और ज़ाहिर है कि भारत की कृषि व्यवस्था इन माहों में होने वाली वर्षा से जुड़ी होती है। भारत में मौसमी वर्षा का वितरण तालिका-1 में देखा जा सकता है।

तालिका-1

भारत में वर्षा का मौसमी वितरण

क्रम संख्या	मौसम	महीने	वितरण (प्रतिशत में)
1	मानसून के पूर्व	मार्च-मई	10.4
2	दक्षिण-पश्चिमी मानसून	जून-सितंबर	73.4
3	मानसून के बाद	अक्तूबर-दिसंबर	13.3
4	जाड़े की वर्षा	जनवरी-फरवरी	2.9

भारत में विभिन्न कृषि-जलवायु क्षेत्रों में वर्षापात भिन्न-भिन्न होता है और 68-70 प्रतिशत क्षेत्र (2.29 करोड़ हेक्टेयर) सूखा सुभेद्य यानी दुर्बल क्षेत्र है। इसमें 33 प्रतिशत क्षेत्र विशेष रूप से सूखाग्रस्त है जहां 750 मिमी. से कम वर्षा होती है। इसके अलावा 35 प्रतिशत क्षेत्र भी सूखा से प्रभावित होता है जहां 750 से 1,125 मिमी. वर्षा होती है। सूखाग्रस्त क्षेत्र मुख्यत: प्रायद्वीपीय और पश्चिमी भारत के शुष्क, अर्द्ध-शुष्क एवं उप-नम क्षेत्र हैं। विभिन्न बुआई श्रेणियों के वर्षापात वाले क्षेत्रों का विवरण तालिका-2 में देखा जा सकता है।

तालिका-2

क्रम संख्या	वर्षा की श्रेणियां	प्रकार	बुआई-क्षेत्र (प्रतिशत में)
1	750 मिमी. से कम	कम वर्षापात	33
2	750 से 1125 मिमी.	मध्यम वर्षापात	35
3	1126 से 2000 मिमी.	अधिक वर्षापात	24
4	2000 मिमी. से ऊपर	अत्यधिक वर्षापात	08

भारत के विभिन्न राज्यों को वर्षा की मात्रा के हिसाब से चार क्षेत्रों में बांटा जा सकता है:

- **शुष्क क्षेत्र (19.6 प्रतिशत)–** जहां औसत वार्षिक वर्षा 100-400 मिमी. होती है जिसके कारण सालभर पानी की कमी रहती है। इसमें राजस्थान, गुजरात और हरियाणा के कुछ ज़िले शामिल हैं।
- **अर्द्ध-शुष्क क्षेत्र (37 प्रतिशत)–** जहां कुछ महीनों में पानी का आधिक्य होता है तो कुछ महीनों में कमी होती है। यहां 400-600 मिमी. औसत वार्षिक वर्षापात होता है। इसमें हरियाणा के कुछ ज़िले, पंजाब, पश्चिमी उत्तर-प्रदेश, पश्चिमी मध्य प्रदेश एवं पश्चिमी घाटों के कुछ क्षेत्र शामिल हैं। यहां मध्यम से तीव्र सूखा पड़ता है।
- **उप-नम क्षेत्र (21 प्रतिशत)–** जहां औसत वार्षिक वर्षा 600-900 मिमी. होती है– उत्तरी मैदानी क्षेत्र के कुछ भाग, केंद्रीय ऊपरी भूमि, पूर्वी पठार, पूर्वी घाटों के कुछ भाग, पश्चिमी हिमालय के कुछ हिस्से। यहां सूखा मध्यम स्तर का होता है।
- **नम क्षेत्र–** असम और उत्तर-पूर्वी क्षेत्र जहां पर्याप्त वर्षा होती है यानी सूखा प्राय: नहीं पड़ता।

सूखे की औसत स्थिति देखने के बाद उचित होगा कि हम विभिन्न राज्यों के विभिन्न ज़िलों को भी जान लें जहां अक्सर सूखा पड़ता है। इसे तालिका-3 में देख सकते हैं।

स्पष्ट है कि प्राय: एक ही समय में भारत के विभिन्न स्थानों पर अतिवृष्टि या सूखा पड़ता है। बिहार, उत्तर प्रदेश जैसे राज्य प्राय: दोनों से आक्रांत रहते हैं। सूखा या बाढ़ के चलते खेती नहीं हो पाती। उत्तरी बिहार में बाढ़ को 'तीसरी फसल' माना जाता है। हर वर्ष तमाम लोग, नेतागण, अधिकारीगण, ठेकेदार, इंजीनियर आदि बाढ़ का बेसब्री से इंतजार करते हैं, क्योंकि आपदा प्रबंधक राहत का बंदोबस्त करते हैं जिसे हड़पने के लिए तमाम व्यक्ति, समूह, संगठन और राजनीतिक दल पूरी तैयारी करते हैं।

ऐसा भी देखा गया है कि ठेकेदार और इंजीनियर मिलकर प्राय: बांध तोड़ देते हैं जिससे उनकी मरम्मत के नाम पर अच्छी-खासी रक़म मिले तथा बाढ़ राहत अलग से मिले। यह भी सच है कि नदियों से बाढ़ के दौरान प्राय: उपजाऊ मिट्टी खेतों में आ जाती है जिसके कारण रबी की पैदावार ज्यादा होती है।

यह तथ्य विशेषकर उल्लेखनीय है कि प्राकृतिक संसाधनों की प्रचुरता के बावजूद भारत के अधिकतर किसान ग़रीब हैं, वे अपने बच्चों को समुचित शिक्षा नहीं दे पाते, परिवार के बीमार सदस्यों का इलाज़ नहीं करा पाते, उन्हें पीने का पानी एवं शौचालय जैसी अनेक बुनियादी सुविधाएं उपलब्ध नहीं हैं। छोटे-छोटे किसान हाड़तोड़ मेहनत के बावजूद बहुत कम आय अर्जित करते हैं क्योंकि उनके उत्पादों की सही क़ीमत उन्हें नहीं मिलती। किसी मज़बूरी में उन्हें औने-पौने दाम पर अपने अनाज, दलहन, तिलहन आदि बेचने पड़ते हैं और अंतत: लागत की महंगी चीज़ों, यथा– शोधित बीज, सिंचाई, कीटनाशक, उर्वरक, खरपतवारनाशक, मज़दूरी आदि के लिए कर्ज़ लेना पड़ता है। जुताई, ढुलाई, सिंचाई, मड़ाई आदि के लिए प्रयुक्त मशीन/गाड़ियां डीजल से चलती हैं जिसकी क़ीमत साल में प्राय: दो बार बढ़ जाती है। ट्रैक्टर से जुताई के लिए एक सौ रुपये प्रतिघंटा की दर प्रचलित है और सिंचाई के लिए तीन से चार रुपये प्रतिघंटा की दर प्रचलित है। फिर मज़दूरी एक सौ रुपये प्रतिदिन है जिसे वहन करने में किसानों की रीढ़ टूट जा रही है। सरकारी और अर्द्ध सरकारी या सहकारी संस्थाओं से उन्हें कृषि ऋण पर्याप्त मात्रा में, समय पर और आसानी से नहीं मिल पाता, अत: वे सूदखोरों/महाजनों से ऊंची ब्याजदरों पर कर्ज़ लेते हैं जो 2 प्रतिशत तक होता है। कुल कृषि ऋण का लगभग आधा महाजनों से लेना पड़ता है क्योंकि बैंकों, सहकारी समितियों आदि में ऋण स्वीकृत करने की प्रक्रिया जटिल और लंबी है, ख़ासकर अनुदान की सारी राशि बैंक, ब्लॉक, ग्रामसेवक, दलाल आदि हज़म कर जाते हैं। प्रेमचंद की 'सवा सेर गेहूं' नामक कहानी में घटित सूदखोरी की प्रथा अब भी चरितार्थ हो रही है। महाराष्ट्र में 55 प्रतिशत से अधिक किसान कृषि ऋण में डूबे हुए हैं और प्राय: सूखा पड़ने के कारण और सुनिश्चित सिंचाई व्यवस्था न होने के कारण वे भारी नुक़सान उठाते हैं और लिया गया कर्ज़ अदा नहीं कर पाते। कई लघु

वित्त संस्थाओं ने बड़े उत्साह से महाजनों की जगह ले ली परंतु उनकी भी ब्याज दरें काफी ऊंची हैं और वे वसूली में वैसे ही प्रताड़नात्मक हथकंडे अपनाते हैं जैसे सूदखोर अपनाते रहे हैं। अतः किसानों की आत्महत्या के लिए वे भी जिम्मेदार हैं। भारत सरकार इस दिशा में ब्याज दरों की अधिकतम सीमा निर्धारित करने हेतु एक कानून बना रही है। वास्तव में, विपरीत परिस्थितियों के कारण भारत के अधिकतर किसान ऋणग्रस्तता में जन्म लेते हैं और उसी में मर जाते हैं। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन के अनुसार वर्ष 2003 में भारत में प्रति किसान परिवार की औसत आय ₹ 2,115 थी और कई राज्यों में यह औसत उससे भी कम थी। जैसे– ओडिशा में मात्र ₹ 1,062 और उत्तर प्रदेश में मात्र ₹ 1,633 है। यह भी पाया गया कि गहन कुपोषण भूमिहीन तथा सीमांत/लघु किसानों (जिन्हें सुनिश्चित सिंचाई की सुविधा उपलब्ध नहीं है) में काफी अधिक है। पूरे देश में 47 प्रतिशत बच्चे कुपोषण के शिकार हैं। यह कैसी विड़ंबना है कि भारत के शहरी-औद्योगिक क्षेत्रों में अधुनातन तक़नीकी एवं उपकरण उपलब्ध हैं जबकि गांवों में बिजली, पानी, सड़क, विद्यालय, अस्पताल आदि या तो उपलब्ध नहीं हैं अथवा उनकी स्थिति संतोषजनक नहीं है। यह रेखांकित करने योग्य है कि फ़सल बीमा मुश्किल से 14 प्रतिशत किसानों का हुआ है जबकि कई कारणों से (ज्यादातर प्राकृतिक) हर साल काफी फ़सलों का नुक़सान होता है। कई फ़सलों की बरबादी अभी भी चूहों, कीटों आदि से होती है। फिर कटाई करके घर तक लाने में भी नुक़सान होता है। विशेषकर फलों और सब्ज़ियों का तीस फीसदी तक नुक़सान होता है। न्यूनतम समर्थन मूल्य सभी फ़सलों के लिए नहीं है और जो घोषित होता है, वह भी दुर्भाग्यवश उत्पादन की लागत से कम होता है। भारत किसान यूनियन तथा नागरिक समाज के अन्य संगठनों ने बार-बार आवाज़ उठाई है कि न्यूनतम समर्थन मूल्य निर्धारित करने में किसानों का समुचित प्रतिनिधित्व हो तथा उसमें वैज्ञानिक पद्धति अपनाई जाए जो उत्पादन की लागत के सूचकांक से सीधे जुड़ी हो।

तालिका-3

राज्य	जिले
आंध्र प्रदेश	अनंतपुर, चित्तूर, कडप्पा, हैदराबाद, कुर्नूल, महबूबनगर, नलगोंडा, प्रकाशम।
बिहार	मुंगेर, नवादा, रोहताश, भोजपुर, औरंगाबाद, गया।
गुजरात	अहमदाबाद, अमरेली, बनासकाठा, भावनगर, भरूच, जामनगर, खेड़ा, कच्छ, मेहसाणा, पंचमहल, राजकोट, सुरेंद्रनगर।
हरियाणा	भिवाड़ी, गुड़गांव, महेंद्रगढ़, रोहतक।
जम्मू-कश्मीर	डोडा, ऊधमनगर।
कर्नाटक	बंगलुरु, बेलगाम, बेल्लारी, बीजापुर, चित्रदुर्गा, चिकमगलूर, धारवाड़, गुलबर्ग, हासन, कोलार, मांड्या, मैसूर, रायचूर, तुमकुर।
मध्य प्रदेश	बेतुल, दतिया, देवास, धार, झाबुआ, खंडवा, शहडोल, शाजापुर, सीधी, उज्जैन।
महाराष्ट्र	अहमदनगर, औरंगाबाद, बीड, नांदेड़, उस्मानाबाद, पुणे, परभणी, सांगली, सतारा, शोलापुर।
ओडिशा	फुलबनी, कालाहांडी, बोलागीर, केंद्रपाड़ा।
राजस्थान	अजमेर, बांसवाड़ा, बाड़मेर, चुरू, डूंगरपुर, जालौर, झुंझनू, जोधपुर, नागपुर, पाली, उदयपुर।
तमिलनाडु	कोयंबटूर धर्मापुरी, मदुरई, रामनाथपुरम्, सलेम, तिरुचिरापल्ली, तिरुनेलवेल्ली, कन्याकुमारी।
उत्तर प्रदेश	इलाहाबाद, बांदा, हमीरपुर, जालौन, मिर्जापुर, बनारस।
पश्चिम बंगाल	बांकुड़ा, मिदनापुर, पुरुलिया।
झारखंड	पलामू।

यह बात भी ध्यातव्य है कि रासायनिक उर्वरकों, विदेशी बीजों, रासायनिक कीटनाशकों और ज्यादा सिंचाई के कारण मिट्टी की गुणवत्ता ख़राब हुई है। उसमें सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी हुई है या खारापन आ गया है। इस दिशा में कृषि वैज्ञानिकों ने अपेक्षित शोध नहीं किया है और जो भी किया है, वह किसानों तक नहीं पहुंचा है। आजकल कृषि-विस्तार का काम कृषि विश्वविद्यालय, महाविद्यालय, कृषि विज्ञान केंद्र और सरकारी कर्मचारी (ग्रामसेवक/जनसेवक से लेकर जिला कृषि अधिकारी तक) समुचित रूप से और बार-बार नहीं करते जिससे कई नयी उपयोगी चीज़ें प्रयोगशाला से खेत तक नहीं पहुंच पातीं। बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने टर्मिनेटर बीजों, रासायनिक उर्वरकों एवं अनुबंध खेती को बढ़ावा दिया है जिससे सदियों पुराने देशज बीज गायब हो गए और विदेशी महंगे बीज एक बार ही बोए जा सकते हैं। उन्हें आगे बीज के रूप में उपयोग में नहीं लाया जा सकता। इस प्रकार किसानों की स्वायत्तता खत्म हो गई है। ऐसे माहौल में जब खेती घाटे का सौदा बन गई है, 40 प्रतिशत किसान खेती छोड़ना चाहते हैं (राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण)। कुछ तो नीतिगत कमियां हैं और कुछ नीतियों एवं कार्यक्रमों के कार्यान्वयन में कमियां हैं और दोनों के शिकार भारत के अधिकतर किसान हैं।

ऐसे परिप्रेक्ष्य में राष्ट्रीय किसान आयोग ने कई महत्वपूर्ण अनुशंसाएं की हैं जिनमें से प्रमुख निम्नलिखित हैं :

- सर्वप्रथम राष्ट्रीय भूमि उपयोग सलाहकार सेवा बनाई जाए जो राज्य तथा ब्लॉक स्तरीय भूमि उपयोग सलाहकार सेवा से जुड़ी हो। मिट्टी के स्वास्थ्य की परख की जाए और पूरे देश में 1,000 आधुनिक मिट्टी जांच प्रयोगशालाएं गठित की जाएं। हर किसान को मिट्टी स्वास्थ्य बही दी जाए जिसमें मिट्टी के भौतिक, रासायनिक एवं सूक्ष्म जैविक तत्वों का समेकित विश्लेषण हो। एक ओर घुमंतू गोष्ठियों का कार्यक्रम हो, तो दूसरी ओर खेती विद्यालयों (सफल किसानों के खेतों में) से किसान सीख को बढ़ावा दिया जाए।
- कृषि हेतु समुचित जल नीति बनाई जाए। कुओं और तालाबों की उड़ाही/जीर्णोद्धार किया जाए। जल साक्षरता आंदोलन चलाया जाए तथा प्रत्येक पंचायत में जल शिक्षक हों, राष्ट्रीय मत्स्यपालन विकास बोर्ड गठित हो।
- समेकित परिवार बीमा नीति सभी ग्रामीण ग़रीबों के लिए बनाई जाए तथा ग्रामीण बीमा विकास कोष स्थापित किया जाए। ग्रामीणों/किसानों की

बढ़ती ऋणग्रस्तता के आलोक में सरकार किसानों को मात्र 4 प्रतिशत ब्याजदर पर कर्ज़ दे। 'लघु वित्त' की जगह 'आजीविका वित्त' की ज़रूरत है जिसमें वित्तीय सेवाएं (जीवन, स्वास्थ्य, फ़सल एवं पशुओं का बीमा हो, सड़क, बिजली, बाज़ार, दूरसंचार आदि के लिए आधारभूत वित्त हो), कृषि एवं व्यवसाय विकास सेवाएं (उत्पादकता वृद्धि, स्थानीय मूल्य संवर्द्धन, वैकल्पिक बाज़ार जुड़ाव) एवं सांस्थानिक विकास सेवाएं (उत्पादकों का संगठन यथा– स्व सहायता समूह, जल उपयोगक संघ, वन संरक्षण समिति, साख एवं उत्पाद सहकारी समितियां, पचायतों का सशक्तीकरण आदि) जहां बार-बार सूखा या बाढ़ आती हो, वहां कृषि ज़ोखिम निधि की स्थापना की जाएं। महिला किसानों को किसान साखपत्र दिए जाए। किसानों को मज़बूरी में अपने उत्पादों को सस्ती दर पर न बेचना पड़े, इसके लिए उन्हें बंधक ऋण दिए जाने की व्यवस्था की जाए। ऋणगस्त किसानों को ऋण से बाहर निकलने की सुविधा दी जाए और साख सलाह केंद्र गठित हों।

– भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद तथा सभी कृषि विश्वविद्यालयों द्वारा कृषि तकनीकी वर्ष मनाया जाए और सहभागी शोध को बढ़ावा दिया जाए। वे साठ हज़ार प्रयोगशाला से खेत तक कार्यक्रम कटाई के बाद की तकनीकी, प्राथमिक उत्पादों तथा जैवमात्रा उपयोगिता में मूल्य संवर्द्धन क्षेत्र में आयोजित करें। कृषि वैज्ञानिक नये बीजों और तकनीकी की उपलब्धि प्रति हेक्टेयर उत्पादकता के साथ-साथ प्रति हेक्टेयर शुद्ध आय के रूप में भी देखें। कृषि तकनीकी मिशनों का राष्ट्रीय महासंघ गठित हो जिसका अध्यक्ष सफल किसान हो जो विभिन्न मिशनों (दलहन, तिलहन, कपास, बागवानी) के लाभों को समूचे किसान समुदाय तक पहुंचा सके।

– आवश्यक वस्तु अधिनियम तथा राज्य कृषि उत्पाद बाज़ार समिति अधिनियम आदि में निजी पूंजी निवेश एवं आधुनिक कृषि के आलोक में (कृषि उत्पादों को रखने, बाज़ार में बेचने और प्रसंस्करण करने हेतु) संशोधन किए जाएं। ग्रामीण हाटों को बेहतर बनाया जाए। इसके अलावा बहुराष्ट्रीय कंपनियों/प्रसंस्करण कंपनियों और किसानों के बीच 'ठेका खेती' के बारे में एक विस्तृत, स्वच्छ, समतामूलक तथा किसान-केंद्रित मॉडल करार तैयार किया जाए जिसमें गुणवत्ता के मापदंड, क़ीमत के मापदंड, भुगतान की शर्तें, प्राकृतिक आपदा संबंधी प्रावधान, समझौता तोड़ने की दशाएं आदि सुस्पष्ट हों। इसके अलावा भारत का पशुधन चारा निगम गठित हो तो उन स्थानीय स्व सहायता समूहों को समर्थन दे जो चारा उत्पादन से जुड़े हों। इसके साथ ही जैविक खेती प्रक्षेत्रों की पहचान हो। फिर कृषि उत्पादन के लिए भारतीय एकल बाज़ार विकसित किए जाए जिससे छोटे-छोटे किसानों को बल मिले।

– खाद्य एवं पोषाहार सुरक्षा हेतु मध्यमकालिक रणनीति बनाई जाए जिसमें निम्न छह-सूत्री कार्ययोजना भूख-मुक्त भारत के लिए हो :

- खाद्य एवं पोषाहार सुरक्षा हेतु जीवन-चक्र दृष्टिकोण पर आधारित वितरण-व्यवस्था हो;
- सामुदायिक खाद्य-सुरक्षा व्यवस्था- जीन, बीज, अनाज एवं जल बैंक की निरंतरता हो। सामुदायिक खाद्य बैंक का गठन शीघ्र हो;
- छिपी भूख की समाप्ति हेतु प्राकृतिक एवं खाद्य पुष्टिकरण की व्यवस्था हो;
- स्वरोज़गार वालों के लिए नयी रणनीति हो– स्वसहायता समूहों का क्षमता-निर्माण एवं अनुश्रवण केंद्र, लघु वित्त से आजीविका वित्त का प्रतिमान बदलाव हो;
- बाजारण योग्य बचत बढ़ाने हेतु छोटी जोतों की उत्पादकता एवं लाभ को बढ़ावा दिया जाए;
- राष्ट्रीय खाद्य गारंटी अधिनियम बने जिसमें नरेगा और काम के लिए भोजन कार्यक्रम की प्रमुख विशेषताएं शामिल की जाएं। (इसके आलोक में भारत सरकार ने खाद्य सुरक्षा विधेयक संसद में पेश किया गया है जिसके अनुसार ग़रीबों को न्यूनतम दर पर हर महीने खाद्यान्न उपलब्ध कराया जाएगा)।

– खेती में लगी महिलाओं के सशक्तीकरण हेतु संयुक्त पट्टा (पति एवं पत्नी के नाम) निर्गत किया जाए। हर राज्य में कम से कम 40 प्रतिशत अनुसूचित जातियों/जनजातियों की महिलाओं को पट्टे दिए जाएं। बीज-उत्पादन, फलदार वृक्षारोपण तथा औषधि वृक्षों के रोपण में लगी महिलाओं को ज़मीन आवंटित की जाए। इसके अलावा ग्राम पंचायत महिला निधि की स्थापना की जाए जिससे स्वसहायता समूह एवं महिलाओं के संघ सामुदायिक कार्यकलाप शुरू कर सकें जिनसे खास लैंगिक ज़रूरतें पूरी हो सकें।

– कृषि मंत्रालय का नाम कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय होना चाहिए तथा एक अलग मत्स्यपालन विभाग गठित हो। इसके साथ ही पशुधन विरासत के संरक्षण हेतु विरासत जीन बैंक का गठन हो। पोषाहार केंद्रित कृषि व्यवस्था का संवर्द्धन आवश्यक है तथा मर रही फ़सलों एवं मर रहे देशज विवेक को बचाया जाए। जैव सुरक्षा जैसी संपूर्ण अवधारणा का कार्यान्वयन किया जाए जिसमें कृषि का टिकाऊपन, खाद्य सुरक्षा तथा पर्यावरण का संरक्षण शामिल हो।

यह उल्लेख करना भी ज़रूरी है कि कई बहुराष्ट्रीय बीज-उत्पादक कंपनियां (यथा मोनसेंटो) तथा कुछ देशी बीज उत्पादक कंपनियां बीज अधिनियम, 1966 की निम्नलिखित कमियों का नाज़ायज़ फायदा उठा रही हैं :

- बीजों के प्रभेदों का पंजीकरण अनिवार्य नहीं है।
- बीजों के प्रभेद, जो भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् द्वारा अधिसूचित नहीं होते, इसमें शामिल नहीं हैं।
- इसमें वाणिज्यिक फ़सलें एवं रोपण (बागान) फ़सलें शामिल नहीं हैं।
- बीजों का प्रमाणन सिर्फ़ राज्य सरकारों की एजेंसियों द्वारा होता है;
- ट्रांसजेनिक पदार्थों के विनियमन हेतु कोई प्रावधान नहीं।
- उल्लंघन होने पर मामूली दंड होना– जैसे, नकली बीज बेचने/उत्पादित करने वालों को सिर्फ़ पांच सौ रुपये जुर्माना का प्रावधान है।

पुराने कानून में आमूल परिवर्तन हेतु बीज (संशोधन) विधेयक, 2010 संसद में है जिस पर कई सांसदों और नागरिक संगठनों ने मांग की है कि बीजों के दाम के बारे में स्पष्ट प्रावधान हो जिससे किसानों को उचित मूल्य पर बीज उपलब्ध हों, न कि वे तथाकथित 'बाज़ार की शक्तियों' से निर्धारित हों। अभी बीज उत्पादन करने वाले निगम नये बीजों का दाम बीस-पच्चीस गुना अधिक रखते हैं। जब से भारत ने विश्व व्यापार संगठन कृषि समझौते पर हस्ताक्षर किया, तब से किसानों को अधिक क़ीमत देने पर मज़बूर होना पड़ा है। इस विधेयक में यह संशोधन भी प्रस्तावित है कि जो व्यक्ति, समूह या कंपनी गलत प्रतिनिधित्व करे या तथ्यों को छिपाए अथवा उनके बीजों में खामियां हों, उन्हें एक लाख रुपये जुर्माना

और एक साल की क़ैद की सजा हो। दूसरे, उस कंपनी का पंजीकरण रद्द कर दिया जाए, जिससे बीजों के प्रमाणन की प्रति और सावधिक रिटर्न कंपनियों द्वारा राज्य सरकारों को दिया जाए। चौथे, नकली एवं घटिया बीजों के उत्पादन, बिक्री आदि पर नियंत्रण हो तथा बीजों के उत्पादन-वितरण आदि में निजी क्षेत्र की भागीदारी हो और बीजों व रोपण पदार्थों के आयात को अधिक उदार बनाया जाए। पांचवें, कोई ट्रांसजेनिक बीज-प्रभेद तब तक पंजीकृत नहीं किया जाएगा जब तक उसे पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 के प्रावधानों के तहत स्वीकृति न मिली हो। ऐसे बीजों पर लेबल होगा और वे विशिष्ट मापदंडों के अनुरूप होंगे। ज्ञातव्य है कि 2001 में संसद ने पौधा विविधता संरक्षण एवं किसानों के अधिकार अधिनियम को पारित किया था जो किसानों के हितसाधन हेतु अद्वितीय कानून माना गया क्योंकि इस कानून के द्वारा किसानों को पूर्व की भांति बीज बचाने, बोने और बेचने का अधिकार दिया गया, भले बीज संरक्षित प्रभेदों के हों। इस प्रकार किसानों का पुराना अधिकार बरकरार रखा गया अन्यथा विश्व व्यापार संगठन के कृषि समझौते के तहत 'ट्रिप्स' ने उन्हें ऐसे अधिकार से वंचित कर दिया था। यद्यपि विश्व बैंक जैसी उदारवादी संस्थाएं भारत पर दबाव डालता रही हैं कि किसानों को कृषि पर अनुदान (बिजली, बीज, उपकरण, रासायनिक उर्वरक, कीटनाशक आदि) खत्म किया जाए, मगर छोटे और सीमांत किसानों (जिनकी संख्या 90 प्रतिशत है) को ये अनुदान जारी रहने ज़रूरी हैं क्योंकि किसानों को उत्पादन-लागत के रूप में काफी ख़र्च करना पड़ता है जबकि बाज़ार में उन्हें अपने उत्पादों का सही मूल्य समय पर नहीं मिलता। दूसरी ओर किसानों को शहरी एवं औद्योगिक उत्पादों को महंगी दर पर ख़रीदना पड़ता है। किसानों के सर्वांगीण विकास हेतु इस विषमता को दुरुस्त करने की नितांत ज़रूरत है। इसके लिए प्रबल इच्छा शक्ति एवं संवेदना की विशेष ज़रूरत है। यह दोहराने की ज़रूरत नहीं कि सार्वजनिक निवेश में वृद्धि करने से ही कृषि में निजी निवेश बढ़ सकेगा। परंतु दुर्भाग्यवश कृषि में सार्वजनिक निवेश घट रहा है जिसके कारण किसानों की दुर्गति हो रही है। ❑

(लेखक भारतीय प्रशासनिक सेवा से संबद्ध अधिकारी हैं।

ई-मेल : sush84br@yahoo.com)

रियो-डी-जेनेरो में अंतरराष्ट्रीय शिखर सम्मेलन, 1992 का घोषणापत्र

ब्राज़ील के रियो-डी-जेनेरो में संपन्न अंतरराष्ट्रीय शिखर सम्मेलन, 1992 ने एक घोषणापत्र जारी करके विकास की एक रणनीति को मान्यता दी और आर्थिक विकास, सामाजिक विकास सहित पर्यावरण संरक्षण तथा दीर्घकालिक विकास, विभिन्न घटकों पर एक साथ ज़ोर दिया। शिखर सम्मेलन के प्रतिनिधियों ने कहा कि यदि यहां सुझाए गए सिद्धांतों को व्यावहारिक तौर पर लागू किया जाए तो स्थायी विकास के प्रति संक्रमण हो सकता है।

- मानवतावादी नैतिक मूल्यों को प्राथमिकता देना, क्योंकि यह प्राकृतिक वस्तुओं और संसाधनों के निपटारे के क्रम में उपभोक्तावादी प्रारूपों के विपरीत है;
- पारिस्थितिकीय दृष्टि से महत्वपूर्ण और अन्य प्रकार के निर्णय कायम करने में सामाजिक भागीदारी और नागरिकों को शामिल करना, जिसमें जानकारी बांटने के साथ ही सामाजिक ढांचे का महत्व बढ़े;
- उन्नत अनुभवों का इस्तेमाल करना और आधुनिक प्रौद्योगिकियों को अपनाना;
- प्राकृतिक संसाधनों, वित्तीय पूंजी बाज़ारों और आधुनिक प्रौद्योगिकी तथा ज्ञान तक समानता आधारित पहुंच कायम करना।

एक अनुमान के अनुसार कंपोस्ट के रूप में परिवर्तित करने के लिए लगभग 60 से 70 करोड़ टन जैविक पदार्थ उपलब्ध है। इस प्रकार के परिवर्तन से पोषण दर में 0.3-0.4 से लेकर 1-2 प्रतिशत तक वृद्धि हो जाती है। इसके लिए खेती के क्षेत्र के हिस्से को निर्धारित करके और उसमें कंपोस्ट तैयार होने वाली फ़सलें उगाकर जैविक पदार्थों की आपूर्ति बढ़ाने का भी प्रयास करना चाहिए। इन फ़सलों की कटाई करके कंपोस्ट बनाने में उसका इस्तेमाल करना चाहिए। सामाजिक वानिकी कार्यक्रमों की तर्ज़ पर सार्वजनिक भूमि पर हरी खाद वाली फ़सलें उगाने के लिए योजनाएं तैयार करनी चाहिए।

वर्मी कंपोस्ट और जैविक उर्वरकों जैसे मिट्टी के जैविक पोषकों की आपूर्ति के लिए कई विकल्प मौजूद हैं। बड़ी मात्रा में इन पोषकों के उत्पादन के लिए प्रौद्योगिकियां विकसित की गई हैं। मोटे अनाजों, दलहनों, तिलहनों, सब्ज़ियों, फलों, फूलों आदि के लिए फ़सल-आधारित जैव उर्वरक भी उपलब्ध हैं। जैविक खाद की मांग को पूरा करने हेतु इसकी आपूर्ति बढ़ाने के लिए वर्मी कंपोस्ट विधि और जैव उर्वरकों का उत्पादन भी किया जा सकता है।

जैविक खेती को बढ़ावा देने में निम्नलिखित भी शामिल हैं :

- विभिन्न राजकीय कृषि विश्वविद्यालयों और अन्य अनुसंधान संस्थानों में स्नातकेतर तथा स्नातकोत्तर कार्यक्रमों के पाठ्यक्रम में जैविक खेती की अवधारणाओं और व्यवहारों को शामिल करना चाहिए।
- जैविक खेती की उपयुक्तता के लिए प्रक्रियाओं का मानकीकरण।
- जैविक कृषि प्रणाली के अधीन विभिन्न फ़सलों के उत्पादन के तरीक़े का समुचित पैकेज़ तैयार करना।
- जैविक खेती के क्षेत्र में सफल किसानों के खेतों को देखने के लिए प्रमुख कृषि वैज्ञानिकों, सामाजिक वैज्ञानिकों तथा प्रगतिशील किसानों को मिलाकर एक विशेषज्ञ समूह का गठन किया जाना चाहिए।
- पत्र-पत्रिकाओं/इलेक्ट्रॉनिक मीडिया/खुली पहुंच वाली वेबसाइटों के माध्यम से जैविक खेती पर आधारित जानकारी बांटना। ❑

CSAT

प्रारंभिक परीक्षा-2011 के संदर्भ में

आवश्यक जानकारी!!!

भारत सरकार के निर्णय के अनुसार 2011 से प्रारंभिक परीक्षा का पाठ्यक्रम एवं प्रारूप बदल जाएगा। प्रारंभिक परीक्षा में अब दो अनिवार्य पत्र होंगे। **पहले पत्र** में वे सभी भाग सम्मिलित होंगे जिन्हें आपने सामान्य अध्ययन के अंतर्गत पढ़ा है। परंतु **दूसरा पत्र** आपके लिए बिल्कुल नया है। आप इस पत्र के शीर्षकों के नाम देख सकते हैं :

★ Comprehension; ★ Inter-Personal Skills including Communication Skills; ★ Logical Reasoning and Analytical Ability; ★ Decision-Making and Problem-Solving; ★ General Mental Ability; ★ Basic Numeracy (Class X level), Data Interpretation, Data Sufficiency (Class X level); ★ English Language Comprehension Skill (Class X level).

क्या आप अचंभित हैं? क्या आप डरे हुए हैं? क्या आप घबराए हुए हैं? क्या आप भ्रमित हैं? क्या आप...

आपको और अधिक चिंता करने की जरूरत नहीं है।

BSC (Banking Services Chronicle)

की टीम आपको इस कठिन परिस्थिति से निकालने के लिए उपस्थित है।

★ टीम को इस क्षेत्र का 17 वर्षों का अनुभव है।

★ टीम में शामिल हैं मशहूर लेखक जैसे—एम. टायरा (Quicker Maths), एम.के. पाण्डेय (Analytical Reasoning), चेतनानंद सिंह (English is Easy), प्रभात-जावेद (Non-Verbal Reasoning), के. कुन्दन (Commonsense Reasoning) एवं अन्य कई।

★ टीम उपलब्ध करा रही है : क्लासरूम कोचिंग, पत्राचार कोर्स, मॉक-टेस्ट श्रृंखला एवं एक विस्तृत अध्ययन सामग्री।

क्लास रूम कोचिंग (हिन्दी एवं अंग्रेजी माध्यम में) के लिए संपर्क करें :

दिल्ली : **मुखर्जी नगर :** फो. : 011-64703671, 09999398128, 09015089453; **बेर सराय :** फो. : 011-65697770, 09953736391; **गणेश नगर :** फो. : 011-65252855, 65252856, 65252857; **द्वारका :** फो. : 011-65166405, 9958348225; **रोहिणी :** फो : 09891126109 09968559576

पटना : Mob. : 09835438437, 09334851844, 09334832722

चंडीगढ़ : फो. 0172-2772727 (M) : 9216545844

लखनऊ: Mob. : 09911098784

(i) **पत्राचार कोर्स + 30 मॉक-टेस्ट** (फीस : ₹ 6600, अवधि : जनवरी से अप्रैल);

(ii) **30 मॉक-टेस्ट** (फीस : ₹ 3300, अवधि : फरवरी से अप्रैल); **"BSC Correspondence Course (P) Ltd."** के पक्ष में एवं "दिल्ली" में देय **डिमांड ड्राफ्ट** निम्नलिखित पते पर भेजिए :
"BSC Publishing Company (P) Ltd., C-37, Ganesh Nagar, Pandav Nagar Complex, Delhi–110092; Ph.: 011-65252855, 65252856, 65252857".

Join the club of winners before your competitors do.

विस्त त विवरण के लिए हमारी मासिक पत्रिका पढ़ें : **"Banking Services Chronicle"**

YH-1/11/6

जैविक खेती : समस्याएं और संभावनाएं

● कुलदीप शर्मा
सुधीर प्रधान

यह बात स्वाभाविक है कि एक अरब 20 करोड़ से भी अधिक जनसंख्या वाले देश में कृषि प्रणाली में बदलाव एक सुविचारित प्रक्रिया द्वारा होनी चाहिए, जिसके लिए काफी सावधानी और सतर्कता बरतने की ज़रूरत है। खाद्य, रेशा, ईंधन, चारा और बढ़ती जनसंख्या के लिए अन्य ज़रूरतों की पूर्ति के लिए कृषि भूमि की उत्पादकता और मृदा स्वास्थ्य में सुधार लाना ज़रूरी है। स्वतंत्रता पश्चात युग में हरित क्रांति ने खाद्य के क्षेत्र में आत्मनिर्भरता के लिए विकासशील देशों को रास्ता दिखाया है, किंतु सीमित प्राकृतिक संसाधन के बल पर कृषि पैदावार कायम रखने के लिए रासायनिक कृषि के स्थान पर जैविक कृषि पर विशेष ज़ोर दिया जा रहा है, क्योंकि रासायनिक कृषि से जहां हमारे संसाधनों की गुणवत्ता घटती है, वहीं जैविक कृषि से हमारे संसाधनों का संरक्षण होता है। हरित क्रांति के बाद के समय में कृषि व्यवस्था ने उत्पादन के असंतुलन, मिश्रित रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता, द्वितीयक और सूक्ष्म पोषकों की कमियों में वृद्धि, कीटनाशक के इस्तेमाल में वृद्धि, अवैज्ञानिक जल प्रबंधन और वितरण, उत्पादकता में कमी के साथ ही उत्पाद की गुणवत्ता में ह्रास, जीन पूल के विनाश, पर्यावरण प्रदूषण और सामाजिक और आर्थिक स्थिति में असंतुलन की समस्या का सामना किया है। फ़सल उत्पादन को निरंतर कायम रखने के लिए जैविक कृषि एक अच्छी पहल है किंतु, भारत में कंपोस्ट की कमी, प्रमाणित प्रौद्योगिकियों के प्रचार के लिए विस्तार की असंगठित प्रणाली, जैविक सामग्री में पोषक तत्वों का अंतर, कचरे से संग्रह करने और प्रसंस्करण करने में जटिलता, विभिन्न फ़सलों के लागत लाभदायकता अनुपात के साथ जैविक कृषि के व्यवहारों को शामिल करने में पैकेज़ का अभाव और वित्तीय सहायता के बिना किसानों द्वारा इसे अपनाने में कठिनाई होने के कारण जैविक कृषि को अपनाने में कठिनाइयां हैं।

समस्याएं

जैविक खेती की प्रगति में कई बाधाएं हैं। जागरुकता की कमी, विपणन से जुड़ी समस्याएं, सहायता के लिए अपर्याप्त सुविधाएं, अधिक लागत होना, जैविक कच्चा माल के विपणन की समस्याएं, वित्तीय समर्थन का अभाव, निर्यात की मांग को पूरा करने में अक्षमता आदि उन बाधाओं में शामिल हैं। इन बाधाओं को दूर करने के लिए केंद्र से लेकर पंचायत स्तरों तक वित्तीय तथा तकनीकी समर्थन की व्यापक तौर पर व्यवस्था करने की ज़रूरत है।

खेती की तकनीकों के बारे में जागरुकता की कमी

किसानों के पास कंपोस्ट तैयार करने के लिए आधुनिक तकनीकों के इस्तेमाल की जानकारी के साथ ही उसके प्रयोगों की जानकारी का भी अभाव है। ज्यादा से ज्यादा वे यही करते हैं कि गड्ढा खोदकर उसे कचरे की कम मात्रा से भर देते हैं। अक्सर गड्ढा वर्षा के जल से भर जाता है और इसका परिणाम यह होता है कि कचरे का ऊपरी हिस्सा पूरी तरह कंपोस्ट नहीं बन पाता और नीचे का हिस्सा कड़ी खल्ली की तरह बन जाता है। जैविक कंपोस्ट तैयार करने के बारे में किसानों को समुचित प्रशिक्षण देने की ज़रूरत है। कंपोस्ट अथवा जैविक खाद के इस्तेमाल पर भी कम ध्यान दिया जाता है। जैविक पदार्थ उन महीनों में फैले होते हैं जबकि मिट्टी में आवश्यकतानुसार नमी मौजूद नहीं होती है। इस प्रक्रिया में पूरा खाद क़चरे में बदल जाता है। निश्चित तौर पर इस विधि में अधिक श्रम और लागत की ज़रूरत होती है, किंतु निश्चित परिणाम प्राप्त करना ज़रूरी होता है।

परिणामोन्मुखी विपणन

ऐसा पाया जाता है कि जैविक फ़सलों की खेती शुरू करने के पहले उनका विपणन योग्य होना और पारंपरिक उत्पादों की तुलना में लाभ सुनिश्चित करना होता है। कम-से-कम पारंपरिक फ़सलों के उत्पादकता स्तरों तक पहुंचने के लिए ज़रूरी अवधि के दौरान लाभकारी मूल्य प्राप्त करने में विफल होना इसके लिए प्रतिकूल होगा। ऐसा प्रमाण मिला है कि राजस्थान में जैविक गेहूं के किसानों को गेहूं के पारंपरिक किसानों की तुलना में कम क़ीमतें मिली। दोनों प्रकार के उत्पादों के विपणन की लागत भी समान थी और गेहूं के ख़रीदार जैविक किस्म के लिए अधिक क़ीमत देने को तैयार नहीं थे।

जैविक पदार्थों का अभाव

किसानों और वैज्ञानिकों को इसके बारे में पता नहीं था कि क्या जैविक पदार्थों से आवश्यक

मात्रा में ज़रूरी पोषक उपलब्ध हो सकते हैं। यहां तक कि विशेषज्ञ भी मानते हैं कि उपलब्ध जैविक पदार्थ ज़रूरतों को पूरा करने के लिए पर्याप्त नहीं हैं। जैविक कंपोस्ट तैयार करने के लिए फ़सल के शेष बचे हिस्से को फ़सल कटाई के बाद नष्ट कर दिया जाता है। प्रयोगों द्वारा यह प्रमाणित किया गया है कि फ़सल के शेष बचे हिस्से की मिट्टी में फिर से जुताई कर देने से मिट्टी की उत्पादकता बढ़ती है और कंपोस्ट बनाना एक बेहतर विकल्प है। छोटे और सीमांत किसानों को उर्वरकों की तुलना में जैविक खाद प्राप्त करने में कठिनाई होती है। उन्हें या तो उनके पास उपलब्ध जैविक पदार्थों के इस्तेमाल से जैविक खाद तैयार करना होगा या फिर वे कम-से-कम प्रयासों और लागत के साथ स्थानीय तौर पर जैविक पदार्थों का संग्रह कर सकते हैं। जनसंख्या का दबाव बढ़ने और कचरे तथा सरकारी भूमि तथा साझा भूमि के कम होने से यह काम कठिन हो गया है।

अधिक लागत होना

भारत के छोटे और सीमांत किसान पारंपरिक कृषि प्रणाली के रूप में एक प्रकार की जैविक खेती करते रहे हैं। वे खेतों को पुनर्जीवित करने के लिए स्थानीय अथवा अपने संसाधनों का इस प्रकार इस्तेमाल करते हैं ताकि पारिस्थितिकी के अनुकूल पर्यावरण कायम रहे। हालांकि इस समय पारंपरिक कृषि प्रणाली में इस्तेमाल होने वाली अन्य चीज़ों सहित औद्योगिक तौर पर उत्पादित रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों की लागत की तुलना में जैविक उत्पादों की लागत अधिक हो रही है।

मूंगफली की खल्ली, नीम के बीज और उसकी खल्ली, जैविक कंपोस्ट, गाद, गोबर और अन्य खादों का इस्तेमाल जैविक खादों के रूप में होता रहा है। इनकी क़ीमतों में वृद्धि होने से ये छोटे किसानों की पहुंच से बाहर होते जा रहे हैं।

जैविक पदार्थों के विपणन की समस्या

राइजोबियम, एजोस्पीरिलम, एजोटोबैक्टर, फास्फोरस को घुलनशील बनाने वाला बैक्टीरिया, ग्लोमस के रूप में वेसीकुलर अर्बुस्कोलर माइकोरिजिया जैसे जैविक उर्वरकों और एलीसिन, निकोटिन सल्फेट, सेडाबिला, निमासाइड, पायरेंथ्रम के रूप में जैविक कीटनाशकों को देश में अब तक लोग अच्छी तरह नहीं जान पाए हैं। ऐसे जैविक उर्वरक और जैविक कीटनाशक का इस्तेमाल मटर, गोभी, लहसुन, प्याज, टमाटर, मिर्च, मूली, शकरकंद, कद्दू, आलू, गेहूं, जौ, चारा, जई, तंबाकू आदि जैसी फ़सलों और नीम के पेड़ों, गुलदाऊदी जैसे पौधों के लिए किया जाता है। इसके लिए विपणन और वितरण नेटवर्क का अभाव है क्योंकि मांग कम होने के कारण खुदरा व्रिकेता इन उत्पादों को बेचने के प्रति रुचि नहीं रखते। आपूर्ति संबंधी समस्याओं और किसानों के बीच जागरुकता में कमी होने के चलते यह समस्या बढ़ गई है। देश में रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के खुदरा विक्रेताओं को अधिक लाभ होने और उत्पादकों और डीलरों द्वारा भारी-भरकम विज्ञापन अभियान चलाने के कारण भी जैविक सामग्रियों के बाज़ारों के लिए समस्याएं हैं।

वित्तीय सहायता का अभाव

भारत जैसे विकासशील देशों को विकसित देशों के अनुसार राष्ट्रीय और क्षेत्रीय मानकों का एक प्रवाह तैयार करना होगा। इस प्रकार के नियामक ढांचे को अपनाकर उसका रखरखाव करते हुए उसका क्रियान्वयन करना महंगा होगा।

छोटे और सीमांत किसानों के लिए प्रमाणन एजेंसियों द्वारा समयानुसार प्रमाणन का कार्य भी काफी मुश्किल है जिसमें उनके द्वारा निर्धारित संख्या में सावधिक निरीक्षण करना शामिल है। एनपीओपी से पहले भारत में कार्यरत अंतरराष्ट्रीय एजेंसियों द्वारा शुल्क लगाना निषिद्ध था। देश के बड़े किसानों के बीच भी जैविक कृषि की ओर कम ध्यान दिए जाने का यह एक कारण था। भारत में जर्मनी जैसे उन्नत देश की तरह

भारत में जैविक उत्पादों की स्वीकृति और उनके प्रमाणन के लिए नियम और विनियमन

- जैविक खेती को बढ़ावा देने के लिए भारत में सामाजिक-सांस्कृतिक पर्यावरण अनुकूल है। भारतीय किसान हरित क्रांति की शुरुआत से पहले तक खेती के पर्यावरण-हितैषी तरीक़े का प्रयोग करते रहे हैं, जो पश्चिमी देश में खेती की कृत्रिम विधियों पर आधारित थी। कई कारणों से छोटे और सीमांत किसानों ने अब तक कृत्रिम खेती को पूरी तरह नहीं अपनाया है और वे कमोबेश पर्यावरण-हितैषी पारंपरिक प्रणाली का अनुसरण कर रहे हैं। वे स्थानीय अथवा अपने खेतों से प्राप्त पुनर्जीवन संसाधनों का इस्तेमाल करते हैं और स्वनिर्मित पारिस्थितिकीय और जैविकीय प्रक्रियाओं का प्रबंधन करते हैं। खेती करने और फ़सलों, पशुधन तथा मानव के लिए पोषक उत्पादों के स्वीकार्य स्तरों के लिए यह आवश्यक हो गया है और इससे भी अधिक फ़सलों और मानवों को उन कीटनाशकों और बीमारियों से बचाने के लिए ज़रूरी है जो जैव-रसायनों और जैव-उर्वरकों के इस्तेमाल से संभव हो सकता है। ऐसी स्थिति में खेती से जुड़े समुदाय को जैविक कृषि की विधियों से अवगत कराने से इस दिशा में कठिनाइयां कम हो सकती हैं।
- भारत जैसा देश जैविक खेती को अपनाकर कई प्रकार से लाभान्वित हो सकता है। उत्पादों के लाभकारी मूल्य, मिट्टी की उर्वर और जल की मात्रा के रूप में प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण, मृदा क्षरण की रोकथाम, प्राकृतिक और कृषि-जैवविविधता का संरक्षण आदि उनमें शामिल है। इसके माध्यम से ग्रामीण रोज़गार के सृजन प्रवास में कमी, उन्नत घरेलू पोषण, स्थानीय खाद्य सुरक्षा तथा बाहरी चीजों पर निर्भरता में कमी जैसे आर्थिक तथा सामाजिक लाभ भी प्राप्त होंगे। इस प्रकार जैविक खेती से पर्यावरण का संरक्षण होगा और मानवीय जीवन की गुणवत्ता में वृद्धि होगी।
- घरेलू बाज़ारों में जैविक उत्पादों की अच्छी मांग है और उतनी मात्रा में आपूर्ति नहीं हो पाती है। इन दोनों के बीच कोई संबंध नहीं है जिसके कारण उत्पादन पर प्रतिकूल असर पड़ता है। थोक विक्रेता और व्यापारी जैविक उत्पादों के वितरण में प्रमुख भूमिका निभाते हैं, क्योंकि ये छोटे खेतों से उपजते हैं। बड़े किसानों की आपूर्ति बाज़ारों तक पहुंच है और वितरण के लिए उनकी अपनी दुकानें हैं। जैविक उत्पादों के लिए महानगर प्रमुख घरेलू बाज़ार हैं।
- भारत में जैविक खेती की संभावनाओं के लिए मध्य प्रदेश एक अच्छी जगह हो सकती है। राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय दोनों बाज़ारों में अधिक लाभकारी क़ीमतें और उनकी आपूर्ति में कमी होना भारत के लिए एक अवसर जैसा है। उसी प्रकार भारत के जैविक कपास के मामले में अच्छी संभावना दिखाई पड़ती है। ❑

भविष्य की ओर

राष्ट्रीय बागवानी मिशन पर कार्ययोजना तैयार करते समय निम्नलिखित पहलुओं को ज़रूरी माना गया है :

- जैविक खेती वाले प्रत्येक राष्ट्रीय बागवानी मिशन के लिए वर्ष 2004-05 और मौजूदा 2009-10 के लिए क्षेत्र, उत्पादन और उत्पादकता पर आधारित आंकड़े के साथ ही जिलावार विवरण के लिए आधारभूत सर्वेक्षण की योजना तैयार होनी चाहिए।
- राष्ट्रीय बागवानी मिशन पिछड़े और अगड़े क्षेत्रों के बीच संपर्क सुनिश्चित करता हुआ अनेक क्रियाकलाप करता है। यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि केवल वही क्रियाकलाप शामिल किए जाएं जिनका उत्पादकता और उत्पादन बढ़ाने में सकारात्मक प्रभाव पड़े।
- भारत के प्रत्येक राज्य और केंद्रशासित प्रदेश को जारी किए गए मार्गनिर्देशों और तकनीकी पुस्तिकाओं के आधार पर जैविक खेती पर आधारित कार्यक्रमों को लागू करना चाहिए।
- कार्ययोजना में जैविक खेती के दायरे वाले क्षेत्रों के बारे में जानकारी शामिल होनी चाहिए। वैसे क्षेत्र जो प्रमाणन के अधीन नहीं हों और वैसी परियोजनाएं जिन्हें वर्ष 2005-06 से लेकर 2009-10 के बीच प्रमाणन के लिए लिया गया तथा विधिवत यह जानकारी दिया जाए कि प्रमाणपत्र प्राप्त हुए अथवा नहीं।
- प्रमाणित जैविक उत्पादों के लिए विपणन की व्यवस्था होनी चाहिए। जैविक खेती का कार्यक्रम चयनित और कंपोस्ट क्लस्टरों में प्रमाणन के साथ जुड़ा होना चाहिए, न कि भिन्न-भिन्न तरीक़े से। इस बारे में लोगों की जागरुकता बढ़ानी चाहिए।
- भारत के राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों को केवल उन्हीं क्षेत्रों के लिए जैविक खेती के लिए प्रस्ताव दाखिल करना चाहिए जिन्हें पहले से जैविक खेती के अधीन शामिल किया गया हो।

जैविक खेती के दो उद्देश्य हैं। पहला उद्देश्य प्रणाली को टिकाऊ बनाना और दूसरा उसे पर्यावरण के प्रति संवेदनशील बनाना है। इन दोनों लक्ष्यों तक पहुंचने के लिए ऐसे मानक तैयार करने की ज़रूरत है जिनका अनुसरण हो। भारतीय कृषि में शुद्ध जैविक खेती को अपनाकर रासायनिक उर्वरकों के इस्तेमाल में कमी लाने की संभावना मौजूद है। जैविक खेती को अपनाने के लिए समन्वित पोषण प्रबंधन, समन्वित कीटनाशक प्रबंधन और जैविक नियंत्रण विधियों को सशक्त करने की ज़रूरत है ताकि रसायनों की ज़रूरतों में कमी हो सके। इस संदर्भ में कृषि विशेषज्ञ डॉ. एम.एस. स्वामीनाथन का कहना है कि "एक भूखा व्यक्ति एक क्रुद्ध व्यक्ति होता है" और "यदि संयोग से भूखा व्यक्ति एक युवा व्यक्ति होता है तो वह हमारे बीच एक संभावित आतंकवादी होता है।" यह बात प्रख्यात वैज्ञानिक प्रो. पी.के. छोकर ने वर्ष 2003 में चंद्रशेखर कृषि विश्वविद्यालय और प्रौद्योगिकी, कानपुर में भारतीय मृदा विज्ञान सोसाइटी के 68वें वार्षिक सम्मेलन के दौरान डॉ. आर.वी. टमहाने स्मारक व्याख्यान देने के दौरान कही थी। भारतीय कृषि ने इको-फार्मिंग, जैविक खेती, प्राकृतिक खेती, जैव गतिविज्ञान खेती आदि जैसी खेती की अभिनव अवधारणाओं को जन्म दिया। इन परंपराओं के कारण हम प्रकृति के निकट पहुंचते हैं। ❑

वित्तीय सहायता उपलब्ध नहीं कराई जाती है। जैविक उत्पादों के विपणन के सिलसिले में केंद्र और राज्य सरकार की ओर से किसी प्रकार की सहायता नहीं दी जाती है। यहां तक कि जैविक खेती को बढ़ावा देने के उद्देश्य से वित्तीय प्रक्रिया का भी सर्वथा अभाव है।

निर्यात की मांग पूरा करने में अक्षमता

अमरीका, यूरोपीय संघ और जापान जैसे उन्नत देशों में जैविक उत्पादों की काफी मांग है। पता चला है कि अमरीकी उपभोक्ता जैविक उत्पादों के लिए 60 से 100 प्रतिशत तक लाभकारी मूल्य के भुगतान के लिए तैयार हैं। भारत के संपन्न वर्ग के लोगों के लक्षण भी अन्यत्र की तरह ही हैं। अंतरराष्ट्रीय व्यापार केंद्र (आईटीसी) द्वारा वर्ष 2000 में कराए गए बाज़ार सर्वेक्षण से यह संकेत मिला है कि विश्व बाज़ारों के कई हिस्सों में जैविक उत्पादों की मांग बढ़ी है, जबकि उसकी आपूर्ति नहीं की जा सकती।

संभावनाएं

भारतीय कृषि को न केवल खाद्यान्न उत्पादन को कायम रखना होगा, बल्कि उसे बढ़ाने के भी प्रयास करने होंगे। ऐसा लगता है कि जैविक खेती की सुविधा उपलब्ध होने, रासायनिक खेती की प्रक्रिया के इस्तेमाल में कमी लाने के प्रयास करने तथा सार्वजनिक निवेश को सीमित करने से जैविक खेती को धीरे-धीरे शुरू किया जा सकता है। इसके लिए उपर्युक्त ज़रूरतों को पूरा करने वाले संभावित क्षेत्रों और फ़सलों की तलाश करके उसे जैविक खेती के दायरे में लाना चाहिए। इसके लिए भारत के वर्षा पर आधारित क्षेत्रों, जनजातीय क्षेत्रों, पूर्वोत्तर और पहाड़ी क्षेत्रों के बारे में विचार किया जा सकता है जहां कमोबेश पारंपरिक खेती की जाती है।

फ़सल की पैदावार में एकाएक गिरावट को रोकने के लिए हमें एक रणनीति के तहत चरणबद्ध तरीके से जैविक उत्पादों के रूप में बदलाव करना चाहिए ताकि प्रारंभिक वर्षों के दौरान ऐसे ज़ोखिम कम हों। देश के खेतों के लिए जैविक पदार्थों की व्यापक ज़रूरतों के सवाल का भी उत्तर ढूंढना होगा। खेती वाले क्षेत्रों के केवल उन 30 प्रतिशत भागों पर ही रासायनिक उर्वरकों का इस्तेमाल किया जाता है, जो सिंचित हैं शेष भाग वर्षा पर निर्भर कृषि के अधीन है जिसमें उर्वरकों का नगण्य इस्तेमाल ही है। देश में खाद्यान्न उत्पादन का 40 प्रतिशत भाग वर्षा पर निर्भर खेती वाले क्षेत्रों से होता है। जैविक खादों के इस्तेमाल को चरणबद्ध तरीके से भी नियंत्रित किया जा सकता है। इसके अलावा सूखे क्षेत्रों में खेती के लिए कम लागत वाली सरल प्रौद्योगिकियां विकसित की गई हैं और उन्हें जैविक खेती के लिए खेतों तक स्थानांतरित किया जा सकता है। इसके परिणामस्वरूप उत्पादकता में वृद्धि होने और उत्पादन कायम रहने से सूखी भूमि की खेती से जुड़े समुदायों की आर्थिक स्थिति में सुधार लाने में मदद मिलेगी, जो देश का एक निर्धनतम समुदाय है। ❑

(लेखकद्वय क्रमशः कृषि सूचना और प्रकाशन निदेशालय, आईसीएआर में प्रधान संपादक और तकनीकी अधिकारी हैं

ई-मेल : kuldeep328@gmail.com)

सजग उपभोक्ता ही सशक्त उपभोक्ता है

जागो ग्राहक जागो

उपभोक्ता सरंक्षण अधिनियम, 1986 के प्रावधानों की जानकारी प्राप्त करें और एक जागरूक उपभोक्ता बने...

राष्ट्रीय उपभोक्ता दिवस
24 दिसम्बर 2010

शिकायत कैसे की जाए

शिकायत सादे कागज पर की जा सकती है। शिकायत में निम्नलिखित विवरण होना चाहिए :–

- शिकायत कर्ताओं तथा विपरीत पार्टी के नाम का विवरण तथा पता।
- शिकायत से संबंधित तथ्य एवं यह सब कब और कहां हुआ।
- शिकायत में उल्लिखित आरोपों के समर्थन में दस्तावेज।
- शिकायत पर शिकायतकर्ताओं अथवा उसके प्राधिकृत एजेंट के हस्ताक्षर होने चाहिए।
- शिकायत दर्ज कराने के लिए किसी वकील की आवश्यकता नहीं।

उपभोक्ता कानून का ज्ञान आपकी समस्याओं का समाधान

उपभोक्ता! ऑनलाइन शिकायत दर्ज करने के लिये लॉग ऑन करें :
www.core.nic.in या टोल फ्री न. **18001804566** डॉयल करें।

उपभोक्ता! किसी सहायता/स्पष्टीकरण हेतु :
राष्ट्रीय उपभोक्ता हेल्प लाइन नं. **1800114000** पर मुफ्त कॉल करें।
(टोल फ्री : सोमवार–शनिवार प्रातः 9.30 बजे से सायं 5.30 बजे) :
011-27662955, 56, 57, 58 (सामान्य कॉल दरें लागू)

जनहित में जारी :
भारत सरकार
उपभोक्ता मामले, खाद्य और सार्वजनिक वितरण मंत्रालय
उपभोक्ता मामले विभाग
कृषि भवन, नई दिल्ली – 110 001

60-A - 09.12.2010 Magazine ad hindi

YH-1/11/4

जम्मू-कश्मीर में नयी कृषि नीति

जम्मू-कश्मीर सरकार अपने विश्व प्रसिद्ध कृषि उत्पादों को पुनर्जीवित करने के लिए नयी कृषि नीति लाएगी। साथ ही घरेलू और अंतरराष्ट्रीय बाज़ारों में इन उत्पादों का आक्रामक ढंग से विपणन करने की तैयारी की जा रही है।

भारतीय उद्योग परिसंघ (सीआईआई) द्वारा आयोजित एग्रोटेक मेले के मौके पर प्रदेश के कृषि मंत्री गुलाम हसन मीर ने कहा– "हम राज्य विधानसभा के शीतकालीन सत्र में नयी कृषि नीति की घोषणा करने जा रहे हैं।" उन्होंने कहा कि प्रदेश सरकार ने कश्मीर की अर्थव्यवस्था के मुख्य पहलू हस्तशिल्प और पर्यटन पर ध्यान देने के अलावा कृषि और बागवानी पर विशेष ध्यान केंद्रित किया है।

केंद्र सरकार की मदद से शुरू किए गए राष्ट्रीय केसर मिशन के बारे में श्री मीर ने कहा कि 376 करोड़ रुपये की इस परियोजना का मकसद कश्मीरी केसर के पुराने गौरव को पुनर्स्थापित करना है और ईरान और स्पेन के साथ प्रतिस्पर्धा में अंतरराष्ट्रीय बाज़ार में इसे एक लब्धप्रतिष्ठित ब्रांड बनाना है। उन्होंने कहा कि केसर उत्पादों को उन लोगों से चुनौतियों का सामना करना पड़ा है जो असली कश्मीरी केसर के नाम पर मिलावटी केसर बेच रहे थे। वर्तमान में केसर खेती का रकबा पम्पोर तहसील में वर्ष 1990 के 7,000 हेक्टेयर से घटकर अब 4,000 हेक्टेयर ही रह गया है। कश्मीर के विश्व प्रसिद्ध सेब के बारे में उन्होंने कहा, "कश्मीर भारत में सेब उत्पादक राज्यों में शीर्ष पर है।"

कश्मीरी सेब की चीन सहित अन्य आयातित सेबों से प्रतिस्पर्धा के बारे में श्री मीर ने कहा, "कश्मीरी सेब का कोई मुक़ाबला नहीं है। यह अपने स्वाद और गुणवत्ता में विशिष्ट है। अब हम इसका घरेलू और अंतरराष्ट्रीय बाज़ारों में जोरदार विपणन का प्रयास कर रहे हैं। "मीर ने बताया कि अब भारती, रिलायंस और अदानी समूह भी इसका विपणन करने के लिए आगे आए हैं। उन्होंने कहा कि प्रदेश में पुष्प उत्पादन के क्षेत्र में भी भारी संभावनाएं हैं क्योंकि घाटी के फूलों की घरेलू और अंतरराष्ट्रीय बाज़ार में काफी मांग है।

मीर ने कहा कि एक और क्षेत्र जिस पर हम ज़ोर दे रहे हैं वह चिकित्सीय गुण वाले पौधों की खेती है। हम इस उद्देश्य के लिए प्रदेश में दो केंद्रीय प्रयोगशालाओं को भी पुनर्जीवित करने का प्रयास कर रहे हैं। प्रदेश में रेशम कीटों के उत्पादन को भी बढ़ावा देने का प्रयास किया जा रहा है। प्रसिद्ध कश्मीरी सूखे मेवों, विशेषकर अखरोट का विपणन करने के लिए योजनाएं बनाई जा रही हैं। उन्होंने कहा कि प्रदेश सरकार अपने प्रसिद्ध बासमती चावल का निर्यात शुरू करने के बारे में भी सोच रही है। ❑

जम्मू-कश्मीर में निर्माणाधीन कटरा-काजीगुंड रेलखंड के लिए दूसरी सुरंग का काम हाल ही में पूरा कर लिया गया। यह दूसरी सुरंग रामबन जिले के सांगलदन में स्थित है

खूबसूरत रंगरूप के लिए...

नारियल पर डालिए नज़र नारियल... खूबसूरती को चार चाँद लगाए !

क्या आप जानते हैं कि नारियल प्रकृति का सबसे ज़्यादा बहुपयोगी फल है ? प्राचीन काल से ही सेहत और सुंदरता दोनों पाने के लिए इसका अलग-अलग तरह से इस्तेमाल किया गया है. हम इसका इस्तेमाल करते हैं, फिर भी यह नहीं जानते हैं कि इसके अलग-अलग रूप जैसे पानी, गूदा, तेल और मलाई... खूबसूरती निखारने का सर्वोत्तम तरीका है !

रंगरूप संवारे... खूबसूरत अहसास जगाए.

नरम-मुलायम और निखरे रंगरूप के लिए नारियल तेल से बढ़कर और कुछ नहीं. नारियल तेल तेज़ी से त्वचा में समा जाता है और इसे भीतर से खिला-खिला और दमकता बनाता है. इसके अलावा, रूखी, खुरदरी और झुर्रियों युक्त त्वचा को चिकना बनाने में यह अत्युत्तम है.

वर्जिन नारियल तेल - इसमें हैं एंटीऑक्सीडेंट, जो त्वचा को फ्री रैडिकलों से सुरक्षित रखते हैं, जिनके कारण त्वचा अपना लचीलापन खो देती है. यह उम्र और तेज़ धूप के कारण दिखाई देने वाले बदसूरत दाग़-धब्बे भी दूर करता है.

बाल... आज और कल

बाल तो आपकी खूबसूरती का एक ख़ास हिस्सा है. अगर आप दक्षिण भारत की अधिकतर स्त्रियों के बाल देखेंगे तो पाएंगे कि इनके बाल कितने घने, लंबे और काले चमकीले होते हैं. और रंगरूप भी कितना मुलायम और बेदाग़ होता है. इसका क्या राज़ है ? ये स्त्रियां अपने भोजन में और रंगरूप संवारने के लिए हर दिन नारियल तेल का इस्तेमाल करती हैं. नारियल तेल बालों की जड़ों को पोषण देकर, इसके स्वाभाविक और स्वस्थ विकास को बनाए रखता है. यह सिर की त्वचा को ठंडक पहुंचाता है.

नारियल तेल को हल्का सा गर्म करें और बालों पर लगाएं. ख़ास तौर पर बालों की जड़ों पर. इसे रात भर रहने दें और सुबह बालों मे शैम्पू कर लें. यह निश्चित रूप से साबित हो चुका है कि शुद्ध नारियल तेल के नियमित इस्तेमाल से बालों का झड़ना 50% तक कम हो जाता है !

नारियल का अलग-अलग उपयोग

- **सर्दियों में होंठ सूखे और खुरदरे हो जाते हैं. ऐसे में हर रात और सुबह होंठों पर नारियल तेल लगाएं. इससे आपके होंठ नमीयुक्त भी रहेंगे और नई ताज़गी से खिले रहेंगे.**
- **एड़ियाँ फटना एक ऐसी परेशानी है, जिससे शायद ही कोई बच पाता हो, बशर्ते जो नारियल तेल का इस्तेमाल करते हों. सोने से पहले पेट्रोलियम जैली (वेसलाइन) में नारियल तेल मिलाकर अपनी एड़ियों पर लगाएं.**
- **दाग़-धब्बे हटाने के लिए रस निचोडे नींबू के आधे छिलके में आधी छोटी चम्मच नारियल तेल डालें. अब इसे कुहनी और घुटने की सूखी और सांवली त्वचा पर रगड़ें.**
- **आंखों का मेकअप हटाने के लिए नारियल तेल का इस्तेमाल करें. नारियल तेल को रूई पर डालकर, भीतर की तरफ घुमाते हुए मेकअप साफ़ करें.**

नारियल का गूदा... आपमें जवां निखार लाए

आपके चेहरे के लिए सबसे बेहतरीन फ़ेस मास्क है - नारियल. अपनी आंखों पर खीरे की पतली स्लाइस काटकर रख लें. अब चेहरे पर नारियल के गूदे का लेप लगाकर, 30 मिनट तक रहने दें. इसके बाद चेहरा धो लें. इससे आपकी त्वचा दिन भर तरोताज़ा और जवां नज़र आएगी.

मालिश मंत्र

नहाने की तैयारी कर रहे हैं ? ठहरिए ! नहाने से पहले अपने पूरे शरीर पर नारियल तेल से मालिश करना कैसा रहेगा ? तन-मन की थकान और तनाव दूर करने के लिए सदियों से यही तरीका इस्तेमाल करता आ

रहा है. बस हर रविवार इस तरह की मालिश का नियम बना लीजिए. फिर देखिए आपकी त्वचा कैसे नरम-मुलायम, जवां और खूबसूरत नज़र आती है बरसों-बरस ! ध्यान रखें, तौलिए से अपने शरीर को रगड़-रगड़कर न पोंछें. इसे हल्के से थपथपाकर सुखाएं, ताकि आपकी त्वचा में थोड़ा बहुत तेल बना रहे. पूरे हफ़्ते भर तेज़ भागदौड़ के दौरान भी आप खुद को चुस्त और तरोताज़ा महसूस करेंगे !

नारियल तेल एक बेहतरीन आफ़्टर बाथ स्किन मॉइश्चराइज़र है. यह वॉटर सीलेंट की ही तरह नमी को नष्ट होने नहीं देता है । यही नहीं, सोरियासिस और ज़ेरोसिस जैसे हल्की त्वचा समस्याओं के लिए भी यह एक फायदेमंद प्रतिकारक उपाय है.

नारियल विकास बोर्ड
(कृषि मंत्रालय, भारत सरकार)
cdbkochi@dataone.in, www.coconutboard.gov.in

davp 01107/13/0044/1011

YH-1/11/3

भारत में बागवानी : स्थिति और संभावनाएं

● बिजय कुमार

व्यापारिक उद्यम के रूप में खुले खेतों में जलवायु नियंत्रित स्थितियों में बागवानी आधुनिक युग की देन है। इसे परंपरागत ढंग से कम उपजाऊ ज़मीन पर वर्षा सिंचित फ़सलें उगाने के मुक़ाबले ज्यादा फायदेमंद पाया गया है

भारत फल और सब्ज़ियों का दुनिया में चीन के बाद दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक देश है। इस क्षेत्र का नियोजित विकास सातवीं योजना अवधि से शुरू हुआ और दसवीं और ग्याहरवीं पंचवर्षीय योजना अवधि में इसने ज़ोर पकड़ा।

हालांकि बागवानी हमारे लिए कोई नयी बात नहीं है लेकिन अभी तक इसमें बहुत निवेश नहीं हुआ और यह कृषि का सबसे कम लाभ वाला क्षेत्र माना जाता था। भारत में बागान छोटे होते थे और बागानों के मालिक उनमें ऐसे फलों के पेड़ लगाते थे जिनकी देखरेख की ज़रूरत नहीं होती थी। फलों के अनेक बाग घरों के पिछवाड़े होते थे और घर में रहने वाले लोगों की फलों और सब्ज़ियों की ज़रूरतें पूरी करते थे। खुले खेतों में व्यापारिक दृष्टि से जलवायु नियंत्रित स्थिति में बागवानी आधुनिक युग की देन है और अनेक मामलों में इसे वर्षा आधारित परंपरागत खेती की पैदावार के मुक़ाबले ज्यादा फायदेमंद पाया गया है। यह फ़सल चक्रों में विविधता लाने की संभावना भी प्रस्तुत करती है।

बागवानी के तरीक़ों का विकास

राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड के अंतिम अनुमानों के अनुसार वर्ष 2009-10 के दौरान बागवानी से पैदावार 22.69 करोड़ मीट्रिक टन हुई और 2.12 करोड़ हेक्टेयर ज़मीन पर बाग लगे थे। वर्ष 2008-09 तक इसमें 5.66 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि दर दर्ज़ की गई। इस अवधि के दौरान फलों की पैदावार दर में 7.39 प्रतिशत वृद्धि होने का अनुमान लगाया गया जो वर्ष 2007-08 की वार्षिक वृद्धि दर 4.39 प्रतिशत से ऊंची है। दूसरी ओर वर्ष 2009-10 के दौरान सब्जियों की वृद्धि दर 5.51 प्रतिशत रही जो इससे पहले वर्ष की वृद्धि दर 4.89 प्रतिशत से थोड़ा ही ज्यादा है। प्रमुखत: इसका कारण उस वर्ष पश्चिम बंगाल में आलू की फ़सल ख़राब होने को बताया गया। फलों की खेती की उपज वर्ष 2009-10 से ज्यों-की-त्यों बनी रही। मुख्य रूप से इसका कारण फूलों का निर्यात कम होना कहा जाता है जो वर्ष 2007-08 के 36,241 मीट्रिक टन से घटकर वर्ष 2008-09 में 30,798 मीट्रिक टन हो गया और 2009-10 में यह उपज 26,814 मीट्रिक टन के स्तर पर आ गई।

भारत में अनेक प्रकार की जलवायु पाई जाती है और यहां तरह-तरह के फल-फूल उगते हैं। इसकी जलवायु नम, काफी नम, उप-ऊष्णकटिबंधीय से ऊष्णकटिबंधीय और सूखी किस्म की है। तथापि यहां 65 प्रतिशत क्षेत्र में मुख्य रूप से केला, आम और खट्टे फलों की खेती होती है। ये देश में पैदा होने वाले कुल फलों के 68 प्रतिशत के बराबर हैं। महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु और केरल में पैदा होने वाले फल देश की कुल फलों की पैदावार के लगभग 62 प्रतिशत बैठते हैं और देश में कुल जितने क्षेत्रफल पर फलों की खेती होती है उसका 55 प्रतिशत हिस्सा इन्हीं राज्यों में है।

हाल के वर्षों में फलों की उपज बढ़ी है और इसका कारण यह है कि अब ज्यादा रक़बे में ऐसी खेती की जाने लगी है। उत्पादकता भी बढ़ी है, हालांकि इसकी द्वितीयक भूमिका है। चित्र-1 और 2 से यह बात स्पष्ट होती है। आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, गुजरात, कर्नाटक और जम्मू-कश्मीर में ज्यादा रक़बे पर फलों की खेती होने लगी है। अधिक लोकप्रिय फलों की रोपाई की अच्छी गुणवत्ता वाली निवेश सामग्री कम मिल पाती है, जिसके कारण फलों की उत्पादकता कम है। बागान का घनत्व कम होना और पौधों की रक्षा के अपर्याप्त प्रबंध के कारण भी फलों की उपज कम होती है।

जहां तक सब्ज़ियों का सवाल है, इन फ़सलों का रक़बा बढ़ा है और उत्पादकता में वृद्धि की भी इनमें महत्वपूर्ण भूमिका है। चित्र-3 और 4 से यह बात स्पष्ट होती है। इसका प्रमुख कारण उन्नत किस्म की सब्ज़ियों की खेती की शुरुआत, सार्वजनिक क्षेत्र के अनुसंधान और निज़ी क्षेत्र के प्रयासों से नयी तकनीकी का समावेश है। राजधानी, नगरों और महानगरों– दिल्ली, मुंबई और कोलकाता से लगे इलाक़ों में सब्ज़ियों की खेती वाले क्षेत्रफल में विस्तार हुआ है।

चित्र-1

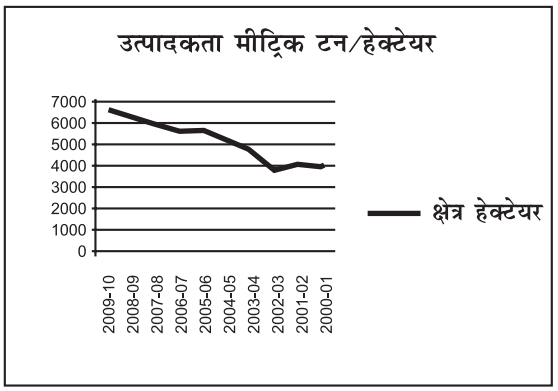

क्षेत्रफल जिस पर फलों की खेती होती है।

चित्र-2

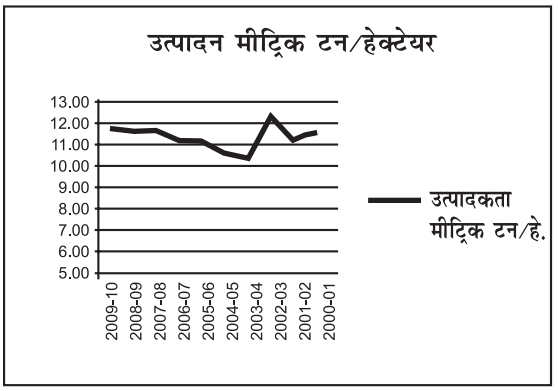

फलों की उत्पादकता

बागवानी विकास की योजनाएं

राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड (नेशनल हॉर्टीकल्चर बोर्ड–एनएचबी) की स्थापना कृषि मंत्रालय ने वर्ष 1984 में की थी। इसके द्वारा शुरू की गई योजनाओं का उद्देश्य अधिक पूंजी वाली व्यापारिक बागवानी को बढ़ावा देना है। एनएचबी योजनाओं के तहत कई नये उत्पादन केंद्र विकसित किए गए हैं जहां अंगूर, अनार, आम, केला, खट्टे फल, अमरूद, आंवला, ताड़, खजूर, लीची और उच्च प्रौद्योगिकी से पैदा होने वाले फूल उपजाए जाते हैं। इसके अलावा फ़सल तैयार होने के बाद के प्रबंधन और शीतागारों की भी व्यवस्था की गई है। इसके परिणामस्वरूप निर्यात योग्य फल और सब्ज़ियां, फूल और मशरूम संरक्षित स्थिति में पैदा किए जा रहे हैं। उच्च घनत्व वाले बागान में कंप्यूटर की मदद से अनुसंधान करके लघु सिंचाई साधनों और बेहतर कीटनाशकों का इस्तेमाल करके भी पैदावार बढ़ाई जा रही है। अनेक उत्पादन यूनिटें विश्व स्तर की हैं और मान्यता प्राप्त एजेंसियों ने उनकी गुणवत्ता प्रमाणित की है।

अब फलों और सब्ज़ियों की फ़सल तैयार होने के बाद उन पर बेहतर ढंग से ध्यान दिया जा रहा है और विश्व स्तर के मानकों के अनुरूप अंगूर, आम, केला, मशरूम आदि की पैकिंग करके निर्यात किया जा रहा है।

बागवानी विकास की स्कीमों के परिणामस्वरूप इनकी खेती में अब बेहतर यंत्रों का भी इस्तेमाल होने लगा है। पौधों की आयातित किस्मों की खेती शुरू की गई और इनके लिए खेती की मशीनें मंगाई गई हैं।

एनएचबी योजना के अंतर्गत बागवानी का व्यावसायीकरण किया गया है जिससे छोटे और औसत दर्ज़े के किसानों को परोक्ष रूप से लाभ पहुंचा है और अनेक मामलों में ये सीधे तौर पर भी लाभान्वित हुए हैं। बागवानी विकास की योजनाओं में दो प्रकार के उद्देश्य रखे गए हैं। ये हैं– राष्ट्रीय बागवानी मिशन और पूर्वोत्तर तथा पहाड़ी राज्यों के बागवानी मिशन। दो प्रकार के मिशन वाली योजनाओं से बड़ी संख्या में लोगों को लाभ पहुंचा है और इसके कारण बीज उत्पादन और बाज़ारों की मूल सुविधाओं का भी समुचित विकास हुआ है। बागवानी विकास की तीन योजनाओं के चलते उत्पादन व्यवस्था आधुनिक बन गई और फ़सल तैयार हो जाने के बाद उसे संभालने का तंत्र विकसित हो गया है।

बागवानी मूल सुविधाओं के तकनीक मानकों की बेंचमार्किंग

बागवानी के काम में अधिकाशंत: छोटे और औसत दर्ज़े के किसान लगे हुए हैं और उनके लिए पैंकिंग, शीतागारों और रेफ्रीजेरेटेड गाड़ियों की व्यवस्था कस्टम सर्विस बिजनेस मॉडल के अंतर्गत की जा रही है। इस मॉडल के अतंर्गत उत्पादनकर्ताओं को सेवाएं मालिक के ज़ोखिम आधार पर दी जाती है। नेशनल हॉर्टीकल्चर बोर्ड ने बागवानी की पैदावार को तरोताज़ा रखने के लिए शीतागारों की बेंचमार्किंग की है। उसने आधुनिक किस्म की फल पकाने की यूनिटें और रेफ्रीजेरेटेड गाड़ियां उपलब्ध कराई है। कृषि मंत्रालय ने एक और महत्वपूर्ण फ़ैसला करते हुए शीतागारों की शृंखला की शुरुआत की है और इस प्रकार से एनएचबी ने जो उपाय किए थे उन्हें संस्थागत बना दिया है।

व्यापारिक बागवानी के विकास पर बाज़ार पहुंच का प्रभाव

जिन इलाक़ों में बागवानी विकास पर ज्यादा पूंजी लगाई जा रही है वहां इसकी गति मंद है।

चित्र-3

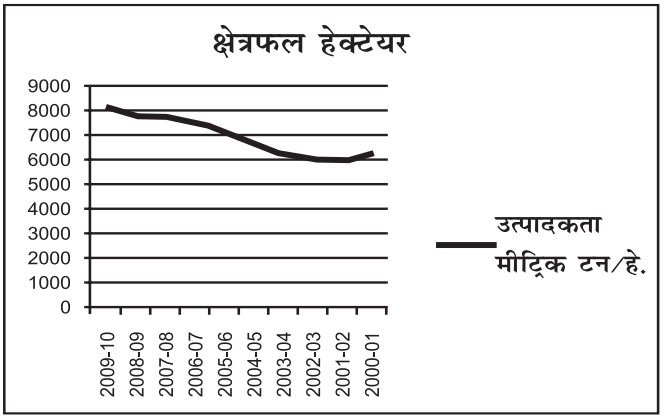

सब्जियों की खेती वाला क्षेत्रफल

चित्र-4

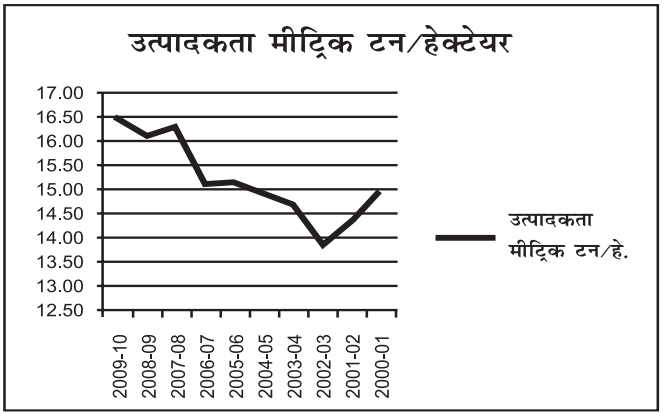

सब्जियों की उत्पादकता

एनएचबी की ऋण संबद्ध योजनाएं ज्यादा लोकप्रिय नहीं हो पाईं। पश्चिम बंगाल, बिहार, ओडिशा, उत्तर प्रदेश, झारखंड, छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश, जम्मू-कश्मीर एवं पूर्वोत्तर राज्यों में इनमें प्रगति नहीं हुई। बेहतर प्रयासों के बावजूद ऐसा हुआ। कहा जा सकता है कि फल उत्पादन के आधुनिक तौर-तरीक़े और व्यवहार लोकप्रिय नहीं हो पाए तथा प्रसार सेवाएं पूरी तरह सफल नहीं हुईं, पूंजी की समस्या भी बनी रही। इसलिए बाज़ारों तक पहुंच और फ़सल तैयार हो जाने के बाद के प्रबंधन व्यवहार व्यापारिक रूप से बागवानी विकास के लिए बहुत महत्वपूर्ण माने जा रहे हैं।

लागत प्रभावी परिवहन की भूमिका

बागवानी पैदावार बहुत जल्दी ख़राब हो जाने वाली वस्तु है। संभवत: यही कारण है कि इनके लिए लंबी दूरी की लागत प्रभावी परिवहन व्यवस्था बहुत महत्वपूर्ण है। अब जबकि सड़क परिवहन में सुधार हुआ है, यह स्थिति बदल रही है लेकिन सड़क परिवहन अब भी लंबी दूरी के लिए लागत प्रभावी नहीं है। ध्यान देने की बात है कि केला और प्याज जैसी महाराष्ट्र में पैदा होने वाली फ़सलें, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु के आम, महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश आदि के खट्टे फल देश के दूर-दराज़ के बाज़ारों में पहुंच जाते हैं। भारतीय रेल इन्हें रियायतें देती है। लेकिन बागवानी की फ़सलों का व्यापार करने वाले लोग संगठित नहीं हैं और वे ऐसे लाभ पाने से वंचित रह जाते हैं।

दूसरी ओर यह ध्यान देने की बात है कि रेल द्वारा फल और सब्ज़ियां लंबी दूरी तक ले जाने पर उन्हें परिवहन संबंधी रियायतें मिल सकती हैं। लेकिन इनके कारण उत्पादनकर्ताओं को नुक़सान होता है। पहले फलों की ग्रेडिंग करके रेल के यार्डो में जमा करना होता है फिर उन्हें ऐसे माल डिब्बों में लादा जाता है जिनमें हवा आने की गुंजाइश नहीं होती और जो गर्मियों में बहुत गरम हो जाते हैं।

आयात संबंधी चुनौतियां

सेब जैसे फल बड़ी मात्रा में आयात किए जाते हैं। आयातित सेब का 98 प्रतिशत अमरीका, चीन, चिली और न्यूजीलैंड से आता है। इसमें अमरीका से 44.8 प्रतिशत माल आयात होता है। दूसरे नंबर पर चीन है जहां से 47.5 प्रतिशत और चिली से 9.7 प्रतिशत तथा न्यूजीलैंड से 5.8 प्रतिशत सेब आता है। ऐसा तब भी हो रहा है जब सेब पर 50 प्रतिशत तटकर लगता है। इससे ज़ाहिर होता है कि फलों की पैदावार की तकनीक आयात करना ज़रूरी है और साथ ही पैदावार को सुरक्षित रखने के लिए मूल सुविधाएं भी तुरंत जुटाई जानी चाहिए ताकि उन्हें दूर-दराज़ के बाज़ारों में पहुंचाया जा सके।

बागवानी रेल- बहुआयामी परिवहन व्यवस्था

एनएचबी, कंटेनर कॉरपोरेशन और भारतीय रेल मंत्रालय द्वारा एक बहुआयामी आधुनिक परिवहन व्यवस्था विकसित करने की कोशिश चल रही है। इसके अनुसार विशेष रूप से तैयार किए गए रेफ्रीजेरेटेड कंटेनर और कंटेनर जैसे माल डिब्बे सिर्फ़ बागवानी की पैदावार ढोने के लिए शुरू किए जाएंगे। इन्हें निर्धारित समय के अंदर पहुंचाया जाएगा। फलों की तोड़ाई, पैकिंग और उन्हें माल गोदामों, बाज़ार केंद्रों या बंदरगाह तक पहुंचाने के लिए भी कंटेनर कॉरपोरेशन ने प्रस्ताव किया है। एनएचबी ने रेल विभाग से अनुरोध किया है कि वह बागवानी का सामान ले जाने के लिए भी वैसी ही रियायती सुविधाएं दे जो वर्तमान बहुआयामी परिवहन व्यवस्था के अंतर्गत सामान्य माल डिब्बों से ढोने पर मिलती है। नेशनल हॉर्टीकल्चर बोर्ड ने सब्सिडी देकर रेलवे को माल डिब्बे उपलब्ध कराने और कंटेनर कॉरपोरेशन के लिए टर्मिनल सुविधाएं उपलब्ध कराने का प्रस्ताव किया है। इससे विपणन सुविधाएं बढ़ेंगी। इस परियोजना में पैदावार के बाद और पैदावार से पहले काम आने वाली मूल सुविधाओं का विकास भी शामिल है। इसके लिए विस्तार सेवाएं बढ़ाई जाएंगी और बागवानी विकास की योजनाओं के तहत सुनियोजित ढंग से उपभोक्ताओं के बीच ये सुविधाएं उपलब्ध कराई जाएंगी।

ज्यादा लाभ देने वाली फ़सलें : छोटे किसान गुज़ारे की उपज देने वाली फ़सलें छोड़कर ज्यादा फायदे वाली व्यापारिक फ़सलें उगाकर अपनी आमदनी बढ़ा सकते हैं। इसके लिए उन फ़सलों की मांग बढ़ानी होगी और शहरीकरण भी इसमें सहायक होगा। इसलिए उन्हें अपनी नियमित आमदनी बढ़ानी होगी। छोटे किसान परंपरागत फ़सलें छोड़कर ऐसी फ़सलों की ओर झुकने में कठिनाई महसूस करते हैं क्योंकि वे उन फ़सलों को पसंद करते हैं जिनसे उनका खुद का गुज़ारा चलता है। अगर यह मान लें कि ऐसे किसान ज्यादा आमदनी होने पर अपनी ज़रूरत वाली चीजें बाज़ार से खरीद लेंगे, तो भी क़ीमती फ़सलों की तरफ बढ़ने में पूंजी की कमी, विपणन की समस्या और क़ीमती फ़सलें उगाने में होने वाले ज़ोखिम आड़े आते हैं।

ऋण : हाल के वर्षों में खेती के काम के लिए संगठित क्षेत्र से अधिक ऋण मिलने लगा है। लेकिन इससे किसानों की ज़रूरतें पूरी नहीं हो पातीं। बटाईदार किसानों को तो ऐसा ऋण मिलना और भी मुश्किल होता है। यही हाल छोटे किसानों का भी है। ऋण के लिए उन्हें अनौपचारिक स्रोतों पर निर्भर रहना पड़ता है। स्वयं सहायता समूह गठित करके छोटे किसानों की मदद की जा सकती है। इन किसानों की ऋण की समस्या सहकारी समितियों के खत्म होने के बाद और भी बढ़ गई है।

विपणन : छोटे किसानों के पास बेचने के लिए जिन्सें कम होती हैं। जिन्सें महंगी होने तक वे इंतजार नहीं कर पाते क्योंकि उन्हें तुरंत पैसे की ज़रूरत होती है, अत: छोटे किसानों को बिचौलियों के चंगुल से बचा करके किसानों की विपणन की समस्या हल की जा सकती है। उर्वरक, उन्नत, बीज आदि उपलब्ध कराकर भी उनकी सहायता की जा सकती है। दशकों पहले चीनी मिलों ने निजी और को-ऑपरेटिव क्षेत्रों में ठेके पर खेती शुरू करवाई थी। बाद में दुग्ध संघ भी ऐसा करने लगे। इन उपायों से भी किसानों की आमदनी बढ़ी।

ज़ोखिम राशन : भारत में कृषि क्षेत्र की स्थिति देखते हुए कहा जा सकता है कि फ़सलों और किसान की फ़सल बीमा पहले ही मौजूद है। खेती के पैदावार का न्यूनतम मूल्य तय करके भी किसानों को उचित मूल्य दिलाया जा सकता है। लेकिन न्यूनतम मूल्य योजना समुचित ढंग से लागू नहीं हो पा रही है। इनकी खामियां दूर करनी ज़रूरी है। वर्तमान परिस्थितियों में मिली-जुली खेती की पैरवी करना उचित जान पड़ता है। व्यापारिक खेती भी लाभप्रद रहेगी। पशुपालन आदि से किसानों की आमदनी बढ़ाई जा सकती है।

सुपुर्दगी व्यवस्था में सुधार : मौजूदा फ़सलों की उत्पादकता बढ़ाकर और अधिक फायदेमंद फ़सलें उगाकर किसानों की आमदनी बढ़ाई जा सकती है। लेकिन सुपुर्दगी व्यवस्था भी सुधारनी होगी। इसके लिए संबद्ध संस्थानों को सुदृढ़ बनाना होगा। सरकारी नीतियों को भी अनुकूल बनाना होगा। किसानों की आवश्यकता की चीज़ों का एकीकरण, खेती की ज़रूरतें पूरी करने और किसानों को संगठित करना होगा। ऋण, कृषि में निवेश, बीजों और उर्वरकों की आपूर्ति आदि की व्यवस्था करके ज़ोखिम कम करने के लिए फ़सल बीमा और भंडारण की व्यवस्था करनी होगी। ❑

(लेखक गुड़गांव स्थित नेशनल हॉर्टीकल्चर बोर्ड के प्रबंध निदेशक हैं।

ई-मेल : mdnhb@yahoo.com)

कृषि का ऊंचा उठता ग्राफ

● वेद प्रकाश अरोड़ा

अक्तूबर 2008 में अमरीका के एक बड़े बैंक लेहमैन ब्रदर्स के डूब जाने से पैदा हुई मंदी की लहर यूरोप से लेकर जापान तक पसरते-पसरते जब भारतीय उपमहाद्वीप के तटों पर पहुंची, तब उसकी धार और पैनापन काफी कम हो चुका था। मंदी का प्रकोप भारत में फैला तो सही, लेकिन वह उग्र और व्यापक नहीं था। उसने कुछ क्षेत्रों को ही अपनी लपेट में लिया। अब तो वह अतीत का एक भूला-बिसरा दु:स्वप्न बनकर रह गया है। भले ही कुछ यूरोपीय देशों में मंदी का कुचक्र फिर दिखाई दे रहा है। अगर इन देशों में भारत के निर्यात को अलग कर दें, तो अन्य सभी क्षेत्रों में भारत की अर्थव्यवस्था तेज़ी से रफ़्तार पकड़ती जा रही है। द्विपक्षीय समझौता कर निर्यात की गति बढ़ाने के भी प्रयास किए जा रहे हैं। निस्संदेह कृषि, उद्योग और सेवा इन तीनों क्षेत्रों में हमारे क़दम तेज़ी से आगे बढ़ते जा रहे हैं। ये तीनों घटक ही सकल घरेलू उत्पाद की दशा और दिशा निर्धारित करते हैं और यह भी बताते हैं कि हमारी अर्थव्यवस्था किस मुकाम और मोड़ पर पहुंची है तथा उसे कितनी और कब तक ऑक्सीजन देने की ज़रूरत है। इन तीन क्षेत्रों में विशेषकर कृषि और उद्योग के क्षेत्र में जिसमें विनिर्माण क्षेत्र भी शामिल होता है, हमारी चाल इतनी तेज़ होती जा रही है कि अर्थव्यवस्था की चमक फिर लौटती नज़र आ रही है। 2009-10 के वित्त वर्ष की पहली दो तिमाहियों में अर्थव्यवस्था की विकास दर 8.9 प्रतिशत रही। पहले प्रथम तिमाही की विकास दर 8.8 फीसदी आंकी गई थी, लेकिन बाद में सुधारकर 8.9 प्रतिशत कर अद्यतन बना दिया गया। इस तरह इस वित्त वर्ष की पहली छमाही की विकास दर पिछले वित्त वर्ष की 7.5 प्रतिशत से 1.4 प्रतिशत अधिक होना कोई कम महत्व की बात नहीं है। हमारी मज़बूत होती अर्थव्यवस्था शेयर बाज़ारों के संवेदी सूचकांकों की बढ़त में साफ़ प्रतिबिंबित होती है। सकल घरेलू उत्पाद से उभरती अर्थव्यवस्था की शोख तस्वीर तथा बुनियादी क्षेत्र की वृद्धि दर पिछले वर्ष अक्तूबर महीने की 3.9 प्रतिशत की तुलना में इस वर्ष अक्तूबर महीने में बढ़कर 7 प्रतिशत होने की पुष्ट पृष्ठभूमि में 30 नवंबर को हमारे शेयर बाज़ारों में एक तरह से बाहर आ गई। बंबई शेयर बाज़ार का 30 शेयरों वाला संवेदी सूचकांक 116.5 अंकों की उछाल के साथ 19521.25 अंक पर और नेशनल स्टॉक एक्सचेंज का निफ्टी 22 अंकों की बढ़त के साथ 5862.70 अंक पर बंद हुआ।

कुछ आर्थिक विशेषज्ञों का कयास है कि हमारी अर्थव्यवस्था जिस तेज़ी, मुस्तैदी और मज़बूती से आगे बढ़ रही है, उसे देखते हुए दूसरी तिमाही की विकास दर 8.9 प्रतिशत से भी आगे निकल जाएगी। सरकार को पूरा विश्वास है कि इस वित्त वर्ष नौ प्रतिशत का विकास दर हासिल करना असंभव नहीं है। अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष ने वर्ष 2010 के कैलेंडर वर्ष के लिए 9.7 प्रतिशत विकास दर की भविष्यवाणी गत नवंबर में ही कर दी थी। अब उसके विचार में विकास दर दस अंक को भी पार कर सकती है। इधर संसद में पेश अर्द्धवार्षिक समीक्षा के अनुसार देश मंदी के दौर से पहले की स्थिति में पहुंचता जा रहा है और कोई बड़ी बात नहीं कि विकास दर, बेहतर स्थिति होने पर 9.15 प्रतिशत तक पहुंच जाए और स्थिति बिगड़ने पर 8.40 प्रतिशत तक रह जाए।

इस गुलाबी परिदृश्य में कृषि के बढ़ते योगदान से इंकार नहीं किया जा सकता। समग्र घरेलू विकास के तीन घटकों– सेवा, विनिर्माण और कृषि क्षेत्रों का अपना एक अलग और महत्वपूर्ण स्थान है। विकास दर के नौ प्रतिशत की सीमा को स्पर्श करने या उसके आसपास रहने में कृषि का योगदान निश्चित रूप से पहले से कहीं अधिक होगा। यह नकारात्मक ज़ोन से निकलकर इकाई के दायरे में काफी आगे बढ़ा है और बढ़ता जा रहा है। खरीफ की फ़सल से उत्साहवर्धक संकेत मिल रहे हैं। धान की फ़सल से भरपूर उत्पादन मिलने के तो काफी स्पष्ट संकेत प्राप्त हो चुके हैं। कुछ ऐसी ही उत्साहवर्धक स्थिति के आसार रबी फ़सल से भी मिल रहे हैं, क्योंकि जून से सितंबर तक और कुछ बाद भी मानसून की वर्षा अच्छी-खासी हुई है। स्मरण रहे पिछले वर्ष 2009 में 22 प्रतिशत वर्षा कम हुई थी।

कुल मिलाकर कह सकते हैं कि कृषि क्षेत्र की पिछले कुछ समय से मंद चाल ऊंची विकास दर हासिल करने में एक बड़ी बाधा बनी हुई थी। लेकिन अब इसके भूली-बिसरी दास्तां बनकर रह जाने की आशा की जा सकती है। इस वर्ष

कृषि विकास दर ग्यारहवीं पंचवर्षीय के चार प्रतिशत के अपने लक्ष्य को प्राप्त नहीं करेगी, बल्कि उसके इस लक्ष्य को पार कर छह से सात प्रतिशत तक पहुंच जाने की उम्मीद है। योजना आयोग के एक सदस्य का तो कहना है कि यह विकास दर सर्दियों की फ़सल रबी के मिजाज़ पर निर्भर करती है। इस बार मानसून का मिजाज़ अच्छा रहने के कारण फ़सल का मिजाज़ भी अच्छा चल रहा है। यह फ़सल प्राय: अक्तूबर में बोई और मार्च में काटी जाती है। इसमें कोई दो राय नहीं हो सकती कि हमारी खेती में मौसम और फ़सल दोनों का मिजाज़ एक ही फ्रीक्वेंसी पर रहे तो उपज बहुतायत से होती है। चंद स्थानों को छोड़ इस बार बरसात उत्साहवर्धक स्तर तक हुई। आशा के बलवती होने का एक अन्य कारण यह भी है कि गर्मियों की फ़सल खरीफ, पूरे उभार पर रही है। इसकी फ़सलों में चावल, दालें, गन्ना और कपास का भरपूर उत्पादन होने का अनुमान है। वैसे बिहार, झारखंड और पश्चिम बंगाल के कुछ हिस्सों में कम या नगण्य वर्षा हुई है, जिससे वहां धान वाले क्षेत्रों में बुआई पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। लेकिन अन्यत्र दक्षिण-पश्चिमी मानसून की अच्छी-खासी वर्षा होने के कारण जलाशय या तो लबालब भर गए हैं या उनमें जल-स्तर काफी ऊंचा और सकून देने वाले हैं। मिट्टी में नमी भी है जिससे इस वर्ष उत्पादन में नया कीर्तिमान स्थापित होने की आशा है। भंडारण और सरकारी खरीद में भी रिकार्ड कायम हो सकता है। वर्ष 2008-09 में एक हज़ार रुपये 2009-10 में 1,080 रुपये और 2010-11 में 1,100 रुपये न्यूनतम समर्थन मूल्य देने से भी किसान अधिक उत्पादन के लिए प्रेरित हुए हैं।

2005-06 से 2008-09 तक के वर्षों के दौरान अच्छी वर्षा होने के साथ-साथ किसानों की मेहनत मशक्कत के कारण भी अनाज उत्पादन में लगातार वृद्धि हुई है। 2008-09 में तो 23 करोड़ 38 लाख 80 हज़ार टन का रिकॉर्ड उत्पादन हुआ। लेकिन बाद में दुनियाभर में तेल मूल्यों के महंगा होने तथा मंदी का प्रकोप बढ़ने से विश्व की अर्थव्यवस्था प्रभावित हुई और इधर देश में इंद्र देव के कुछ नाराज़ होने पर दक्षिण-पश्चिम मानसून की वर्षा भी कम हुई। परिणाम यह हुआ कि कृषि और समवर्गी क्षेत्र में सकल घरेलू उत्पाद वर्ष 2009-10 में घटकर नकारात्मक जोन में 0.2 प्रतिशत रह गया। जबकि पिछले वर्ष वास्तविक वृद्धि दर भी मात्र 1.6 प्रतिशत ही रही। इसका कारण यह भी था कि उस वर्ष खरीफ मौसम में अनाजों की बुआई 6.5 प्रतिशत कम क्षेत्र में की गई।

इस वर्ष अग्रिम अनुमानों के अनुसार खरीफ फ़सल से 11 करोड़ 46 लाख से अधिक खाद्यान्न मिलने की आशा है जोकि 2009-10 के चौथे अग्रिम अनुमानों से 10.39 प्रतिशत अधिक है। कुल मिलाकर लगभग एक करोड़ 8 लाख टन अधिक उत्पादन होगा। इस बार दालों की उपज पहले से कहीं अधिक होने की भविष्यवाणी की गई है। जहां तक सकल घरेलू उत्पाद के तिमाही अनुमानों का संबंध है, 2010-11 की पहली तिमाही में यानी अप्रैल से जून तक कृषि और उसके समवर्गी क्षेत्रों में विकास दर 2.8 प्रतिशत रहेगी। जबकि पिछले वर्ष इस अवधि में यह दर 1.9 प्रतिशत था। इस बढ़त को देखते हुए बाद के अनुमानों के भी अधिक होने के आसार हैं और उन्हीं की वजह से, विकास दर 6-7 प्रतिशत के आसपास रह सकती है। जब हम पीछे मुड़कर देखते हैं तो पाते हैं कि छठी पंचवर्षीय योजना के सकल घरेलू उत्पाद की तुलना में कृषि विकास दर अधिक था। 1980 से 1985 तक के वर्षों में कृषि की विकास दर 5.7 प्रतिशत और सकल अर्थव्यवस्था की विकास दर 5.5 प्रतिशत थी। कृषि की ऐसी विकास दर अब शायद कभी देखने को नहीं मिलेगी। लेकिन इस बार पिछले कुछ वर्षों की तुलना में कृषि की विकास दर पर गर्व किया जा सकेगा। हालांकि भारत में कृषि उत्पादन मानसून के उतार-चढ़ाव पर काफी निर्भर करता है, फिर भी उसकी वृद्धि में किसानों के प्रयत्नों और सरकार की नीतियों के सुखद परिणामों की अनदेखी नहीं की जा सकती।

प्राय: प्रत्येक बजट में किसानों के कल्याण के लिए अनेक क़दम उठाए जाते रहे हैं। भारत गांवों में बसा है। इसलिए हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि कृषि हमारी अर्थव्यवस्था की जीवनरेखा है। यह खाद्य और आजीविका सुरक्षा के लिए आधार प्रदान करती है। कृषि क्षेत्र ने वर्ष 2008-09 में देश के सकल घरेलू उत्पाद में 15.7 प्रतिशत और कुल निर्यात में 10.23 प्रतिशत का योगदान किया। इतना ही नहीं उसने श्रम बल के लगभग 58.2 प्रतिशत के लिए रोज़गार जुटाया। गांवों की आमदनी बढ़ाने और ग्रामीण विकास की धुरी होने के नाते कृषि क्षेत्र के लिए 2010-11 के केंद्रीय बजट में लगभग 21.6 प्रतिशत की वृद्धि की गई है जो इस क्षेत्र के लिए योजना आवंटन का एक बड़ा क़दम और संभवत: कई वर्षों का यह सबसे बड़ा क़दम है। रुपये के आंकड़ों में बात करें तो ग्रामीण विकास के लिए धनराशि बढ़ाकर 66,100 करोड़ रुपये कर दी गई है। बजट में कृषि विकास की चर्चा करते हुए कहा गया है कि कृषि क्षेत्र समावेशी विकास को बढ़ावा देने, ग्रामीणों की आमदनी बढ़ाने और खाद्य सुरक्षा को बनाए रखने के सरकार के संकल्प का केंद्र बिंदु है। इस क्षेत्र के विकास की कार्यनीति के चार हिस्से हैं। इसमें कृषि उपज को बढ़ावा देना, उत्पादों की बरबादी रोकना, किसानों

की ऋणों के रूप में सहायता करना और खाद्य प्रसंस्करण पर ज़ोर देना शामिल है। पहले हिस्से में, देश के पूर्वी क्षेत्र में किसान सभाओं और किसान परिवारों के सक्रिय सहयोग से हरित क्रांति का विस्तार किया जाएगा। इस पूर्वी क्षेत्र में बिहार, झारखंड, छत्तीसगढ़, पूर्वी उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल और ओड़िशा शामिल हैं। वर्षापोषित क्षेत्रों में 60 हज़ार दलहन और तेल-बीज गांवों की स्थापना करने और जल-संचयन, जल-संभरण, प्रबंधन और मिट्टी की गुणवत्ता के लिए समन्वित प्रयास किया जाएगा, ताकि शुष्क भूमि वाले कृषि इलाक़ों की उत्पादकता बढ़ाई जा सके।

दूसरे हिस्से के अंतर्गत भंडारण और खाद्य आपूर्ति शृंखलाओं के संचालन में अनाज की बर्बादी रोकी जाएगी।

तीसरे हिस्से में किसानों के लिए ऋण उपलब्धता को सहज और सुचारू बनाया जाएगा। फ़सल ऋणों का समय पर भुगतान करने पर ब्याज़ में एक प्रतिशत की अतिरिक्त राहत-सहायता बढ़ाकर दो प्रतिशत कर दी गई है। चौथे हिस्से के अंतर्गत अत्याधुनिक बुनियादी ढांचे की व्यवस्था करके खाद्य प्रसंस्करण क्षेत्र के विकास को बढ़ावा दिया जाएगा। वर्तमान में स्थापित की जा रही दस बड़ी खाद्य पार्क परियोजनाओं के अलावा ऐसे पांच और पार्क बनाए जाएंगे। कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिए मधुमक्खी पालन, बागवानी, डेरी, मुर्गीपालन, मांस, समुद्री मत्स्यपालन और जलजीव पालन में प्रौद्योगिकी के प्रयोग में कोई कंजूसी या कोताही नहीं बरती जाएगी। इन उद्देश्यों को पाने के लिए मशीनों के आयात शुल्कों में रियायतें देने, उपकरणों को लगाने में सेवाकर में छूट देने, शीत भंडारों, शीत कक्षों और प्रसंस्करण इकाइयों को सेवाकर से पूरी छूट देने या प्रशिक्षित वैनों या ट्रकों को बनाने के लिए आवश्यक प्रशीतन इकाइयों को सीमा-शुल्क की पूरी छूट देने जैसे कुछ प्रस्ताव किए गए हैं। इसी तरह कृषि कार्यों में प्रयुक्त होने वाली विशिष्ट मशीनों और ट्रेलरों के कहीं सीमा शुल्कों में तो कहीं उत्पाद शुल्कों में रियायतें दी गई हैं। बागान क्षेत्र के लिए निर्दिष्ट मशीनों के आयात शुल्क में रियायत देने की अवधि बढ़ाने, रोगरोधी बीजों के परीक्षणों और प्रमाणन को सेवाकर से मुक्त करने तथा सड़क मार्ग से अनाजों और दालों की ढुलाई को सेवाकर से छूट देने का प्रावधान भी इस बजट में किया गया है।

आर्थिक मंदी से बुरी तरह प्रभावित लघु क्षेत्र के विनिर्माताओं के लिए नकदी प्रवाह सहज बनाने के लिए भी क़दम उठाए गए हैं।

बजट में ग्रामीण क्षेत्रों और वहां के निवासियों के लिए अनेक योजनाओं के विस्तार और सुधार आदि की दिशा में भी महत्वपूर्ण क़दम उठाए गए हैं। महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारंटी योजना के तहत काम का पारिश्रमिक बढ़ाकर सौ रुपये कर दिया गया। ग्रामीण बुनियादी ढांचे के सुधार के लिए बने कार्यक्रम भवन निर्माण के लिए आवंटन 261 प्रतिशत बढ़ा दिया गया है। इस कार्यक्रम के छह हिस्से हैं जिनमें ग्रामीण सड़कें, टेलीफोन, सिंचाई, पेयजल-आपूर्ति, आवास और विद्युतीकरण शामिल हैं। इसी तरह कमज़ोर लोगों के लिए मकान बनाने की इंदिरा आवास योजना के अंतर्गत प्रति मकान लागत बढ़ाकर मैदानी क्षेत्रों में 45,000 रुपये और पहाड़ी क्षेत्रों में 48,500 रुपये कर दी गई है। बहुचर्चित बुंदेलखंड क्षेत्र में सूखे का प्रकोप कम करने के लिए भी 1200 करोड़ रुपये की अतिरिक्त केंद्रीय सहायता प्रदान की गई है। ❑

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं)

CSAT

प्रारंभिक परीक्षा-2011 के संदर्भ में

आवश्यक जानकारी!!!

भारत सरकार के निर्णय के अनुसार 2011 से प्रारंभिक परीक्षा का पाठ्यक्रम एवं प्रारूप बदल जाएगा। प्रारंभिक परीक्षा में अब दो अनिवार्य पत्र होंगे। **पहले पत्र** में वे सभी भाग सम्मिलित होंगे जिन्हें आपने सामान्य अध्ययन के अंतर्गत पढ़ा है। परंतु **दूसरा पत्र** आपके लिए बिल्कुल नया है। आप इस पत्र के शीर्षकों के नाम देख सकते हैं :

★ Comprehension; ★ Inter-Personal Skills including Communication Skills; ★ Logical Reasoning and Analytical Ability; ★ Decision-Making and Problem-Solving; ★ General Mental Ability; ★ Basic Numeracy (Class X level), Data Interpretation, Data Sufficiency (Class X level); ★ English Language Comprehension Skill (Class X level).

क्या आप अचंभित हैं? क्या आप डरे हुए हैं? क्या आप घबराए हुए हैं? क्या आप भ्रमित हैं? क्या आप...

आपको और अधिक चिंता करने की जरूरत नहीं है।

BSC (Banking Services Chronicle)

की टीम आपको इस कठिन परिस्थिति से निकालने के लिए उपस्थित है।

★ टीम को इस क्षेत्र का 17 वर्षों का अनुभव है।

★ टीम में शामिल हैं मशहूर लेखक जैसे–एम. टायरा (Quicker Maths), एम.के. पाण्डेय (Analytical Reasoning), चेतनानंद सिंह (English is Easy), प्रभात-जावेद (Non-Verbal Reasoning), के. कुन्दन (Commonsense Reasoning) एवं अन्य कई।

★ टीम उपलब्ध करा रही है : क्लासरूम कोचिंग, पत्राचार कोर्स, मॉक-टेस्ट शृंखला एवं एक विस्तृत अध्ययन सामग्री।

क्लास रूम कोचिंग (हिन्दी एवं अंग्रेजी माध्यम में) के लिए संपर्क करें :

दिल्ली : **मुखर्जी नगर :** फो. : 011-64703671, 09999398128, 09015089453; **बेर सराय :** फो. : 011-65697770, 09953736391; **गणेश नगर :** फो. : 011-65252855, 65252856, 65252857; **द्वारका :** फो. : 011-65166405, 9958348225; **रोहिणी :** फो : 09891126109 09968559576

पटना : Mob. : 09835438437, 09334851844, 09334832722

चंडीगढ़ : फो. 0172-2772727 (M) : 9216545844

लखनऊ : Mob. : 09911098784

(i) **पत्राचार कोर्स + 30 मॉक-टेस्ट** (फीस : ₹ 6600, अवधि : जनवरी से अप्रैल);

(ii) **30 मॉक-टेस्ट** (फीस : ₹ 3300, अवधि : फरवरी से अप्रैल); **"BSC Correspondence Course (P) Ltd."** के पक्ष में एवं "दिल्ली" में देय **डिमांड ड्राफ्ट** निम्नलिखित पते पर भेजिए :

"BSC Publishing Company (P) Ltd., C-37, Ganesh Nagar, Pandav Nagar Complex, Delhi-110092; Ph.: 011-65252855, 65252856, 65252857".

Join the club of winners before your competitors do.

विस्तृत विवरण के लिए हमारी मासिक पत्रिका पढ़ें : **"Banking Services Chronicle"**

YH-1/11/9

भारत में कृषि : चुनौतियां एवं समस्याएं

● अनीता मोदी

कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की केंद्रबिंदु व भारतीय जीवन की धुरी है। आर्थिक जीवन का आधार, रोज़गार का प्रमुख स्रोत तथा विदेशी मुद्रा अर्जन का माध्यम होने के कारण कृषि को देश की आधारशिला कहा जाए तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। देश की कुल श्रमशक्ति का लगभग 52 प्रतिशत भाग कृषि एवं कृषि से संबंधित क्षेत्रों से ही अपना जीविकोपार्जन कर रही हैं। अत: यह कहना समीचीन होगा कि कृषि के विकास, समृद्धि व उत्पादकता पर ही देश का विकास व संपन्नता निर्भर है।

स्वतंत्रता के पश्चात कृषि को देश की आत्मा के रूप में स्वीकारते हुए एवं खेती को सर्वोच्च प्राथमिकता प्रदान करते हुए देश के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने स्पष्ट किया था कि "सब कुछ इंतजार कर सकता है मगर खेती नहीं।" इसी तथ्य का अनुसरण करते हुए भारत सरकार कृषि क्षेत्र को विकसित करने एवं कृषकों की आर्थिक स्थिति में सुधार करने हेतु अनेक कार्यक्रमों, नीतियों व योजनाओं का संचालन कर रही है। सरकार ने वर्ष 1960-61 में भूमि सुधार कार्यक्रम का सूत्रपात किया जिससे किसानों को भूमि का मालिकाना हक़ प्राप्त हुआ। इसी प्रकार सरकार ने भू-जोतों की अधिकतम सीमा तथा चकबंदी जैसे कार्यक्रमों को प्राथमिकता प्रदान की जिससे कृषक वर्ग लाभान्वित हो सके।

इसी क्रम में, कृषि विकास में वित्त की भूमिका को दृष्टिगत रखते हुए सरकार ने किसानों को उचित ब्याज दरों पर, सही समय पर ऋण उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए संस्थागत साख व्यवस्था को प्राथमिकता प्रदान की। इसके लिए सहकारी ऋण व्यवस्था, बैंकों के राष्ट्रीयकरण, नाबार्ड व क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थापना जैसे प्रभावी क़दम उठाए गए। ज्ञातव्य है कि वर्ष 1950-51 में कृषि साख में संस्थागत साख का योगदान मात्र 3.1 प्रतिशत था जोकि वर्तमान में बढ़कर 55 प्रतिशत से अधिक हो गया है। किसानों को आसानी से अल्पावधि ऋण उपलब्ध कराने हेतु वर्ष 1998-99 में 'किसान क्रेडिट योजना' प्रारंभ की गई। रिज़र्व बैंक की रिपोर्ट 2009-10 के मुताबिक इस योजना के तहत अब तक 3,50,80,000 किसान क्रेडिट कार्ड जारी किए जा चुके हैं जिनकी कुल ऋण आवंटन सीमा 1,97,607 करोड़ रुपये है। स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से भी नाबार्ड किसानों की आर्थिक स्थिति सुधारने हेतु प्रयासरत है। इसी प्रकार ग्राम आधारित विकास फंड की स्थापना गांवों में आधारभूत संरचना को सुदृढ़ करने हेतु की गई ताकि किसान वर्ग इससे लाभान्वित हो सके तथा कृषि विकास को सुनिश्चित किया जा सके। ज्ञातव्य है कि वर्ष 2008-09 में कृषि ऋण की राशि 2,87,000 करोड़ रुपये दर्ज़ की गई। वर्ष 2009-10 के लिए कृषि वित्त हेतु 3,25,000 करोड़ रुपये के ऋण प्रवाह का लक्ष्य रखा गया था जिसे बढ़ाकर 2010-11 में 3,75,000 करोड़ रुपये कर दिया गया है। इन सबके कारण किसान महाजनों व साहूकारों के ऋण जाल से कुछ सीमा तक मुक्त हुए हैं तथा कृषि विकास का मार्ग प्रशस्त हुआ है।

कृषि का विकास व संपन्नता कृषि उत्पादन वृद्धि के साथ ही उत्पादित उपज के उचित मूल्य प्राप्ति पर भी निर्भर है। गौरतलब है कि देश के अधिकांश छोटे किसान ग़रीबी के दुष्चक्र में जकड़े हुए हैं। ग़रीबी तथा ऋणग्रस्तता के कारण किसान अपनी उपज कम क़ीमतों पर बिचौलियों को बेचने के लिए बाध्य हैं। इन बिचौलियों के जाल से किसानों को मुक्त करवाने तथा विपणन व्यवस्था में सुधार लाने हेतु सरकार ने नियंत्रित मंडियों के विस्तार, कृषि उपज के श्रेणीकरण व प्रभावीकरण, माल गोदामों की व्यवस्था, बाज़ार एवं मूल्य संबंधी सूचनाओं का प्रसारण व सहकारी विपणन व्यवस्था का प्रबंधन जैसे महत्वपूर्ण क़दम उठाए हैं। राष्ट्रीय कृषि विपणन संस्थान की स्थापना भी इसी दिशा में उठाया गया एक महत्वपूर्ण क़दम है। यह संस्थान कृषि विपणन में विशिष्ट शिक्षण, प्रशिक्षण एवं अनुसंधान की सेवाएं प्रदान करते हुए कृषि विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। इसके अतिरिक्त कृषि उपज की विपणन व्यवस्था को सरल व सुचारू बनाने हेतु गांवों को निकटवर्ती शहरों से जोड़ने हेतु 'भारत निर्माण' योजना के अंतर्गत ग्रामीण सड़कों के निर्माण पर सर्वाधिक ज़ोर दिया जा रहा है। गौरतलब है कि भारत निर्माण योजना के अंतर्गत ग्रामीण क्षेत्रों के सिंचाई, सड़क, जलापूर्ति, आवास, विद्युतीकरण व दूरसंचार विकास को प्राथमिकता प्रदान की जा रही है ताकि कृषि के विकास व उत्पादकता हेतु आधारभूत संरचना को सुदृढ़ किया जा सके। इस कार्यक्रम के अंतर्गत इन सब सिंचाई परियोजनाओं को पूरा करने का प्रावधान भी रखा गया है जोकि वित्त के अभाव के कारण अधर में लटकी हुई है।

भारतीय कृषि ज़ोखिमभरा है। इस तथ्य को दृष्टिगत रखते हुए सरकार कृषि उत्पादों की

क़ीमतों में गिरावट के कारण संभाव्य हानि से किसानों को सुरक्षा प्रदान करने हेतु प्रतिवर्ष समर्थन मूल्यों की घोषणा करती है। इसी प्रकार किसानों को प्राकृतिक आपदाओं से सुरक्षा प्रदान करने हेतु 'फ़सल बीमा योजना' प्रारंभ की गई जिसे बाद में 'व्यापक फ़सल योजना' तथा वर्तमान में 'राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना' के रूप में क्रियान्वित किया जा रहा है। यही नहीं कृषिगत निर्यातों के विकास हेतु कृषि निर्यात क्षेत्रों को भी स्थापित किया गया है। चिंता का विषय यह है कि देश में प्रतिवर्ष 21 प्रतिशत फ़सल कीड़े-मकोड़े व बीमारियों के कारण नष्ट हो जाती है जिसको नियंत्रित करने हेतु 'पौध संरक्षण कार्यक्रम' का सूत्रपात किया गया तथा कीटाणुनाशक दवाइयों के उपयोग पर बल दिया गया। कृषि क्षेत्र में प्रतिस्पर्धी बनने तथा उत्पादकता बढ़ाने हेतु कृषि में 'यंत्रीकरण' को प्रोत्साहित किया गया है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए किसानों को कम ब्याज दर पर ट्रैक्टर, पंपसेट व मशीनरी आदि ख़रीदने के लिए ऋण उपलब्ध कराया जा रहा है तथा कृषिगत यंत्रों की किराया क्रय पद्धति व्यवस्था करने हेतु 'कृषि उद्योग निगम' की स्थापना की गई है।

इसी प्रकार, बागवानी उत्पादों को प्रोत्साहित व प्रेरित करने तथा बागवानी क्षेत्र के समग्र विकास हेतु वर्ष 2005-06 में 'राष्ट्रीय बागवानी मिशन' प्रारंभ किया गया। इस योजना के बदौलत बागवानी में संलग्न किसानों की आय में बढ़ोतरी हुई है, कुशल और अकुशल श्रमिकों के लिए रोज़गार के द्वार खुले हैं। इस मिशन के अंतर्गत बागवानी में 6 प्रतिशत वृद्धि का लक्ष्य रखा गया ताकि वर्ष 2010-12 तक बागवानी उत्पादन को दोगुना किया जा सके। वर्ष 2009-10 के दौरान इस योजना के लिए 1,100 करोड़ रुपये ख़र्च करने का प्रावधान रखा गया था। गौरतलब है कि बागवानी क्षेत्र का कृषि में 28.5 प्रतिशत योगदान है।

कृषि व संबद्ध क्षेत्रों का संपूर्ण विकास सुनिश्चित करने, कृषि में सार्वजनिक निवेश बढ़ाने तथा ग्याहरवीं योजना में कृषि में 4 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि हासिल करने के उद्देश्य से वर्ष 2007 में 'राष्ट्रीय कृषि विकास योजना' का सूत्रपात किया गया। इस योजना के लिए सरकार ने 25,000 करोड़ का प्रावधान रखा। इस योजना के अंतर्गत राज्यों को कृषि व संबद्ध क्षेत्रों में सार्वजनिक निवेश बढ़ाने, कृषि व इससे संबंधित क्षेत्रों की योजनाओं के आयोजन व क्रियान्वयन में स्वायत्तता व लचीलापन प्रदान करने की कोशिश की गई है। इस योजना के अधीन वर्ष 2009-10 के दौरान राज्य सरकारों तथा केंद्रशासित प्रदेश के प्रशासनों को 4,100 करोड़ रुपये जारी किए गए हैं। इसी क्रम में राष्ट्रीय कृषक आयोग की सिफ़ारिशों को दृष्टिगत रखते हुए वर्ष 2007 में राष्ट्रीय कृषक नीति का शुभारंभ किया गया। इस नीति के अंतर्गत कृषि उत्पादन, उत्पादकता व किसानों की परिसंपति में सुधार सुनिश्चित करते हुए उनकी आर्थिक स्थिति को उन्नत करने का लक्ष्य रखा गया। इसके अतिरिक्त, इस नीति में कृषि क्षेत्र में जल के कुशल उपयोग व बीमा सेवाओं के विस्तार तथा नवीन प्रौद्योगिकी के प्रयोग को बढ़ावा देने की दिशा में सार्थक पहल की गई। नयी कृषि नीति में सभी कृषिगत उपजों के न्यूनतम समर्थन मूल्य घोषित करने तथा सूखा व वर्षा संबंधी आपदाओं से किसानों की सुरक्षा के लिए 'एग्रीकल्चर रिस्क फंड' की स्थापना पर ज़ोर दिया गया।

किसानों में आत्महत्या की बढ़ती प्रवृत्ति को रोकने के लिए सरकार ने वर्ष 2008-09 के बजट में लगभग 4 करोड़ किसानों के कर्ज़ माफ करने हेतु 60 हज़ार करोड़ रुपये का प्रावधान किया ताकि किसानों का खेती के प्रति रुझान बना रहे। राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन के तहत भी किसानों को बीज, कृषि मशीनरी, संसाधन अनुरक्षण तकनीकों, मृदा परिवर्तन तथा प्रशिक्षण आदि की उपलब्धता प्रदान करने का प्रयास किया गया ताकि ग्याहरवीं योजना के चावल, गेहूं व दाल के उत्पादन के अभीष्ट लक्ष्यों की प्राप्ति संभव हो सके। इस मिशन पर ग्याहरवीं पंचवर्षीय योजना (2007-12) के दौरान कुल परिव्यय 4,882.5 करोड़ रुपये का रखा गया है तथा यह योजना देश के 17 राज्यों के 312 जिलों में लागू की जा रही है।

छठे दशक के मध्य में प्रारंभ की गई हरित क्रांति की सफलता को दृष्टिगत रखते हुए सन् 2006 में आयोजित सम्मेलन में दूसरी हरित क्रांति की संकल्पना रखी गई। इस संकल्पना में नवीन कृषि तकनीक को वर्षाधीन खेती वाले क्षेत्रों में पहुंचाने के साथ ही इन्हें छोटे और सीमांत कृषकों द्वारा उपयोग में समर्थ बनाने पर भी ज़ोर दिया गया है। इसी क्रम में देश के प्रमुख कृषि वैज्ञानिक एवं राष्ट्रीय किसान आयोग के अध्यक्ष डॉ. एम. एस. स्वामीनाथन ने इस 'एवरग्रीन रिवॉल्यूशन' के तहत देश के वार्षिक खाद्यान्न उत्पादन को वर्तमान के 2.10 करोड़ टन के स्तर से दुगुना करके 4.20 करोड़ टन करने का लक्ष्य रखा। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु उन्होंने कृषि में विज्ञान की सर्वश्रेष्ठ तकनीकों के उपयोग व जैविक कृषि में शोध को बढ़ावा देने पर ज़ोर दिया। इसके साथ ही मिट्टी के स्वास्थ्य को सुधारने तथा वर्षा जल संरक्षण को अनिवार्य बनाने तथा उचित मूल्यों पर किसानों को साख उपलब्ध कराने की दिशा में सार्थक क़दम उठाने की आवश्यकता प्रतिपादित की।

भारतीय कृषि क्षेत्र को मज़बूत आधार प्रदान करने के लिए सरकार कृषि क्षेत्र में अधिक निवेश करने, राज्यों के बजट में कृषि को प्राथमिकता देने हेतु प्रोत्साहित करने, नवीन कृषि तकनीक के उपयोग को प्रेरित करने तथा कृषि उत्पादन में आने वाली समस्त बाधाओं का निवारण करने हेतु सतत प्रयास कर रही है। राष्ट्रीय किसान आयोग (2004-06) ने देश में कृषि की प्रगति सुनिश्चित करने हेतु जलवायु के अनुकूल कृषि आर्थिक तकनीकों के इस्तेमाल तथा हरित क्रांति से लाभान्वित प्रदेशों में अनाज संरक्षण की व्यवस्था अपनाने पर ज़ोर दिया है, जिस पर क्रियान्वयन प्रारंभ कर दिया गया है। कृषि को समुन्नत बनाने हेतु ग्याहरवीं पंचवर्षीय योजना में मृदा संरक्षण, जल संरक्षण, जल स्रोतों के पुनरुद्धार, ऋण व बीमा सुधार, विपणन व्यवस्था एवं प्रौद्योगिकी व आगत आपूर्ति में सुधार पर ज़ोर दिया गया है। फ़सल की उत्पादकता में मिट्टी की किस्म, पोषक तत्व व जलग्रहण क्षमता के महत्व को दृष्टिगत रखते हुए गांवों में सचल मिट्टी परीक्षण इकाइयां स्थापित की गईं। इसी प्रकार किसानों को कृषि, पशुपालन, मत्स्यपालन आदि से संबंधित सूचनाएं शीघ्र व समय पर उपलब्ध कराने हेतु ग्राम संसाधन केंद्रों की स्थापना की गई है।

इन सब प्रयासों व योजनाओं के क्रियान्वयन के बावजूद वर्तमान में कृषि अर्थव्यवस्था संकट के दौर से गुज़र रही है। वैश्वीकरण के इस प्रतिस्पर्धी युग में कृषि व कृषकों पर ख़तरे के बादल मंडरा रहे हैं। विडंबना है कि राष्ट्रीय आय में कृषि का अंश उत्तरोत्तर कम होता जा रहा है जबकि कृषि में संलग्न कार्यशील जनसंख्या का अनुपात लगभग स्थिर-सा है। दोषपूर्ण भू-धारण प्रणाली, उपविभाजन एवं अपखंडन के परिणामस्वरूप अनार्थिक जोतों की संख्या में बढ़ोतरी हो रही है। ज्ञातव्य है कि देश की

लगभग 78 प्रतिशत कृषि जोतें 2 हेक्टयर से कम की हैं। इसी प्रकार अभी भी कृषिगत भूमि का दो तिहाई भाग मानसून का जुआ है, केवल एक तिहाई भाग ही सिंचित है। ऐसी निराशाजनक स्थिति में सूखा, तूफान, बाढ़ व ओलावृष्टि जैसी प्राकृतिक आपदाओं का क़हर भी किसानों को झेलना पड़ता है तथा इन अप्रत्याशित संकटों के कारण किसान ऋण जाल में फंस जाते हैं। निराशाजनक तथ्य यह है कि ऋण जाल के दुष्चक्र में फंसे किसानों में आत्महत्या की घातक प्रवृत्ति बढ़ रही है जोकि देश में विकास के नाम पर कलंक है। जनवरी 2010 में राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरों ने अपनी रिपोर्ट में यह चिंताजनक अनुमान प्रस्तुत किया कि वर्ष 1997 से वर्ष 2008 के मध्य देश के लगभग 2 लाख किसानों को ऋण व अन्य विभिन्न कारणों से आत्महत्या करने पर विवश होना पड़ा। कृषि वित्त, भंडारण एवं विपणन की अपर्याप्त एवं दोषपूर्ण व्यवस्था के कारण भी अधिकांश लघु किसानों को अपनी फ़सल का उचित मूल्य प्राप्त नहीं हो पाता है जिसके कारण किसान के लिए परिवार का पेट पालना दुष्कर होता जा रहा है। इसी भांति, कृषिगत आगतों की बढ़ती क़ीमतें, गिरते भू-जल स्तर एवं भूमि की घटती उर्वरता के कारण कृषि घाटे का सौदा बन गई है। इसी कारण खेती से किसानों का मोहभंग हो रहा है, खेती के प्रति किसानों की उदासीनता बढ़ती जा रही है जोकि देश की खाद्य सुरक्षा के लिए ख़तरे का संकेत है। राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण में भी इस तथ्य को पुष्ट करते हुए बताया गया है कि देश के 40 प्रतिशत किसान खेती छोड़कर अन्य वैकल्पिक रोज़गार पाना चाहते हैं।

देश में कृषि की धुंधली तस्वीर के लिए कृषि की उत्पादकता का निम्न स्तर भी जिम्मेदार है। ज्ञातव्य है कि हमारे देश में कृषि की उत्पादकता अन्य देशों की अपेक्षा काफी कम है। उदाहरण के तौर पर देश में चावल की प्रतिहेक्टेयर उत्पादकता जापान की अपेक्षा एक-तिहाई है जबकि गेहूं की प्रतिहेक्टेयर उत्पादकता फ्रांस की तुलना में एक-तिहाई है। इसी प्रकार हमारे देश में कृषि क्षेत्र में प्रति श्रमिक उत्पादकता अमरीका की तुलना में 23 प्रतिशत तथा जर्मनी की तुलना में मात्र 33 प्रतिशत ही है। यही कारण है कि सकल आय में कृषि का अंश उत्तरोत्तर कम होता जा रहा है। वर्ष 1950-51 में कृषि का अंश 55.4 प्रतिशत था जोकि वर्ष 2009-10 में घटकर लगभग 14.6 प्रतिशत रह गया है।

ज्ञातव्य है कि वैश्वीकरण व उदारीकरण की लहरें भी कृषि अर्थव्यवस्था पर कुठाराघात कर रही हैं। देश में कृषि की विकास दर अस्सी के दशक की अपेक्षा नब्बे के दशक में कम हो गई है। आठवीं पंचवर्षीय योजना में कृषि की विकास दर 4.7 प्रतिशत दर्ज़ की गई जोकि घटकर नौवीं पंचवर्षीय योजना में मात्र 2.1 प्रतिशत रह गई। वर्ष 2002-03 में कृषि विकास दर ऋणात्मक रही जबकि वर्ष 2004-05 में कृषि विकास दर मात्र 1.1 प्रतिशत रही जोकि सकल घरेलू उत्पाद की विकास दर 6.9 प्रतिशत से काफी कम थी। वर्ष 2009 के दौरान व्यापक सूखा पड़ने के कारण कृषि विकास दर में 0.2 प्रतिशत गिरावट आ गई। ज्ञातव्य है कि 2010-11 वित्त वर्ष की दूसरी तिमाही में कमज़ोर मानसून के कारण कृषि उत्पादन में वृद्धि मात्र 0.9 प्रतिशत ही दर्ज़ की गई है जिसे बढ़ाने के लिए प्रभावी क़दम शीघ्र उठाने की आवश्यकता है।

वैश्वीकरण व उदारीकरण की नीतियों के तहत भारतीय बाज़ार के द्वार विदेशी कृषि उत्पादों के लिए खोल दिए जाने पर देश की कृषि व्यवस्था पर संकट के बादल छा रहे हैं। उच्च लागत व उच्च क़ीमतों के कारण हमारे कृषि उत्पाद विदेशी प्रतिस्पर्द्धा का सामना नहीं कर पा रहे हैं। इसके अतिरिक्त, विकसित देशों के द्वारा अपने किसानों व कृषि उत्पादों से संबंधित विविध कंपनियों को भारी मात्रा में अनुदान दिया जा रहा है जिसके कारण हमारे बाज़ारों में भी विदेशी कृषि उत्पादों का वर्चस्व बढ़ता जा रहा है। विश्व व्यापार संगठन की नीति को मूर्तरूप प्रदान करते हुए भारत में भी कॉरपोरेट खेती को प्राथमिकता दी जा रही है जिसके कारण कृषि की बागडोर बहुराष्ट्रीय निगमों के हाथों में पहुंच रही है। इन सबके कारण देश में लघु व सीमांत किसानों की आजीविका पर प्रश्नचिह्न लग गया है। लाखों किसान खेतों में मज़दूरी करने के लिए विवश हो गए तथा अनेक गावों से शहरों की तरफ रोज़गार की तलाश में पलायन करने को मज़बूर हैं। इस संदर्भ में यह तथ्य भी उल्लेखनीय है कि ये कंपनियां लाभ को अधिकाधिक करने हेतु बहुतायत में रासायनिक उर्वरकों व कीटाणुनाशकों का इस्तेमाल करके भूमि की उर्वरा को समाप्त करने पर तुली हैं। भूमि की बंजरता बढ़ने के कारण देश में कृषि उत्पादकता शनैःशनैः कम होती जा रही है जिस पर शीघ्र ध्यान देने की आवश्यकता है। कृषि में सरकारी निवेश में कमी आने से छोटे व सीमांत कृषकों की स्थिति निराशाजनक हो गई है। ज्ञातव्य है कि वर्ष 1993-94 में कृषि क्षेत्र के कुल निवेश में सरकारी निवेश का अंश लगभग 33 प्रतिशत था जोकि घटकर 1998-99 में 23.6 प्रतिशत तथा वर्ष 2001 में 21 प्रतिशत रह गया।

जलवायु परिवर्तन के कारण भी कृषि पर प्रतिकूल प्रभाव परिलक्षित हो रहे हैं। तापमान में वृद्धि के कारण धान के उत्पादन में कमी दर्ज़ की जा रही है, जल संकट की विभीषिका बढ़ती जा रही है, सिंचाई हेतु पर्याप्त जल उपलब्ध नहीं होने के कारण फ़सलें बरबाद हो रही हैं। जलवायु परिवर्तन के कारण अर्द्धशुष्क क्षेत्रों व शुष्क क्षेत्रों में कृषि व्यवस्था पर प्रश्नचिह्न लग जाएगा तथा सिंचाई हेतु जल प्राप्त नहीं होने से कृषि चौपट हो जाएगी। इसी संदर्भ में हमें इस तथ्य पर भी ध्यान देना होगा कि जलवायु परिवर्तन के साथ उचित जल प्रबंधन व जल उपयोग व्यवस्था विद्यमान नहीं होने के कारण देश में भू-जल स्तर तेज़ी से गिरता जा रहा है। डार्क जोन एरिया में वृद्धि हो रही है जिसके कारण कृषि व्यवस्था की स्थिति निराशाजनक होती जा रही है। जलवायु परिवर्तन के कारण मिट्टी की उर्वरा में कमी आने, लवणता बढ़ने तथा जैव विविधता में ह्रास होने की वजह से कृषि व्यवस्था पर विपरीत प्रभाव पड़ने की संभावना व्यक्त की जा रही है।

वैश्वीकरण के इस युग में कृषि को प्रतियोगी बनाकर ही इनके संभावित ख़तरों से बचते हुए कृषि को लाभदायक क्षेत्र के रूप में परिवर्तित करना संभव है। परिवर्तन व प्रतियोगिता समय की मांग है, इसी तथ्य का अनुसरण करते हुए कृषि व्यवस्था में सुधार करने, कृषि तकनीक व्यवस्था में परिवर्तन करने तथा जलवायु परिवर्तन के क़हर से बचने के लिए प्रभावी व्यूहरचना का क्रियान्वयन ज़रूरी है। कृषि को विकास पथ पर अग्रसर करने एवं प्रतियोगी बनाने हेतु निम्न सुझावों पर क्रियान्वयन ज़रूरी है :

- केवल परंपरागत फ़सलों को उगाकर ही किसान समृद्ध नहीं हो सकते, बदलती मांग व क़ीमतों के अनुरूप फ़सल प्रतिरूप में परिवर्तन भी आवश्यक है। प्राकृतिक विधि व जैविक खाद के उपयोग से उगाए गए खाद्य पदार्थों की मांग अमरीका, यूरोप व जापान में तेज़ी से

बढ़ रही है। इस बढ़ती मांग के अनुरूप उत्पादन करके किसानों को लाभ उठाने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए। शुष्क खेती, जल संरक्षण, कुशल व दक्ष सिंचाई व्यवस्था, जैविक खेती व कृषि शोध एवं विस्तार पर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। किसानों को छिड़काव सिंचाई विधि का प्रयोग बढ़ाने के लिए प्रेरित करना चाहिए।

- अनाज, तिलहन, दाल, गन्ना व कपास की फ़सलों की उत्पादकता वृद्धि के लिए अधुनातन विधियों को अपनाने के लिए किसानों को प्रेरित किया जाना चाहिए ताकि वे अंतरराष्ट्रीय प्रतियोगिता में टिक सकें। भारत का विश्व में फलों व दुग्ध उत्पादन में प्रथम व सब्ज़ियों के उत्पादन में दूसरा स्थान होने के बावजूद इनके उत्पादन के केवल दो प्रतिशत भाग का ही प्रसंस्करण होता है। अमरीका में किसानों को उनकी आय का 70 प्रतिशत, मलेशिया में 80 प्रतिशत, ब्राज़ील में 70 प्रतिशत व थाईलैंड में 30 प्रतिशत कृषि उत्पादों के प्रसंस्करण से मिल रहा है जबकि भारत में किसानों को प्रसंस्करण से अपनी आय का केवल 2 प्रतिशत अंश प्राप्त होता हैं। अत: गांवों में ही विभिन्न फलों व सब्ज़ियों की प्रसंस्करण इकाइयों की एक शृंखला स्थापित करके किसानों के लाभ में वृद्धि किया जाना संभव है। गांवों में कृषि आधारित उद्योगों का जाल बिछाकर कृषि में अपेक्षित सुधार किया जाना संभव है।

कृषि उत्पाद नाशवान हैं। भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में शीतगृहों की सुविधा उपलब्ध नहीं होने के कारण 15 से 20 प्रतिशत उत्पाद सड़ जाता है। 55 प्रतिशत गांवों में बीज भंडारण व्यवस्था नहीं है, 80 प्रतिशत गांवों में कृषि औजारों के मरम्मत की सुविधा नहीं है व 60 प्रतिशत गांवों में बाज़ार केंद्र नहीं है। इन आधारभूत सुविधाओं के अभाव में किसान उदारीकरण व वैश्वीकरण-जनित प्रतियोगिता का सामना करने में सक्षम नहीं है। अत: ग्रामों में गोदामों, शीतगृहों व बीज भंडारण की व्यवस्था को प्राथमिकता देनी होगी साथ ही कृषि उत्पाद को लाने-ले-जाने के लिए वातानुकूलित वाहनों की व्यवस्था पर भी ध्यान देना अपेक्षित है।

कृषि में ज़ोखिम अधिक है अत: इससे किसानों को सुरक्षा कवच प्रदान करने के लिए फ़सल बीमा योजना को व्यापक व तार्किक बनाते हुए बीमा प्रीमियम दर कृषकों की आय के अनुपात में रखना न्यायसंगत होगा। इसके साथ विकसित देशों का मुक़ाबला करने के लिए कृषि को उद्योग का दर्ज़ा देते हुए उसे व्यावहारिक बनाने की कोशिश करनी चाहिए। ग्रामीण अधोसंरचना के विकास को प्राथमिकता देकर ही कृषि को अधिक प्रतियोगी व लाभप्रद बनाना संभव है। ग्रामीण विकास के इस महाभियान में पंचायती राज संस्थाओं व ग्राम सभाओं को भी वृहद जिम्मेदारियां निभानी होगी।

चूंकि विकास दर बढ़ाने का मूलमंत्र कृषि ही है अतएव इस क्षेत्र के लिए ठोस व प्रभावी नीतियों के क्रियान्वयन से ही संपूर्ण अर्थव्यवस्था की धुंधली होती तस्वीर को उजला बनाना संभव है। हमें विश्व व्यापार संगठन के तहत किए गए समझौतों, वैश्वीकरण व उदारीकरण की प्रक्रियाओं का कृषि व ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर प्रभाव का बारीकी से विश्लेषण करने के पश्चात ही लागू करना चाहिए। हमें विकसित देशों के द्वारा दिखाए गए दिवास्वप्नों से दिग्भ्रमित नहीं होते हुए यथार्थ व व्यावहारिक नीतियों को प्राथमिकता देनी चाहिए। ❑

(लेखिका चिड़ावा, राजस्थान के जी.एस.एस. गर्ल्स (पी.जी.) कॉलेज में अर्थशास्त्र की विभागाध्यक्ष हैं।

ई-मेल : anita3modi@gmail.com)

सदस्यता कूपन

नयी सदस्यता / नवीकरण / पता बदलने के लिए

(जो लागू होता हो उस पर '✓' का चिह्न लगाएं।)

मैं ..... (पत्रिका का नाम एवं भाषा) का ❑ वार्षिक (100 रुपये) ❑ द्विवार्षिक (180 रुपये)

❑ त्रिवार्षिक (250 रुपये) सदस्य बनने का इच्छुक हूं। डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर/मनीआर्डर संख्या ..... तारीख .....

नाम .....

वर्ग ❑ विद्यार्थी ❑ शिक्षक ❑ संस्था ❑ अन्य

पता :.....

.....

.....

पिन .....

नवीकरण/पता बदलने के लिए कृपया अपनी सदस्य संख्या यहां लिखें

डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर/मनीआर्डर *'निदेशक, प्रकाशन विभाग'* के नाम से बनवाएं और कूपन के साथ इस पते पर भेजें :

व्यापार व्यवस्थापक (प्रसार) प्रकाशन विभाग,

पूर्वी खंड-IV, सातवां तल, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली-110066

कृषि व्यापार के प्रमुख मुद्दे

● सुखपाल सिंह

कृषि व्यवसाय में सक्रिय खुदरा कंपनियों के कारोबार की गुणवत्ता बढ़ाना ही महत्वपूर्ण नहीं है बल्कि दूसरे प्रतिभागियों के साथ अपने (छोटे किसानों का) लाभ का उचित हिस्सा भी सुनिश्चित करना है। इन प्रतिभागियों में ख़ासतौर पर वे कंपनियां शामिल हैं जो ऐसी व्यवस्था को टिकाऊ बनाने के लिए किसानों को कच्चे माल की आपूर्ति करती हैं

विभिन्न पहलुओं से कृषि व्यवसाय दिलचस्प क्षेत्र है। यह क्षेत्र विभिन्न प्रकार के उद्यमियों, ख़ासतौर पर प्रसंस्करण एवं खुदरा व्यापार जैसे उप-क्षेत्रों के उद्यमियों में दिलचस्पी का केंद्र बना है और उनकी सक्रियता बढ़ा रहा है। कृषि बाज़ार हर जगह काफ़ी तेज़ी से बदल रहा है। इन बाज़ारों ने गुणवत्ता और खाद्यान्न स्वच्छता को लेकर भारी दवाब पैदा किए हैं। इसके चलते छोटे किसानों के बीच लगातार प्रतिस्पर्धी बनने का दवाब भी तेज़ हुआ है। नया उभरता हुआ कृषि बाज़ार विभिन्न प्रकार के उत्पादों से भरा, एकीकृत और अपेक्षाकृत अब विश्व बाज़ार के प्रति उन्मुख है।

वर्ष 2002-2003 के दौरान कुल कृषि स्वामित्व क्षेत्र में लघु किसानों की हिस्सेदारी 85.9 फीसदी है जिनके पास 2 हेक्टेयर से भी कम ज़मीन है जबकि कुल उत्पादक क्षेत्र में उनकी हिस्सेदारी 42 फीसदी है। इससे वर्ष 2000-01 में बड़े कृषि क्षेत्र पर स्वामित्व, चार हेक्टेयर से कम, घटकर 6.4 फीसदी रह गई है जबकि कुल कृषि क्षेत्र में इस श्रेणी की हिस्सेदारी 37 फीसदी है। वर्ष 2003 तक भूमि स्वामित्व का औसत रक़बा घटकर 1.06 हेक्टेयर के स्तर पर आ गया है। कुल किसानों में 64 फीसदी सीमांत किसान हैं जिनका ज़मीन स्वामित्व प्रत्येक के पास एक हेक्टेयर से भी कम है। 18 फीसदी लघु किसान हैं जिनका भूमि स्वामित्व प्रत्येक के पास एक से दो हेक्टेयर है।

महत्वपूर्ण बात यह है कि छोटे किसान उत्पादन और बाज़ार ज़ोख़िमों का सामना कर रहे हैं। भारत सरकार ने इन ज़ोख़िमों को कम करने के लिए बाज़ार नियमन करने वाले कई नीतिगत उपाय लागू किए हैं। इनमें उत्पादन ज़ोख़िम के लिए फ़सल बीमा योजना सरकार की ओर से घोषित किए जाने वाले 24 फ़सलों के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी), गन्ने के लिए वैधानिक न्यूनतम मूल्य (एसएमपी), कुछ राज्यों में बाज़ार हस्तक्षेप योजना (एमआरएस), किसान आय बीमा योजना, बाज़ार आधारित मद व्यवस्थाएं यानी वायदा बाज़ार और गोदाम रसीद प्रणाली (वेयरहाउस रिसीट सिस्टम) आदि शामिल है। इनके अतिरिक्त देश में फ़सल विविधीकरण प्रणाली व ज़ोख़िम कम करने वाले 'इनपुट' यानी उपयुक्त खाद और बीज आदि भी प्रयोग में लाए जा रहे हैं। मगर कुछ क्षेत्रों की कुछ फ़सलों को छोड़ दें तो एमएसपी का कार्यान्वयन काफी कमज़ोर ही रहा है और यह किसानों की सर्वाधिक ज़रूरत के वक़्त अक्सर कमज़ोर व्यवस्था साबित हुई है। इसके अलावा सीमांत और लघु किसानों के लिए बाज़ार संबंधी अन्य गंभीर समस्याएं मौजूद हैं। उदाहरण के तौर पर नियंत्रित क्षेत्र में आधुनिक बीजों और उर्वरकों की अपेक्षाकृत अधिक ज़रूरत होती है। इस प्रकार के कच्चे माल की कमी के संकट की एक अहम वजह पर्याप्त ज़रूरी जानकारियों का अभाव है। इसके अलावा उनमें व्यावसायिक एवं लाभजनक सौदेबाज़ी के अनुभव का अभाव भी है। उनमें सामूहिक संगठनात्मक प्रवृत्ति के अभाव की वजह से छोटे किसान बड़े किसानों अथवा बाज़ार के बिचौलियों के साथ कृषि बाज़ार की प्रतिस्पर्धा में अक्सर मात खा जाते हैं। इस प्रकार छोटे रक़बे के स्वामित्व एवं सौदेबाज़ी की कमज़ोर कुशलता के चलते वे बड़े किसानों के मुक़ाबले घाटा उठाने को विवश होते हैं। सीमांत किसान अन्य श्रेणियों के किसानों की बनिस्वत प्रति हेक्टेयर अधिक उत्पादन तो करते हैं मगर अपने कुल उत्पादन का बहुत छोटा-सा हिस्सा ही बेच पाते हैं और वह भी अपेक्षाकृत कम दामों पर।

इसलिए अगर कॉरपोरेट जगत की कृषि व्यवस्था क्षमता और नयी दिलचस्पी के जरिये छोटे किसानों की सक्रियता को बढ़ावा देना है तो अहम मुद्दों का समाधान ज़रूरी होगा। इस लेख में भारत और अन्य देशों के बाज़ार से हासिल अनुभवों पर आधारित कृषि व्यवसाय क्षेत्र के अहम मुद्दों पर विशेष ध्यान केंद्रित किया गया है। इसके अगले भाग में छोटे किसानों से जुड़े सामयिक मुद्दों पर ज़ोर दिया गया है जबकि तीसरे भाग में भारत में कृषि व्यवसाय क्षेत्र की

नीतियों एवं व्यावहारिक पद्धतियों पर कुछ सुझाव भी दिए गए हैं।

भारतीय कृषि व्यवसाय के अहम मुद्दे

छोटे किसानों की उपेक्षा : आजकल के भारतीय नीतिगत माहौल में जहां कि समग्र विकास पर ख़ासा ज़ोर दिया जा रहा है, यह अत्यंत आश्चर्यजनक ही है कि आधुनिक कृषि व्यवसाय बाज़ारों से छोटे किसान लगभग पूरी तरह से बाहर हैं। इस प्रकार बाज़ार की प्रतिस्पर्धा से बाहर छूट जाने के कई पहलू हो सकते हैं। जैसेकि क्षेत्र, फ़सल, तक़नीक आदि और इसके साथ ही बाज़ार से उनके अपेक्षित जुड़ाव की सौदेबाज़ी की क्षमता का अभाव भी। हमारे सामने अनगिनत साक्ष्य मौजूद हैं कि छोटे किसान अधिकांश आधुनिक बाज़ार व्यवस्थाओं जैसेकि ठेका कृषि और खुदरा व्यवसाय का हिस्सा नहीं बन सके हैं। यह बेवजह नहीं है कि अधिकांश ठेका कृषि परियोजनाएं कृषि के दृष्टिकोण से विकसित राज्यों से पंजाब, हरियाणा, गुजरात, महाराष्ट्र, कर्नाटक और तमिलनाडु आदि राज्यों में केंद्रित हैं जबकि दूसरी ओर भारत का बड़ा हिस्सा, बिहार, झारखंड, छत्तीसगढ़, ओडिशा, पश्चिम बंगाल और समूचा उत्तरपूर्वी भारत, उत्तराखंड, हिमाचल प्रदेश, केरल, जम्मू-कश्मीर आदि शामिल हैं, ऐसी परियोजनाओं से अछूते ही रह गए हैं और इसकी वजह यह है कि राज्यों में छोटे और सीमांत किसानों की भरमार है। अनिवार्य रूप से ठेका कंपनियां इन किसानों को उपेक्षित कर रही हैं जिन्हें वास्तव में सहायता की ज़रूरत है क्योंकि उसके लिए ज़रूरी ज़ोख़िम कम करने और फ़सल उत्पादन बढ़ाने के नये तरीक़ों के लिए न सिर्फ़ वाज़िब मानसिकता अनिवार्य है बल्कि संसाधनों की भी ज़रूरत होती है ताकि उनकी ज़ोखिम लेने की क्षमता को बढ़ाया जा सके।

इससे आगे, आधुनिक कृषि बाज़ारों में सिर्फ़ ज्यादा मुनाफ़ा देने वाली फ़सलें ही सफ़ल हो पा रही हैं। इसके साथ ही परंपरागत फ़सल और उपक्रम आधारित परिपाटी से अलग ज़ोखिम लेने में सक्षम उपक्रम ऐसे बाज़ारों की प्रतिस्पर्धा का सामना कर पा रहे हैं। इसलिए इन फ़सलों और उपक्रम क्षेत्रों से अलग-थलग पड़े बहुतेरे छोटे किसान आधुनिक बाज़ारों के लाभ से वंचित रह जाते हैं। चाहे मामला घरेलू बाज़ार का हो या फिर निर्यात आधारित लाभ का।

ठेका कृषि पर हुए तमाम अध्ययनों से यह तथ्य उज़ागर हुआ है कि अधिकांश कंपनियां बड़े-मझोले किसानों के साथ काम करने को वरीयता दे रही हैं। इससे अपवाद स्वरूप कर्नाटक, तमिलनाडु और आंध्र प्रदेश आदि राज्यों में ये कंपनियां छोटे व सीमांत किसानों का चयन कर रही हैं। इसकी वजह ख़ास तरह की फ़सलें हैं जैसेकि– खीरा, ककड़ी और ब्रायलर चिकन। बड़े और मझोले किसानों को वरीयता देने की प्रक्रिया में पंजाब ने इससे उलटी प्रक्रिया को जन्म दिया है जिसके तहत बड़े किसान छोटे व सीमांत किसानों की ज़मीनें पट्टे पर ले रहे हैं।

इसी प्रकार ताज़े फलों और सब्ज़ियों की खुदरा बिक्री का सवाल है। उसमें सब्ज़ियों की खरीदारी प्रक्रिया में अधिकांश रूप से मझोले और बड़े किसान ठेका उत्पादक बन गए हैं। 'नामधारी फ्रेश' जैसी रिटेल चेन इसकी अपवाद भी हैं जिन्होंने छोटे सब्जी उत्पादकों को शामिल किया और साथ ही चालू ठेका कृषि का भी सहारा लिया। यद्यपि ऐसा तर्क़ दिया जाता है कि सब्ज़ियों की फ़सलें छोटे किसानों के लिए अत्यधिक श्रम और नियमित आय की ज़रूरत के लिहाज़ से अधिक उपुयक्त हैं मगर बाज़ार/खरीदार छोटे किसानों को वरीयता देते नहीं दिखते हैं।

खाद्य खुदरा विदेशी प्रत्यक्ष निवेश (एफडीआर)

खुदरा व्यवसाय में एफडीआई को बढ़ावा देने का बड़ा तर्क़ यह है कि इससे किसानों की आय बढ़ेगी और खुदरा व्यवसाय में उन्नत बीज, उर्वरक और तक़नीक आदि हासिल होगी। इस पहलू पर व्यापक विचार की ज़रूरत है कि क्या यह घरेलू अर्थव्यवस्था के लिए बहुत ज़रूरी है अथवा खुदरा एफडीआई और कृषि और ग्रामीण अर्थव्यवस्था के बीच लिंक अपेक्षित लाभजनक परिणामों के लिहाज़ से दूर की कौड़ी साबित होगा। इस पहलू के विश्लेषण में हम घरेलू फ्रेश फूड रिटेल चेंस के अनुभवों को सामने रख सकते हैं। जिससे साफ़ है कि उपभोक्ताओं की ख़रीदारी की वाज़िब लाभदायक हिस्सेदारी अभी तक किसानों को नहीं मिल सकी है। इसके जरिये सिर्फ़ मार्केटिंग की लागत ही घट सकी है क्योंकि खुदरा व्यापार कंपनियों ने दूरवर्ती शहरों और कस्बों में स्थित मंडियों से अलग उत्पादक क्षेत्रों में संग्रह केंद्र स्थापित किए हैं। लेकिन ये खुदरा व्यापार सिर्फ़ 'ए' श्रेणी का उच्च गुणवत्ता वाला उत्पादन ही खरीदती हैं जो किसानों के उत्पादन का एक छोटा-सा हिस्सा होता है। ऐसे में किसान फ़सल का बाक़ी बचा हुआ हिस्सा मंडी ले जाते हैं। सभी खुदरा व्यापार और राज्यों के आधार पर किए गए ताज़ा सर्वेक्षणों से यह साफ़ है कि मार्केटिंग लागत घटाने के अलावा किसानों को इन खुदरा व्यापार कंपनियों से खास फायदा नहीं हुआ है। ये कंपनियां व्यावहारिक रूप से कुछ किसानों से संपर्क करती हैं और बगैर किसी ठेका अथवा दीर्घकालिक जिम्मेदारियों के नियमित रूप से खरीद कर रही हैं। इसके अतिरिक्त सिर्फ़ बड़े और संसाधन संपन्न किसान ही अधिकांशतः इन कंपनियों से जुड़े हैं। इस प्रकार चूंकि खुदरा व्यापार उच्च खरीद लागत की वज़ह छोटे किसानों को उपेक्षित करती हैं, इसलिए छोटे किसानों को खुदरा व्यापार लिंकेज से फायदा अतिश्योक्तिपूर्ण या बढ़ा-चढ़ाकर पेश किया जा रहा है और उनके साथ इन कंपनियों का सीधा जुड़ाव काफी कमज़ोर है।

शीघ्र क्षरणशील उत्पाद क्षेत्र में नुक़सान

खुदरा एफडीआई के पक्ष में दूसरा तर्क़ यह दिया जाता है कि फल और सब्ज़ी क्षेत्र में नुक़सान को कम करने के लिए कोल्ड स्टोरेज जैसी ढांचागत सुविधाएं स्थापित करने के लिए बड़े निवेश की ज़रूरत है। सर्वप्रथम किसी भी कमोडिटी यानी उत्पाद में समग्र नुक़सान जैसा नहीं है क्योंकि उत्पाद का हर ग्रेड किसी न किसी मूल्य पर बेचा जाता है जिसे नुकसान या नष्ट होना कहा जाता है, वह वास्तव में मूल्य का नुकसान यानि कम मुनाफा है। इस क्षेत्र में घरेलू कंपनियों का अनुभव यह दर्शाता है कि अगर उनके लिए यह लाभजनक नहीं साबित होगा तो वे इन ढांचागत सुविधाओं में निवेश नहीं करेंगी अथवा वे जितनी जल्दी निवेश करेंगी उतनी ही जल्दी अपना पांव वापस खींच लेंगी। आज गुजरात में, जो क्षरणशील खाद्य श्रृंखला के क्षेत्र में सबसे पहले पहल करने वाला राज्य है, सिर्फ एक रिलायंस फ्रेश खुदरा चेन ही बाज़ार में बची रह गई है। दूसरी कंपनियों ने जितनी जल्दी कारोबार शुरू किया, उतनी ही जल्दी उन्होंने सारी खरीद प्रक्रिया से अपना बोरिया बिस्तर समेट लिया। इसकी एक वज़ह यह है कि फल और सब्जी कुल कृषि उत्पाद एवं प्रसंस्करण क्षेत्र का एक छोटा-सा हिस्सा भर है। अब सवाल यह है कि क्या समग्र खाद्य खुदरा क्षेत्र में एफडीआई की अनुमति का तर्क़ वाजिब है?

ठेका कृषि में मूल्य व्यवस्था और संपर्क कृषि

वैश्विक स्तर पर अनेक परिस्थितियों में ठेका कृषि सरकारों की ओर से कृषि और रोज़गार

सुधारने और फ़सल विविधीकरण के लिए नीतिगत क़दम के तौर पर लागू की गई है। भारत में केंद्र सरकार और राज्यों स्तर पर ठेका कृषि प्रोत्साहन एक नीति के तौर पर लागू है। अधिकांश राज्यों में कृषि उत्पाद विपणन समिति अधिनियम संशोधित किए जा रहे हैं। मगर भारत में ठेका लेने वाली एजेंसियां और खुदरा व्यवसाय बाज़ार में लागू मूल्य ही ठेका आपूर्तिकर्ता और अन्य संपर्क में रखे जा रहे किसानों को देती है। यहां यह सवाल पूछना ज़रूरी है कि क्या यह वाजिब मूल्य है क्योंकि भारत में बाज़ार मूल्य में व्यापक उतार-चढ़ाव आता रहता है। अगर बाज़ार मूल्य उचित है तो फिर इन कंपनियों को किसानों के पास क्यों जाना पड़ता है? बिहार में एपीएमसी अधिनियम की समाप्ति सहित कृषि क्षेत्र में अधिकांश उदारीकरण इस धारणा के चलते हुआ है कि एपीएमसी बाज़ार एकाधिकारवादी रहे हैं और इसलिए इनको समाप्त करना ज़रूरी है या फिर उन्हें कुछ नयी बाज़ार व्यवस्थाओं के साथ प्रतिस्पर्धा के तौर पर खड़ा किया जाए। अगर यह बात सच है तो किसी भी खरीदार को उसी मंडी में जाकर खरीद मूल्य पता करना चाहिए। यह एक गंभीर मुद्दा है क्योंकि अगर बाज़ार मूल्य काफी नीचे चला जाता है जोकि भारतीय शीघ्र क्षरणशील उत्पाद बाज़ार में असामान्य नहीं है तो बाज़ार मूल्य से अधिक ऊंचा प्रीमियम मूल्य भी किसी किसान की मदद नहीं कर सकता। इस प्रकार किसानों के लिए उचित मूल्य का सवाल विवादित ही रह जाता है क्योंकि रिटेल चेन की ख़रीद पर प्रक्रिया में मूल्य और लागत की पारदर्शिता का अभाव है।

कृषि नीति और शोध आदि से उपेक्षित छोटे किसान

कृषि व्यवसाय और कृषि संबंधी अधिकांश योजनाएं छोटे किसानों के लिए लाभदायी प्रावधानों से बेखबर हैं। लिहाज़ा इनके ज़रिये उनके हितों को पूरा नहीं किया जा सकता है। उदाहरणस्वरूप खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्रालय नौवीं पंचवर्षीय योजना की शुरुआत से ही एक प्रोत्साहन योजना संचालित कर रहा है। इसमें किसानों को ठेका कृषि में कच्चे माल के कुल मूल्य का 10 फीसदी मुआवज़े के तौर पर दिया जाता है। यह व्यवस्था अधिकतम तीन सालों तक अधिकतम 10 लाख रुपये सालाना है। शर्त यह है कि किसी भी संगठन (निजी/सार्वजनिक/सरकारी/गैर सरकारी संगठन, संयुक्त उपक्रम) को कम से कम 25 किसानों के साथ कम से कम तीन सालों तक अनुबंध किया जाए।

इसके ज़रिये 37,985 किसानों को लाभान्वित किया गया। इस योजना में यह स्पष्ट नहीं किया गया है कि इन एजेंसियों को किस प्रकार के किसानों के साथ अनुबंध करना चाहिए। इसी प्रकार पंजाब सरकार पंजाब एग्रो फूडग्रेंस कॉरपोरेशन (पीएएफसी) के ज़रिये अनुबंधित कृषि कराने वाली एजेंसियों को अनुबंधित कृषि की विस्तार लागत का मुआवज़ा देती रही है। यह मुआवजा सौ रुपये प्रति एकड़ ज़मीन पर तीन सालों के लिए दिया जाता है। इसका मकसद विविधीकरण के लिए अनुबंधित कृषि को बढ़ावा देना है। लेकिन इसमें ठेका उत्पादकों के लिए भूमि स्वामित्व के आकार को सुनिश्चित न करने की वज़ह से इसका असल उद्देश्य विफल हो जाता है क्योंकि इसके ज़रिये लघु एवं सीमांत किसानों के हितों को सुनिश्चित नहीं किया जाता। ऐसे किसानों को ठेका व्यवस्था के तहत लाने की ज़रूरत होती है क्योंकि वे कृषि विस्तार कार्यक्रमों की लागत वहन नहीं कर सकते।

इससे आगे प्रमुख भारतीय कृषि विश्वविद्यालयों में भी छोटे किसानों की चिंताओं पर अपेक्षित ध्यान नहीं दिया जाता है। अधिकांश समय किसानों को पूर्व प्रचलित ढर्रे पर ही चलते रहने वाली श्रेणी के रूप में शुमार किया जाता है। ऐसे किसानों के लिए उनकी ज़रूरत के आधार पर समस्याओं के समाधान तैयार नहीं किए जाते ताकि वे नये शोध आदि के प्रभावों को समझ सकें। उदाहरणस्वरूप खाद्य खुदरा व्यवसाय के प्रभावों पर हुए अध्ययन यह बताते हैं कि खुदरा व्यवसाय खरीद व्यवस्था छोटे और सीमांत किसानों के लिए काफी लाभदायक रही है। तथ्य यह भी है कि आंकड़ों के मुताबिक खाद्य खुदरा व्यवसाय के लिए भूमि स्वामित्व का आकार साथ ही सिंचित व असिंचित भूमि का आकार परंपरागत बाज़ारों से जुड़े किसानों के भू-स्वामित्व से ज्यादा रहा है। तब ऐसे अध्ययनों का निष्कर्ष है कि खुदरा व्यवसाय मॉडल छोटे किसानों के लिए उपयुक्त है जबकि आंकड़े यह दर्शाते हैं कि खुदरा व्यवसाय कंपनियां बड़े किसानों के साथ ही ठेका कृषि करती रही हैं चाहे वह स्थानीय भूमि स्वामित्व का मामला हो या फिर भारत में 5 एकड़ तक भूमि स्वामित्व वाली छोटे किसानों की मानक परिभाषा का। इसके अलावा ट्यूबवेलों का प्रयोग भी खुदरा व्यवसाय से जुड़े किसानों ने ज्यादा किया। इसी प्रकार अंतरराष्ट्रीय विकास एजेंसियां जैसेकि विश्व बैंक भी क्षेत्रीय सर्वेक्षण के लिए परिणामों की रिपोर्टिंग करते समय छोटे किसानों के हितों को उपेक्षित कर देती हैं और निष्कर्ष दे देती हैं कि आधुनिक बाज़ार सभी के हितों का ध्यान रखते हैं और ऐसी ग़लत व्याख्या पर आधारित अपनी सिफ़ारिशें कर देती हैं।

निष्कर्ष

आधुनिक उत्पादन प्रणाली में लघु किसानों की सहायता के लिए जोख़िमों में कमी और प्रबंधन बेहद महत्वपूर्ण तथ्य हैं। चाहे वह घरेलू बाज़ार का मामला हो या निर्यात बाज़ार का, छोटे किसानों की कारपोरेट क्षेत्र एजेंसियों के साथ उत्पादों की बिक्री संबंधी व्यवस्था का मतलब मुख्य रूप से किसानों के उत्पादन और बाज़ार जोख़िमों में कमी होना चाहिए ताकि वे कृषि उद्यम के ज़रिये बेहतर आजीविका सुनिश्चित करवाएं। छोटे किसानों के लिए जोख़िमों में कमी के लिए न सिर्फ़ पूर्व तयशुदा मूल्य व्यवस्था ज़रूरी है बल्कि समय से कच्चे माल की आपूर्ति, उत्पादन और विपणन का विस्तार और फ़सल बीमा भी अनिवार्य है। कृषि व्यवसाय में सिर्फ़ बेहतर योगदान ही महत्वपूर्ण नहीं है अपितु बाज़ार में दूसरे प्रतिभागियों से खुद का लाभकारी हिस्सा भी सुनिश्चित करना है। इसके तहत ज़ोर उन प्रतिभागियों (यानी कंपनियों) पर है जो किसानों को कच्चे माल की आपूर्ति करते हैं और ऐसी व्यवस्था को टिकाऊ बनाते हुए आर्थिक विकास में सहयोग करते हैं। देश में छोटे किसानों को प्रोत्साहित करने वाली नीति की ज़रूरत है। ऐसी प्रक्रियाओं की ज़रूरत है जो उनकी स्थिति को मज़बूत बनाए। लघु किसानों के लिए सामूहिक स्तर पर कल्याणकारी व्यवस्था स्थापित हो जैसेकि उत्पाद कंपनियां जोकि सौदेबाजी की क्षमता को बढ़ाते हुए आय बढ़ोतरी में सहयोग करें और साथ ही कच्चे माल की खरीद लागत में कमी लाएं उत्पादों की बेहतर बिक्री भी सुनिश्चित करें। गैर-सरकारी संस्थाएं और विकास एजेंसियों को ग्रामीण विकास और आजीविकता स्तर के उन्नयन के लिहाज़ से कृषि और इसके बाज़ारों पर ख़ास ध्यान केंद्रित करना चाहिए। इन एजेंसियों को लघु किसानों की तरफदारी करते हुए कृषि उत्पाद और बाज़ार व्यवस्था में हस्तक्षेप भी करना चाहिए। ❑

(लेखक इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ मैनेजमेंट (आईआईएम) अहमदाबाद में सेंटर फॉर मैनेजमेंट इन एग्रीकल्चर संकाय से संबद्ध हैं।

ई-मेल : sukhpal@iimahj.ernet.in)

जैविक खादों से कृषि उत्पादन में वृद्धि

● सत्यभान सारस्वत

महंगाई की समस्या का एक प्रमुख कारण कृषि उत्पादन में कमी है। जहां कुछ दशक पूर्व भारत में हरित क्रांति आई थी, देश में खाद्यान्नों का भंडार था, यहां तक कि हमारे देश से दूसरे देशों को खाद्यान्नों का निर्यात होता था, वहीं अचानक यह समस्या कैसे आई? यह विचार का विषय है। विश्व में खाद्यान्नों के उत्पादन पर विचार किया जाए तो भारत की स्थिति बहुत ही चिंतनीय है। जहां पड़ोसी चीन में प्रति हेक्टेयर उत्पादन 80-100 क्विंटल है, वहीं हमारे देश में मात्र 40-50 क्विंटल है। इस संबंध में प्रसिद्ध कृषि वैज्ञानिक डॉ. स्वामीनाथन ने कहा कि "हमारे देश में कृषि भूमि की उपज क्षमता में 100-200 प्रतिशत वृद्धि की संभावना है", अर्थात हम चीन से भी अधिक उत्पादन कर सकते हैं।

जैविक खाद का गड्ढा जिसे घास-फूस से ढका गया है

उपर्युक्त संदर्भ में कृषि उत्पादन में परिवर्तन की आवश्यकता है अर्थात रासायनिक खेती की जगह पुनः जैविक खेती पर ध्यान देना अपेक्षित है। जैविक कृषि खेती की वह पुरानी पद्धति है जिसमें प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग करके जैविक खाद तैयार किया जाता है। इसमें विशेष रूप से कृषि से उत्पादित वैसे पदार्थ, जिनका उपयोग खाद्यान्नों के तौर पर नहीं होता। उन पदार्थों को प्रकृति सम्मत सरल विधि से खाद तैयार किया जाता है। इस संबंध में अनंत काल से गांवों में एक कहावत प्रचलित है– 'केंचुए किसान के मित्र होते हैं'। यह अब वर्तमान में कृषि वैज्ञानिकों ने प्रमाणित कर दिया है कि केंचुए खेती की उर्वरता बढ़ाने में जो सहायता करते हैं वह सामान्य यांत्रिक रूप से नहीं की जा सकती है। केंचुए की एक प्रजाति अफ्रीकन नाइट क्राउलर एक घंटे में सौ बार भूमि के अंदर चक्कर लगाती है। इस प्रक्रिया द्वारा भूमि की उर्वरा प्रचुर मात्रा में बढ़ाता है।

केंचुए से जैविक खाद का निर्माण वर्तमान सदी की देन है जिसमें इस जीव को एक उत्प्रेरक की तरह उपयोग किया जाता है। वैसे तो केंचुए की अनेक प्रजातियां उपलब्ध हैं किंतु जैविक खाद निर्माण के लिए अफ्रीकन नाइट क्राउलर (यूड्रिलस यूजीनी) सर्वोत्तम है। यह काले रंग का 6-7 इंच लंबा केंचुआ होता है जो सामान्य से छोटा व रंग में भिन्न होता है। इसका प्रजनन बहुत सरल एवं सुगम है। पहली बार में इसके अंडे (छोटे केंचुए

ग्रामीण लोगों को जैविक खाद की जानकारी देते हुए

मय मिट्टी) का क्रय करके एक वैज्ञानिक विधि से निर्मित गड्ढे में रखकर प्रजनन कराया जाता है। सामान्यतया इस केंचुए के लिए 20-30 सेंग्रे तापमान उपयुक्त रहता है। किंतु 2-4 सेंग्रे कम-ज्यादा तापमान पर भी यह जीवित रह सकता है। इसके प्रजनन में कच्चा गोबर, काली मिट्टी के साथ आधार में रहती है तथा समय पर पानी का छिड़काव, विशेषकर गर्मी में, करना लाभप्रद रहता है।

जलकुंभी से जैविक खाद

पूरे उत्तर भारत में तालाबों में जलकुंभी ने अपना पड़ाव बना लिया है अर्थात ये जंगली खरपतवार पूरे तालाब से अपने आप में फैल जाती है। जलकुंभी पूरे देश में वैज्ञानिकों के लिए एक चिंता का विषय है क्योंकि दिन-पर-दिन इसका फैलाव एक कोने से दूसरी ओर बढ़ रहा है। ऐसे समय में इस खरपतवार का सदुपयोग खाद बनाने में किया जा सकता है। यहां एक अनुपयोगी जैविक पदार्थ को उपयोगी बनाना है। अत तक जो खरपतवार समस्या बना हुआ था, उसका सदुपयोग हरी खाद/जैविक खाद बनाने में अप्रत्याशित सफलता का सकारात्मक उदाहरण है।

जलकुंभी की खरपतवार/पत्तों को उसकी प्राकृतिक अवस्था में तालाब से काटकर उसे छोटे-छोटे टुकड़े में काटकर सुखा लें। फिर आवश्यकतानुसार अर्थात 8×6×4 का खड्डा बनाकर (जिसमें धरातल पक्का अवश्य होना चाहिए) इसकी निचली तह में गोबर की खाद (गीला गोबर) की सतह बना ले फिर छोटे-छोटे जलकुंभी की पत्तियों को खड्डें में डालें, खड्डे को ऊपर तक भर दे तथा उसके ऊपर गीली काली मिट्टी की सतह बनाएं जिसमें गोबर भी मिला हो तो अच्छा है। इस मिश्रण में केंचुओं को पर्याप्त मात्रा (एक से डेढ़ किग्रा.) डाल दें, फिर इस खड्डे को गोबर से लीप दें। इस खड्डे को 50-60 दिन इस प्रकार ही रहने दें। गर्मी के समय 2-3 बार पानी का छिड़काव करें। वर्षांत में भारी वर्षा से गड्ढे को बचाए रखने के लिए उस पर छप्पर (फूस का अथवा तारपोलीन) डाल दें।

जब केंचुए खाद बना लेते हैं, अर्थात जलकुंभी की जैविक खाद बन जाती है तो केंचुए गड्ढे की सतह पर आ जाते हैं और खाद का रंग हल्का मटमैला हो जाता है। इस खाद के मिश्रण को गड्ढे से बाहर निकाल बाहर हल्की धूप में सुखा लें। खाद को यदि वाणिज्यिक स्तर पर बनाकर विक्रय करना है तो 1-2 सेमी. की छलनी में छान और सुखा कर छोटे-बड़े थैलों में भर सकते हैं। छलनी में केंचुए इकट्ठे हो जाएं तो उन्हें पुनः उपयोग में ला सकते हैं। यहां यह स्पष्ट करना है कि केंचुए की खाद चाय की पत्ती जैसी, (1 सेमी. के लगभग आकार की) आ जाए तो उसे पूर्ण रूप से सुखाकर थैलों में भरें (गीली खाद नमी के कारण सड़ सकती है)। शेष खाद को पुनः उपयोग में ला सकते हैं। यदि खाद का उपयोग अपने खेत में करना है तो सीधे खेत में डाली जा सकती है।

केंचुए की खाद में सामान्य कंपोस्ट की खाद से 40-45 प्रतिशत अधिक पोषक तत्व होते हैं। साथ में एक और विशेषता होती है कि खेत को यह खाद अधिक उपजाऊ बनाती है। व्यावहारिक प्रयोग से यह सिद्ध हो चुका है कि केंचुए की खाद के द्वारा सामान्य खाद से दुगुना उत्पादन होता है। खाद को खेती में रबी की फ़सल में, खरीफ की फ़सल के कटने के बाद 2-3 जुताई के बाद डालें। यह खेत की निचली सतह में न केवल नमी बनाए रखती है अपितु खेत की उर्वरा बनाए रखती है। ❑

(लेखक भारत सरकार के रेशम बोर्ड में वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं संयुक्त निदेशक रह चुके हैं)

अपने लेख हमें ई-मेल करें

आप हमें अपने लेख और पत्र ई-मेल भी कर सकते हैं। ई-मेल करने इसके लिए कृतिदेव फांट इस्तेमाल करें और वर्ड ओपन फाईल exeed.yojana@gmail.com अथवा yojanahindi@gmail.com पर भेजें। एक से अधिक लेखकों के नाम केवल विशेष शोध लेखों पर ही दें। जिन रचनाओं के साथ मौलिकता का प्रमाणपत्र संलग्न नहीं होगा वे स्वीकार नहीं की जा सकेंगी। रचना के प्रकाशन के संबंध में किसी प्रकार का पत्र-व्यवहार अथवा फोन न करें। विशेष अवसरों के लिए लेख तीन माह पूर्व प्राप्त हो जाने चाहिए। रचनाओं के साथ यथासंभव प्रासंगिक चित्र भी भेजें। डाक से भेजे जाने वाले लेखों की एक प्रति सीडी में भी भेजें। वापसी के लिए कृपया टिकट लगा और पता लिखा लिफ़ाफ़ा संलग्न करें।

– वरिष्ठ संपादक

अब वक़्त है अनुबंध खेती का

● भूपेंद्र राय

कृषि में अनुसंधान एवं विस्तार कार्यों के बढ़ते क़दमों के चलते जहां देश ने खाद्यान्न उत्पादन में भारी सफलता यानी 1951-52 के लगभग 45 मीट्रिक टन से वर्ष 2008-09 में 233.6 मीट्रिक टन खाद्यान्न– 99.1 मीट्रिक टन चावल तथा 80.5 मीट्रिक टन गेहूं का उत्पादन हासिल किया है, वहीं दुग्ध उत्पादन के क्षेत्र में भी 1950-51 के 20 मीट्रिक टन के मुक़ाबले 2008-09 में 101 मीट्रिक टन अर्थात लगभग 5 गुना बेहतर उत्पादन पाया है। गेहूं तथा चावल के उत्पादन की यह बढ़ोतरी जहां अधिक उपजशील बौनी प्रजातियों के बड़े स्तर पर उत्पादन से मिली है वहीं दूध उत्पादन में यह करिश्माई वृद्धि मूलत: राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड (एनडीडीबी) की अगुवाई में सुनियोजित दुग्ध उत्पादन एवं केंद्रीकृत अधिग्रहण, संसाधन तथा विपणन के कारण मिली है। इससे छोटे-छोटे तमाम दुग्ध उत्पादकों की आमदनी बढ़ी है तथा दुग्ध उत्पादन के क्षेत्र में देश का नाम भी रौशन हुआ है। दुग्ध उत्पादन के क्षेत्र में जो काम सहकारी समूहों ने किया है, वही काम अब स्वयं सहायता समूह, बड़ी उत्पादक कंपनियों तथा अनुबंध या ठेके वाली खेती द्वारा भी किया जा सकता है। हाल के वर्षों में अनुबंध खेती में किसानों की अभिरुचि बढ़ी है तथा देश में इसका दायरा बढ़ रहा है।

अनुबंध खेती मूल रूप से तो उत्पादक किसानों तथा क्रयकर्ता कंपनियों, ग्राहकों के बीच अग्रिम अनुबंध के तहत एक निर्धारित मूल्य पर कृषि, बागवानी आदि उत्पादों के उत्पादन, आपूर्ति, क्रय-विक्रय की एक व्यावसायिक व्यवस्था है। इसमें उत्पादक किसान एक निश्चित मात्रा में कृषि उत्पाद को निश्चित समय पर कंपनियों, अनुबंध करने वाली फर्मों एवं ग्राहकों को उपलब्ध कराते हैं तथा खरीदार पूर्व निर्धारित मूल्य देकर उत्पाद को अधिग्रहित करते हैं। प्रस्तुत आलेख में अनुबंध खेती के विभिन्न प्रारूपों, शुरुआती दौर, कुछ प्रमुख राज्यों में चल रही अनुबंधित खेती की उपलब्धियों, समस्याओं तथा उसमें सुधार लाने के तौर-तरीक़ों की चर्चा की गई है। साथ ही ऐसे बिंदु भी सुझाए गए हैं जिनसे इस प्रकार की खेती से वांछित सफलता प्राप्त की जा सके।

अनुबंध खेती के प्रारूप

अतीत में देश में कई तरह की परस्पर लाभकारी अनुबंधित खेती (जैसे- कपास, कॉफी, गन्ना, चाय, तंबाकू, पोस्ता आदि) प्रचलित रही है। वर्ष 1920 में आंध्र प्रदेश के समुद्रतटीय क्षेत्रों में वरज़िनिया तंबाकू की खेती के शुभारंभ का श्रेय भी इसी प्रकार की खेती को जाता है। देश में 1980 तथा 1990 के दशकों में खाद्य प्रसंस्करण की योजनाएं भी मूलत: इसी प्रकार की खेती पर आश्रित थी। देशहित तथा किसानों की भलाई के लिए इन सफल मॉडलों, कार्यकलापों का अनुसरण इस समय कुछ ज़रूरी फ़सलों, जैसे- कपास, तिलहन, दलहन, फलों, फूलों, सब्ज़ियों, औषधीय पौधों आदि में अब वांछित होगी। पर यह कार्य, ग्रामीण निज़ी उत्पादकों तथा शहरी निज़ी बड़ी कंपनियों के बीच एकतरफा सौदेबाज़ी का न होकर परस्पर लाभकारी व्यवस्था वाली होनी चाहिए। किसानों को फ़सल की कटाई के समय यदि उनके कृषि उत्पादों का लाभदायक मूल्य मिले तथा अनुबंध खेती सर्वमान्य आचार-संहिता पर चले, तो यह सबके हित में होगा।

अनुबंध की शर्तें व मूल्य मुख्यत: उगाई जाने वाली फ़सलों, फलों, फूलों, सब्ज़ियों आदि की प्रकृति, उपयोग की जाने वाली कृषि प्रौद्योगिकी, गुणवत्ता तथा खेती में होने वाले बदलावों के अनुसार बदलती रहती है। आमतौर से अनुबंध तीन प्रकार के होते हैं। पहला तो वह जिसमें खरीदार कंपनी उत्पादक किसानों को उत्पादन के उपादान, सेवाएं या सुविधाएं प्रदान नहीं करती तथा ख़रीद की शर्तें पहले ही रखती है। दूसरा वह जिसमें क्रयकर्ता कंपनी/फर्म, उत्पादक किसानों को कुछ आवश्यक उपादान जैसे वांछित प्रजाति के बीज/पौध, तकनीकी सलाह आदि देती हैं पर ख़रीद पूर्व निर्धारित मूल्य पर करती हैं तथा तीसरा वह जिसमें क्रयकर्ता किसानों को उत्पाद की गुणवत्ता बनाए रखने के लिए सारे ज़रूरी कृषि उपादान, सेवाएं तथा तकनीकी सलाह प्रदान करते हैं जिससे बीज़ या पौध की आपूर्ति, ऋण सुविधा, गुणवत्ता संबंधी सूचना तथा तकनीकी सलाह प्राप्त करने में सहायता मिलती है। इस प्रकार, क्रयकर्ता कंपनियां उत्पादों की क़ीमतों के उतार-चढ़ाव संबंधी ज़ोखिमों को कम करती हैं, ज़ोखिम अपने ऊपर लेती हैं तथा उत्पादकों को एक स्थिर, सुनिश्चित आय प्रदान करती हैं। चूंकि इसमें पैसा लौटना लगभग तय है इसलिए बैंक भी इस कार्य के लिए ऋण सुविधा देने के लिए तैयार रहते हैं। इस प्रकार, अनुबंध खेती की पूरी प्रक्रिया मूलत: तीन बातों पर टिकी होती है– पहला, कृषि उत्पाद की उत्पादकों द्वारा पूर्व निर्धारित समय पर सुनिश्चित मात्रा की आपूर्ति, दूसरा, पूर्व निर्धारित विपणन योग्य गुणवत्ता का स्तर तथा तीसरा, उत्पाद की पूर्व निर्धारित क़ीमत।

प्रारंभिक दौर

देश में अनुबंध खेती का मौजूदा दौर लगभग वर्ष 1989 में पंजाब के होशियारपुर में पेप्सी फूड लिमिटेड द्वारा टमाटर संसाधन संयंत्र की स्थापना के साथ शुरू हुआ। इस कृषि प्रधान राज्य के टमाटर उत्पादक किसानों की बड़े पैमाने पर कंपनी के साथ संलग्नता की वज़ह से राज्य में

लगभग 25,000 हेक्टेयर में फैली टमाटर की खेती में 5 लाख टन उत्पादन के साथ स्थिरता आई। राज्य के औसत टमाटर उत्पादन की तुलना में इस कंपनी के साथ अनुबंधित किसानों ने औसतन 25 से 50 प्रतिशत तक का मुनाफ़ा हासिल किया। कारण यह था कि लीक से हटकर इन किसानों ने टमाटर की अधिक उपजशील प्रजातियों (संकर किस्मों) का इस्तेमाल किया, खेत की गहरी जुताई की तथा शावेल तथा बेड हेड आदि बोआई के नये तरीक़ों का उपयोग किया था।

रैलीस इंडिया जो मुख्यत: बीज, उर्वरक तथा अनुसंधान के क्षेत्र में कार्य करती है, ने आईसीआईसीआई बैंक तथा हिंदुस्तान लीवर लिमिटेड के साथ मिलकर मध्य प्रदेश के होशंगाबाद जिले में गेहूं उत्पादन के लिए अनुबंधित खेती की पहली परियोजना शुरू की, जिसमें आईसीआईसीआई बैंक ने कृषि ऋण प्रदान किया तथा हिंदुस्तान लीवर लिमिटेड ने विपणन सुविधा सुलभ कराई। इसकी सफलता से सबक लेकर रैलीस इंडिया ने फूड वर्ल्ड तथा अन्य सहयोगियों के साथ मिलकर बंगलुरु में फल उत्पादन, पानीपत (हरियाणा) में बासमती चावल उत्पादन तथा नासिक (महाराष्ट्र) में सब्ज़ी उत्पादन की अनुबंधित खेती की ओर क़दम बढ़ाया। इसका पूरा तंत्र रैलीस किसान केंद्रों द्वारा संचालित होता है, जहां एक ही जगह से किसानों की लगभग सारी ज़रूरतें पूरी हो जाती हैं यानी सिंगल विंडों कार्यक्रम।

व्यावसायिक बीज़ उत्पादन में लगी लगभग 150 निज़ी बीज कंपनियां अपने बीज उत्पादन के लिए अनुबंधित खेती पर आश्रित हैं। आंध्र प्रदेश के करीम नगर एवं वारंगल जिलों में अनेक धान उत्पादक किसान अब निज़ी बीज कंपनियों के लिए अनुबंधित रूप से संकर धान के बीजों का उत्पादन कर रहे हैं। इसमें बीज कंपनियों तथा किसान दोनों का फ़ायदा है तथा इनके अच्छे बीज व्यवसाय तथा मुनाफ़े का राज़ इनके 'अनुबंध खेती' द्वारा बीज उत्पादन की सफ़लता में निहित है। कुल मिलाकर किसान इससे संतुष्ट हैं तथा वे पुरानी कंपनियों के साथ अनुबंध दोहराने के लिए तैयार हैं। किसानों की आय अब पहले से बेहतर हुई है तथा इससे उनके सामाजिक रुतबे में भी बढ़ोतरी हुई है। कृषि क्षेत्र का कोई भी क्रियाकलाप तभी क़ामयाब होगा जब वह आर्थिक रूप से लाभकारी तथा टिकाऊ हो।

वर्तमान स्थिति

पंजाब, महाराष्ट्र, राजस्थान, कर्नाटक, गुजरात, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, आंध्र प्रदेश, ओडिशा आदि राज्यों में अब अनुबंधित खेती छा रही है। लगभग 14 लाख हेक्टेयर की अनुबंधित खेती के साथ पंजाब इसमें सबसे अग्रणी राज्य है। पंजाब फूडग्रेन कॉरपोरेशन ने बासमती चावल के लिए एलटी ओवरसीज़ लिमिटेड, यूनाइटेड राइसलैंड प्राइवेट लिमिटेड, पेप्सी, केआरबीएल, तथा एस्कॉर्ट लिमिटेड के साथ जौ के लिए यूनाइटेड ब्रेवरीज़ लिमिटेड के साथ; हाइयोला (गोभी-सरसों) एवं सरसों के लिए मार्कफेड, एग्रोटेक फूड लिमिटेड, गोदरेज़ एग्रोवेट के साथ; मेंथा के लिए शार्प मेंथोल इंडिया लिमिटेड के साथ तथा मक्के के लिए महेंद्रा शुभ लाभ लिमिटेड के साथ अनुबंध किया है। महेंद्रा शुभ लाभ लिमिटेड ने 8,000 हेक्टेयर में मक्का तथा आलू बीज के लिए, हण्डोमिंट ने 6,000 हेक्टेयरों में मेंथा के लिए, पेप्सी ने 2,000 हेक्टेयर में टमाटर उत्पादन के लिए, चंबल एग्रीटेक लि. ने 1,200 हेक्टेयर में आलू बीज तथा मक्का के लिए अनुबंध किया है। इस में कंपनियां अधिकतर किसानों को निर्यात योग्य, उत्कृष्ट प्रजातियों के बीज, तकनीकी जानकारी तथा 100 प्रतिशत ख़रीद की गारंटी की सुविधाएं प्रदान करेंगी। जहां तक टमाटर उत्पादन का प्रश्न है इसकी सामान्य से अधिक औसत उपज हासिल की गई है। टमाटर की उपज औसतन 16 मीट्रिक टन की तुलना में, अनुबंधित खेती करने वाले किसानों ने 52 मीट्रिक टन की औसत उपज तथा हरी मिर्च की 6 मीट्रिक टन की तुलना में, 22 मीट्रिक टन उपज प्राप्त की है। कुछ टमाटर उत्पादन पहले के 28 हज़ार मीट्रिक टनों से बढ़कर लगभग 2 लाख मीट्रिक टन (अर्थात 7 गुना तक) बढ़ा है। इससे किसानों को औसत 8,500 रुपये प्रतिहेक्टेयर के हिसाब से बेहतर लाभ हासिल हुआ है। अब इस प्रदेश (पंजाब) में बड़े स्तर पर 'अनुबंधित खेती' का कारोबार दूसरी व्यावसायिक फ़सलों, जैसे– बासमती चावल, मूंगफली, जौ, मक्का, आलू, मेंथा, हाइयोला, सरसों, सूरजमुखी आदि में भी फैल रहा है।

महाराष्ट्र में लगभग 1.3 लाख हेक्टेयर में (टिम्मा आयल एंड केमिकल्स, आयल एक्सचेंज, एनबीरो फार्म्स लिमिटेड द्वारा) सोयाबीन, संतरा, सब्जियां, फल, मसाले, दलहन, आलू, गन्ना आदि के अनुबंध हुए हैं। राजस्थान में कठिया गेहूं जौ, सब्ज़ियां आदि के राज़टेक एग्रो, ए. डब्ल्यू.बी. द्वारा 10,000 हेक्टयर में अनुबंधित खेती की, कर्नाटक में शिमला मिर्च, घेरकिंस (खीरा), गेंदा, अश्वगंधा आदि का विभिन्न कंपनियों द्वारा 8,350 हेक्टेयर तथा गुजरात में रिलायंस द्वारा 7,200 हेक्टेयर में औषधीय पौधों एवं ग्वारपाठा के उत्पादन के अनुबंध दर्ज़ किए गए हैं। मध्य प्रदेश में विभिन्न कंपनियों द्वारा 1,200 हेक्टेयर भूमि में, तथा पश्चिमी बंगाल में मात्र 20 हेक्टेयर में आलू उत्पादन के क्षेत्र में अनुबंधित खेती दर्ज़ किया गया है।

समस्याएं

अनुबंधित खेती के कारोबार में अब कहीं-कहीं पर पूर्व निर्धारित मूल्य में देरी से भुगतान, कमज़ोर विस्तार सेवाएं तथा निवेश में धन की कमी की समस्याएं भी आ रही हैं। किसानों की कमज़ोर क्रयशक्ति की वज़ह से इस कारोबार में उनके मूल उत्पादक होने के बावजूद उनकी स्थिति गौण होती जा रही है। बाज़ार के उतार-चढ़ाव के चलते अनुबंधित राशि से बेहतर या कभी कम मूल्य मिलने के कारण भी कभी किसान तो कभी खरीदार बिना सूचना दिए अनुबंध का उल्लंघन कर देते हैं। इसलिए व्यवस्था में सुधार के लिए कृषि उत्पादों के मूल्य निर्धारण के समय किसानों के साथ किसान संघों, सरकारी तथा गैर सरकारी संगठनों की भागीदारी भी वांछित होगी। मूल्य निर्धारण प्रक्रिया में कान्ट्रैक्ट फार्मिंग कौंसिल की भागीदारी भी सहायक बन सकती है। उत्पादक किसान यदि खरीदार कंपनी के विपणन तंत्र में अंशधारक बने तो यह व्यवस्था कुछ और फायदेमंद, संतुलित तथा दूरगामी बन सकती है। बाज़ार समितियां इसे सुलझाने में अहम भूमिका अदा कर सकती हैं तथा मसलों को निपटाने, सुलझाने में सहयोग कर सकती हैं।

कौंसिल को सक्रिय करने की आवश्यकता

अनुबंधित खेती के कार्यकलापों को सुचारू रूप से चलाने के लिए जिला तथा राज्यस्तर पर यदि सर्व हिताय टिकाऊ कान्ट्रैक्ट कृषि कौंसिल की स्थापना हो तो इस कार्य में स्थिरता बनी रह सकती है। ज़रूरी है कि इस कार्य में विस्तृत कृषि बीमा योजना भी कार्य करे जिसके तहत किसानों को प्राकृतिक आपदा के समय मुआवज़ा भी मिले। अनुबंध कृषि के बारे में अब देश के कृषि मंत्रालय ने कुछ नीतिगत क़ायदे-कानून बनाए हैं जिसमें कृषि ऋण, प्रौद्योगिकी हस्तांतरण

(शेषांश पृष्ठ 62 पर)

भारतीय मसाले : अपरिमित संभावनाएं

● आर. बी. एल. गर्ग

मसाले हर खाद्य का एक महत्वपूर्ण अंग होते हैं। ऐसा मात्र उनकी महक या व्यंजनों को स्वादिष्ट बनाने की उनकी क्षमता के कारण ही नहीं बल्कि उनके अद्भुत चिकित्सीय गुणों के कारण भी है। इतिहास साक्षी है कि इन्हीं गुणों के कारण भारतीय मसालों ने पुर्तगालों, डच, फ्रांसीसी और ब्रितानियों को भारतीय समुद्र तटों की ओर आकर्षित किया था। ये मसाले सिर्फ़ चटपटे व स्वादिष्ट ही नहीं होते बल्कि अपरिमित एंटीऑक्सीडेंट गुणों से परिपूर्ण होते हैं। ये मसाले बीज, फल, छाल (दाल चीनी), पत्ते (तेजपात, करी पत्ता आदि), तने (वच), जड़ (हार्सरेडिस, अदरक आदि), वैरी (जॅरिपरवैरी), बल्व (लहसुन) आदि के रूप में भी होते हैं। चरक व सुश्रुत जैसे आयुर्वेदाचार्यों ने मसालों को बेशक़ीमती जड़ी-बूटी कहा है तो आधुनिक आयुर्विज्ञान के आचार्यों ने इसे उपयोगी एंटीऑक्सीडेंट बताया है। नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ न्यूट्रिशन द्वारा किए गए शोध बताते हैं कि अधिकांश पारंपरिक मसाले, यथा- कालीमिर्च, लौंग, हल्दी, लहसुन, अदरक व मुलेठी अनेक क्षयशील रोगों, जैसे- कैंसर, हृदयरोग, मधुमेह आदि से रक्षा कर जीवन की गुणवत्ता को सुधारते भी हैं और दीर्घायु भी बनाते हैं।

भारतीय मसालों को दो भागों में बांटा जा सकता है– पहला प्रमुख एवं दूसरा गौण। प्रमुख मसालों में काली मिर्च, छोटी इलायची, हल्दी, मिर्च व अदरक आती है। हाल ही में वैनिला को भी प्रमुख मसालों में शामिल किया गया है। गौण मसालों में धनिया, जीरा, सौंफ, दालचीनी, मैथी, लहसुन, तेजपात, दालचीनी, अजवायन आदि शामिल हैं। इन मसालों के अलावा इनसे निकाले गए तेल, तैलीयराल आदि भी शामिल हैं। पिछले दो दशकों में मसालों की दुनिया में जो कुछ महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं उनमें प्रमुख है वैनिला कृषि का सूत्रपात। केरल, कर्नाटक व तमिलनाडु के छोटे व सीमांत किसानों ने लगभग एक दशक पहले वैनिला कृषि आरंभ की थी जो धीरे-धीरे अब व्यावसायिक स्तर पर आ गई है। वैनिला विदेशी मुद्रा के स्रोत के रूप में देखी जा रही है क्योंकि न केवल इसका अंतरराष्ट्रीय मूल्य आकर्षक है अपितु भारत में वैनिला कृषि में सफलतम कृषि उपक्रम बनने की अपरिमित संभावनाएं भी हैं। वर्ष 2001 में वैनिला की एक किलो संसाधित फलियों का मूल्य 135 अमरीकी डॉलर प्रतिकिलो था जो 2003 में बढ़कर 450 डॉलर हो गया। मसालों से संबंधित अन्य महत्वपूर्ण परिवर्तन है, मसालों की जैविक कृषि जिसकी अंतरराष्ट्रीय मांग 20 से 25 प्रतिशत की दर से बढ़ रही है।

व्यावसायिक स्तर पर प्रमुख मसालों की खेती मूलतः केरल, कर्नाटक, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, सिक्किम, मेघालय आदि राज्यों में की जाती है। लेकिन कुछ मसाले केवल विशिष्ट राज्यों तक ही सीमित हैं। कालीमिर्च केवल केरल (95 प्रतिशत), कर्नाटक (1.7 प्रतिशत) व तमिलनाडु (1.4 प्रतिशत) में ही पैदा की जाती है। यद्यपि हाल के कुछ वर्षों में कुछ पूर्वोत्तर राज्यों- असम व मेघालय में भी काली मिर्च की खेती आरंभ हुई है। इसी प्रकार छोटी इलायची की खेती भी केरल (68 प्रतिशत), कर्नाटक (22 प्रतिशत) व तमिलनाडु (9.81 प्रतिशत) में केंद्रित है। वैनिला कृषि भी इन तीनों राज्यों तक सीमित है। गौण मसालों की कृषि पूरे भारत में फैली हुई है, जिसमें केसर जम्मू-कश्मीर की कृषि उपज है।

अंतरराष्ट्रीय व्यापार : पारंपरिक रूप से भारत मसालों का घर माना जाता है। यहां 30 लाख टन मसाले प्रतिवर्ष पैदा किए जाते हैं, जिनका मात्र 8 प्रतिशत ही निर्यात किया जाता है। भारत के अलावा अन्य मसाला उत्पादक देश हैं– इंडोनेशिया, मलेशिया, ब्राज़ील, चीन, गुबेरेमाला, वियतनाम, मिस्र, श्रीलंका, पाकिस्तान, तंजानिया, स्पेन, मेडागास्कर व थाईलैंड। भारत मसाले व मसाला उत्पादों को 100 से अधिक देशों को निर्यात करता है। भारतीय मसालों के प्रमुख उपभोक्ता देश हैं– संयुक्त राज्य अमरीका, ब्रिटेन, श्रीलंका, जापान, जर्मनी, सिंगापुर, मलेशिया, सऊदी अरब, कनाडा, फ्रांस, अरब, संयुक्त अरब अमीरात व बांग्लादेश।

निर्यात की प्रवृत्ति : यदि हम पिछले 4 दशकों के मसाला निर्यात की ओर नज़र डालें तो ऐसा लगेगा कि भारत ने मसालों की मात्रा व मूल्य दोनों ही दृष्टि से आशातीत प्रगति की है। देश ने वर्ष 1960-61 में मसालों के निर्यात से 17 करोड़ रुपये की विदेशी मुद्रा अर्जित की थी जो 1970-71 में बढ़कर 82 करोड़ रुपये, 1980-81 में 176 करोड़ रुपये तथा 1990-91 में 240 करोड़ रुपये तक पहुंच गई। मसालों के निर्यात में सबसे अधिक वृद्धि 1990-2000 में हुई जब निर्यात 2,044 करोड़ रुपये तक जा पहुंची। वैश्विक आर्थिक मंदी के बावजूद वर्ष 2007-08 के अनुमान के अनुसार हमने 4.44 लाख टन मसाला निर्यात कर 4,485 करोड़ रुपये की विदेशी मुद्रा अर्जित की जो 2008-09 में बढ़कर अनुमानतः 4.70 लाख टन हो गई जिससे 5,300 करोड़ रुपये की विदेशी मुद्रा अर्जित हुई। इस अवधि में मसालों की प्रतिइकाई औसत मूल्य में भी तीव्र गति से वृद्धि हुई है। फलस्वरूप हमें निर्यात से इतना अधिक मूल्य मिला है। भारत मसालों का आयात भी करता है जिनमें प्रमुख हैं– काली मिर्च, लौंग, बड़ी इलायची, अदरक एवं तेजपात। वर्ष 2007-08 में भारत ने 90,000 मिट्रिक टन मसालों का आयात किया जिसका मूल्य 645.50 करोड़ रुपये था जो 2008-09 में बढ़कर 765.39 करोड़ रुपये हो गया।

यदि मसालों के निर्यात का अध्ययन करें तो पता चलेगा कि काली मिर्च व छोटी इलायची

का पिछले कुछ वर्षों में कुल मसालों के निर्यात में योगदान अत्यंत निराशाजनक रहा है। वर्ष 1998-99 में 35 हज़ार टन काली मिर्च का निर्यात किया गया था जिसका मूल्य 634 करोड़ रुपये था जो 1999-2000 में बढ़कर क्रमश: 43 हज़ार टन व 885 करोड़ रुपये हो गया।

लेकिन 2000-01 में काली मिर्च के निर्यात की मात्रा आधी, 22 हज़ार टन रह गई और निर्यात मूल्य तो आधे से भी कम 380 करोड़ रुपये हो गया। 2008-09 में काली मिर्च के निर्यात की मात्रा में सुधार (25 हज़ार टन) हुआ और निर्यात मूल्य बढ़कर 413.74 करोड़ रुपये हो गया। पूर्व के वर्षों में काली मिर्च के कम निर्यात का प्रमुख कारण वियतनाम द्वारा कम मूल्य पर निर्यात करना रहा। लगभग यही स्थिति छोटी इलायची की भी है जिसमें हमारा प्रतिद्वंद्वी ग्वाटेमाला है। इलायची की कृषि के लिए आज भी हमें मानसून पर निर्भर रहना पड़ता है क्योंकि इस मसाले की खेती लघु कृषक (70 प्रतिशत से अधिक) करते हैं। अन्य मसालों में अदरक, हल्दी व लहसुन का भी निर्यात निष्पादन अनाकर्षक ही रहा। वैनिला व पुदीना तेल, जो निर्यात की तुलनात्मक रूप से नयी मदें हैं, का निर्यात निष्पादन संतोषजनक कहा जा सकता है लेकिन मात्रा व मूल्य की दृष्टि से सर्वाधिक आकर्षक लाल मिर्च रही है।

समस्याएं एवं समाधान

पिछले दशक में विश्व के मसाला परिदृश्य में भारी बदलाव आया है। लेकिन दुर्भाग्य से अभी तक भारत के मसाला क्षेत्र में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। दूसरे शब्दों में, भारत में मसालों को लेकर सकारात्मक परिवर्तन की गति उतनी प्रबल नहीं रही जितनी की दुनिया के प्रमुख मसाला उत्पादक व निर्यातक देशों की रही है। यदि ऐसा नहीं है तो क्या वज़ह है कि हम अपने परंपरागत मसालों के निर्यात को बनाए रखने में असमर्थ रहे हैं और हमसे कमज़ोर प्रतिद्वंद्वी हमसे आगे निकल गए हैं? भारतीय मसालों के निर्यात संबंधी व्यवधान मुख्यत: निम्न हैं :

- प्रति हेक्टेयर उपज की अल्पता।
- मसालों की गुणवत्ता बनाए रखने में असमर्थता।
- बाज़ार विविधीकरण व मसालों के नये प्रयोग विकसित करने में अक्षमता।
- मसालों की बाज़ार मांग में अल्प सामंजस्य।
- निर्यात योग्य आधिक्य की अपर्याप्तता।
- मसालों में गुणयोग अपर्याप्तता।

पिछले दो दशकों में कुछ मसालों की प्रति हेक्टेयर उपज या तो स्थिर रही है या घटी है। भारत में काली मिर्च की प्रतिहेक्टेयर उपज 375 किलोग्राम बनी हुई है जो उसके प्रतिद्वंद्वियों वियतनाम (1700), इंडोनेशिया (500), मलेशिया (2000) व थाईलैंड (2800) से काफी कम है, जिसके कारण इन देशों में काली मिर्च की प्रतिइकाई लागत भी अपेक्षाकृत कम है। यही कारण है कि वियतनाम काली मिर्च को 1,225 डॉलर प्रतिटन की दर से विदेशी बाज़ार में बेचने की सामर्थ्य रखता है जो भारत के 1,600 डॉलर से काफी कम है। दूसरे, भारत में काली मिर्च की आंतरिक खपत अधिक है, जिसके कारण निर्यात योग्य आधिक्य अपर्याप्त ही बना रहा है, जबकि वियतनाम काली मिर्च की अपनी समूची उपज का निर्यात कर देता है। भारतीय निर्यात किए जाने वाले मसालों की गुणवत्ता बनाए रखने में भी सफल नहीं हो पा रहे हैं क्योंकि अधिकांश मसालों की फ़सल कटाई के बाद की क्रियाएं पुरातन हैं, जिसके कारण मसालों में संदूषण व कीटों का प्रकोप कोई आश्चर्यजनक बात नहीं। अंतरराष्ट्रीय व्यापार की दृष्टि से मसालों की गुणवत्ता संबंधी नियम काफी कठोर हैं। हम गुणवत्ता की दृष्टि से मसालों की क्षमता का निर्माण नहीं कर पाते।

भारत 50 से अधिक मसालों का निर्यात करता है लेकिन 4-5 मसाले ही ऐसे हैं जो 75 प्रतिशत से अधिक विदेशी विनिमय अर्जित करते हैं। इस कारण मूल्य अस्थिरता की संभावनाएं बनी रहती है, क्योंकि ये मूल्य संवेदनशील हैं। इस दोष को दूर करने के लिए मसालों के उत्पादन, नियोजन के साथ-साथ उत्पाद पेटिका के विस्तार की भी आवश्यकता है। नये तथा आकर्षक मूल्य के मसाला उत्पादों पर विशेष ध्यान देने की ज़रूरत है। जैसे- वैनिला व जैविक मसालों का उत्पादन जिनकी अंतरराष्ट्रीय मांग तेज़ी से बढ़ती जा रही है। स्पाइसेज बोर्ड भारतीय मसाला उद्योग की समस्याओं से अवगत है। स्पाइसेज बोर्ड अनेक कार्यक्रमों का क्रियान्वयन कर रहा है जो निम्नवत हैं :

- विदेशी बाज़ारों में भारतीय मसाला ब्रांडों का संवर्धन।
- अंतरराष्ट्रीय व्यापार मेलों में भाग लेना।
- मसालों के अनुसंधान व विकास में अधिकाधिक योगदान।
- व्यापार संवर्धन के लिए यह भी आवश्यक है कि मसालों की गुणों में अभिवृद्धि हो क्योंकि सीधे-सपाट मसालों के निर्यात से मूल्य प्रतियोगिता के कारण भारत को अच्छा मूल्य प्राप्त नहीं होता। इस दिशा में भारत ने कुछ प्रगति की है लेकिन इस ओर और अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। चूंकि मसालों का अंतरराष्ट्रीय व्यापार अत्यंत जटिल और मूल्य गुणवत्ता की दृष्टि से अधिक चैतन्य हो गया है, यह आवश्यक है कि नये उपभोक्ताओं की तलाश के साथ-साथ मसाला पेटिका को और अधिक आकर्षक व समृद्ध बनाया जाए। ❑

तालिका-1

मसालों के निर्यात की दशा

वर्ष	मात्रा (हज़ार टन में)	मूल्य (करोड़ रुपये में)
1970-71	48	38.82
1980-81	93	116.76
1990-91	110	242.14
2000-2001	236	1833.00
2007-2008	414	4435.50
2008-2009	471	5300.25

स्रोत : स्पाइसेज इंडिया, जुलाई 2009

तालिका-2

निर्यात किए जाने वाले मसाले	मूल्य (करोड़ रुपये में)
काली मिर्च	413.71
पोदीना	1420.25
मिर्च	1080.95
जीरा	544.00
हल्दी	248.58
धनिया	203.79

स्रोत : स्पाइसेज इंडिया, जुलाई 2009

(लेखक सेवानिवृत्त व्याख्याता हैं)

जेनेटिकली मोडिफायड (जीएम) फूड्स

जेनेटिकली मोडिफायड (जीएम) फूड्स क्या हैं?

जेनेटिकली मोडिफायड (जीएम) फूड्स (खाद्य उत्पाद) जीएम पौधों से उत्पन्न होते हैं। यानि संशोधित उत्पत्ति आधारित पौधे जेनेटिकली मोडिफायड आर्गेनिज़्म (जीएमओ) वे होते हैं जिनका उत्पत्ति पदार्थ (डीएनए) परिवर्तित कर दिया जाता है। यह काम (जेनेटिक इंजीनियरिंग) उत्पत्ति विषयक अभियांत्रिकी अथवा 'रिकंबिनैंट डीएनए तकनीक (फिर जोड़ने वाली डीएनए तकनीक) के ज़रिये संभव होता है। इसका मकसद कुछ नये खरपतवाररोधी, अधिक पोषण क्षमता और अधिक टिकाऊ पौधे व खाद्य उत्पाद हासिल करना है। इस प्रक्रिया में चयनित खास जीन, जिनकी पहचान कुछ इच्छित गुणों व विशेषताओं के लिए की गई है, को एक प्रकार के पौधे से दूसरे में प्रत्यारोपित किया जा सकता है। यह काम विजातीय जीव-प्रजातियों के बीच भी संभव हो सकता है। वैकल्पिक रूप से किसी भी पौधे के उत्पत्ति पदार्थ में से चयनित जींस को हटाया भी जा सकता है। कुछ खाद्य प्रजातियां जिनके जीएम संस्करण दुनिया में विकसित किए जा चुके हैं उनमें टमाटर, सोयाबीन, मक्का, कपास, चावल, कैनोला और चुकंदर आदि हैं।

●जीएम फूड्स का उत्पादन क्यों किया जाता है?

जीएम फूड्स का विकास और उत्पादन उत्पादकों और उपभोक्ताओं अथवा दोनों के फायदे के लिए किया जाता है। इस मामले में एक अहम उद्देश्य ऐसी प्रजातियों में विकास के ज़रिये फ़सल संरक्षण को बढ़ावा देना है। मतलब ऐसी फ़सलें तैयार करना है जो कीट, खरपतवार, अत्यधिक पाला, मृदा क्षारीयता (ऊसर) और अन्य प्रकार की निम्न गुणवत्ता वाली मृदा (मिट्टी) का दुष्प्रभाव न पड़े या कम-से-कम पड़े। उदाहरण के तौर पर खरपतवार रोधी प्रजाति विकसित करने के लिए बेमिलस थरिंजीनसिस (बीटी) बैक्टीरिया से टॉक्सिन (विष) मक्के जैसे कुछ पौधों के जेनेटिक (उत्पत्ति) पदार्थ में मिलाया जा रहा है। यह टॉक्सिन मौजूदा समय में कृषि क्षेत्र में कीटनाशकों के तौर पर प्रयोग किया जाता है। इसके पीछे उद्देश्य यह है कि पौधा अपने आप में ही टॉक्सिन उत्पादक शुरू कर देता है और आंतरिक रूप से खरपतवाररोधी क्षमता विकसित कर लेता है। इससे कीटनाशकों के अतिरिक्त प्रयोग में भी कमी लाई जा सकेगी। इसके ज़रिये ऐसे कीटनाशकों के प्रयोग से उत्पन्न अन्य प्रतिकूल प्रभावों को कम किया जा सकेगा।

इसी प्रकार वायरसरोधी क्षमता पौधों में बीमारी पैदा करने वाले कुछ खास प्रकार के वायरस के जीन के प्रयोग से हासिल की जाती है। पौध विज्ञानी ऐसी प्रजातियों को विकसित करने में जुटे हैं जो विभिन्न पौधों में लगने वाली बीमारियों का मुक़ाबला करने की क्षमता उत्पत्ति आधारित अभियांत्रिकी (जेनेटिक इंजीनियरिंग) के ज़रिये हासिल करेंगी। खरपतवार रोधी (हबीसाइड) सोयाबीन आदि की ऐसी प्रजातियां विकसित की जा रही हैं जिससे इनके प्रयोग में कमी लाई जा सकती है। ठंडे पानी में रहने वाली मछली से हासिल पालारोधी जीन का प्रयोग तंबाकू और आलू के पौधों में किया गया है जिससे जीएम प्रजातियां विकसित की जा सकें जो अप्रत्याशित रूप से पाला पड़ने और ठंड को बर्दाश्त करने की क्षमता रखती हैं।

इसका दूसरा मकसद एक ही खाद्य उत्पाद की परंपरागत प्रजातियों के मुक़ाबले अधिक पोषक तत्व प्रदान करने वाली प्रजातियां विकसित करना है। उदाहरण के तौर पर चावल की ऐसी प्रजाति विकसित की गई है जिसमें विटामिन 'ए' भारी मात्रा मौजूद है।

कुछ खाद्य उत्पाद एलर्जी पैदा करने के लिए जाने जाते हैं। ऐसे पौधों की जीएम प्रजातियां तैयार की जा रही हैं जो एलर्जी रोधी हैं। इसके अतिरिक्त जीएम फूड्स की ऐसी प्रजातियां भी तैयार की जा रही हैं जो परंपरागत रूप से मौजूद उनकी अन्य प्रजातियों के मुकाबले जल्द फ़सल तैयार करने वाली होती हैं और इसके साथ ही ऐसे उत्पाद लंबे समय तक खाने लायक बने रहते हैं।

विश्व स्तर पर जनसंख्या बढ़ने के साथ खाद्यान्न सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए जीएम फूड्स की इन सारी खूबियों को खासा महत्व दिया जाता है।

●जीएम फूड्स को लेकर अहम चिंताएं क्या हैं?

जीएम फूड्स को लेकर अहम चिंताएं पर्यावरण, मानव स्वास्थ्य और अर्थव्यवस्था पर पड़ने वाले उसके प्रभाव हैं।

स्वास्थ्य क्षेत्र में तीन अहम मुद्दे– एलर्जी पैदा करने की समस्या या एलर्जी रिएक्शन पैदा करने की आशंका को बढ़ाने से संबंधित है। इसके अलावा मानव शरीर में (खास) जीन का प्रत्यारोपण या फिर तमाम जींस का प्रत्यारोपण और उसके ख़तरनाक परिणाम और किसी फ़सल की जीएम प्रजाति की परंपरागत प्रजाति में मिलावट जैसे मामले भी चिंता की वज़ह बने हुए हैं। जहां तक पहली दो चिंताओं का सवाल है, किसी भी खाद्य उत्पाद को सुरक्षित जीएम फूड घोषित करने से पहले उसका परीक्षण किया जाता है। इसके बावजूद इसके उपभोग पर दूरगामी प्रभावों को लेकर कई प्रकार की आशंकाएं बनी रहती हैं। जहां तक जीएम और गैर-जीएम प्रजाति का आपस में मिलावट का मामला है, यह समस्या अमरीका में पैदा हुई जब चारे के लिए प्रमाणित मक्के की एक प्रजाति की मिलावट मानव के उपभोग वाली मक्के की एक प्रजाति में पाई गई। इसके बावजूद अनेक देशों ने इस प्रकार की मिलावट को कम करने की रणनीतियों को अपनाया है। इनमें जीएम फ़सल और परंपरागत फ़सल के खेतों को साफतौर पर अलग-अलग रखा जाता है।

पर्यावरण के क्षेत्र में भी इससे संबंधित चिंता के कई विषय हैं। जैसेकि जीएम फूड के ज़रिये जंगली जीवों में अभियांत्रिक जीन का प्रवेश, लाभकारी कीटों पर घातक प्रभाव, कीटनाशकरोधी कीटों की संख्या में बढ़ोत्तरी, जीएम पौधों की कटाई के बाद ऐसे जीन का उस स्थान में बचा रह जाना, जीन स्थायित्व और गैर-जीएम पौधों की संख्या में कमी और जैव विविधता का नुक़सान।

आर्थिक क्षेत्र में जीएम प्रजातियों को पेटेंट कराने से संबंधित बातें चिंता के विषय हैं। इस बात को लेकर चिंता ज़ाहिर की जा रही है कि ऐसी नयी प्रजातियों को पेटेंट कराने से उनके बीजों की क़ीमतें बढ़ जाएंगी और इससे छोटे किसानों का नुक़सान होगा। संभावित पेटेंट उल्लंघन से विवाद पैदा होने की आशंका है। पौधों में आत्मघाती यानी सुसाइड जीन से स्टेटाइल (बांझ या अनुत्पादक) बीजों में बढ़ोत्तरी होगी जिसके परिणामस्वरूप किसानों को हर साल बीज खरीदने होंगे।

●भारत में जीएम फूड्स का नियमन कैसे किया जाता है?

भारत में सभी जीएम संबंधी गतिविधियों और उनके उत्पादों का नियमन पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986 के ज़रिये पर्यावरण एवं वन मंत्रालय करता है। इससे संबंधित कानूनी प्रावधान को 'रूल्स फॉर मैन्यूफैक्चर/यूज/इंपोर्ट/एक्सपोर्ट एंड स्टोरेज ऑफ हजार्डस माइक्रोआर्गेनिज़्म जेनेटिकली इंजीनियर्ड आर्गेनिज़्म ऑर सेल्स, 1989 (वंशानुगत रूप से अभियांत्रिक पौधे अथवा कोशिकाएं, ख़तरनाक सूक्ष्म आंगिक भंडारण और उत्पादन/उपयोग/ आयात/निर्यात के नियम, 1989) कहा जाता है। इस कानूनी व्यवस्था का कार्यान्वयन प्रमुख रूप से पर्यावरण एवं वन मंत्रालय, जैव प्रौद्योगिकी विभाग और विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय के ज़रिये किया जाता है। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय यह काम 6 सक्षम प्राधिकरणों के ज़रिये करता है। ये हैं– रिकंबिनैंट डीएनए एडवाइजरी कमेटी (आरडीएसी), रिव्यू कमेटी ऑन जेनेटिक मैनीपुलेशन (आरसीजीएम), जेनेटिक इंजीनियरिंग अप्रूवल कमेटी (जीईएसी), इंस्टीट्यूशनल बायोसेफ्टी कमेटी (आईबीएससी), स्टेट बायोसेफ्टी को-ऑर्डिनेशन कमेटी (एसबीसीसी) और डिस्ट्रिक्ट लेवल कमेटीज (डीएलसी) आदि। इन प्राधिकरणों ने नियम 1989 के तहत जैव सुरक्षा, जहरीलेपन, एलर्जीकारक क्षमता, मैदानी प्रयोग, खाद्य एवं चारा सुरक्षा, उनसे बने उत्पादों और उनके ज़रिये पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभावों के आकलन के लिए दिशानिर्देश, प्रोटोकाल एवं प्रक्रियाएं निर्धारित की हैं। इसके अतिरिक्त खाद्य सुरक्षा एवं मानक अधिनियम, 2006 के लागू होने के बाद अस्तित्व में आने वाले भारतीय खाद्य सुरक्षा मानक प्राधिकरण को विभिन्न खाद्य कानूनों के एकीकरण और बहुत-सी नियामक एजेंसियों के स्थान पर एक नियामक एजेंसी स्थापित करने की जिम्मेदारी दी गई है। इसमें भारत के सर्वाधिक महत्वपूर्ण खाद्य नियमन कानून 'खाद्य मिलावट रोकथाम नियम, 1955 के स्थान पर प्रस्तावित खाद्य सुरक्षा एवं मानक नियम एवं नियमन कानून, 2009 लागू करने की बात भी शामिल की गई है।

● भारत में जीएम फ़सलें कितनी प्रचलित हैं?

भारत में अभी तक सिर्फ़ बीटी कॉटन ही एकमात्र जीएम फ़सल है जो पैदा की जा रही है। बीटी बैंगन के उत्पादन पर स्थगन आदेश ज़ारी होने के बाद अभी तक भारत में और कोई जीएम फूड पैदा नहीं किया जा रहा है। हालांकि जीएम फ़सलों में उपज को बढ़ाने और उत्पादन लागत घटाने की क्षमता के चलते कृषि आय बढ़ाने की क्षमता मौजूद है। इसलिए सरकार विभिन्न जीवों/पादपों में जीन को अन्य पौधों में प्रत्यारोपित करने से बनी नयी किस्म की फ़सलों (ट्रांसजेनिक क्रॉप्स) को समर्थन देने के पक्ष में रही है। अधिकांश ट्रांसजेनिक फ़सलों का मौजूदा समय में विभिन्न सरकारी व निजी संस्थाओं में विकास एवं परीक्षण हो रहा है। इंडियन काउंसिल ऑफ एग्रीकल्चर रिसर्च यानी आईसीएआर (भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद) फ़सलों में ट्रांसजेनिक्स पर एक बड़ी नेटवर्क परियोजना संचालित कर रहा है जिससे कि ट्रांसजेनिक फ़सलों और फंक्शनल जीनोमिक्स (कार्यशील जीनशास्त्र) पर शोध एवं विकास शुरू और मजबूत किया जा सके। जीएम फ़सलों के प्रयोग से मानव स्वास्थ्य और पर्यावरण पर पड़ने वाले ज़ोखिमों से संबंधित चिंताओं को ध्यान में रखते हुए सरकार ने हर ऐसी फ़सल में अलग-अलग तरह से सुरक्षा चिंताओं के

(शेषांश पृष्ठ 68 पर)

क्रम. सं.	गतिविधि		जिम्मेदार प्राधिकरण
1.	सम्मिलित शोध (प्रयोगशाला एवं ग्रीन हाउस)	–	आरसीजीएम (डीबीटी)
2.	प्रायोगिक व्यवस्थाओं का चयन/बीआरएलवन ट्रायल्स	–	आरसीजीएम एवं जीईएसी (एमओईएफ)
3.	जीएम फूड्स का खाद्य सुरक्षा आकलन/व्यावहारिक एवं प्रसंस्कृत	–	एफएसएसएआई
4.	जीएम पौधों से पर्यावरण ज़ोखिम का आकलन	–	जीईएसी
5.	जीएम फूड्स(प्रसंस्कृत) के वाणिज्यिक उत्पादन को मंजूरी (व्यावहारिक अर्थात एलएमओ)	–	जीईएसी
6.	जीएम पौधों की पर्यावरण (वाणिज्यिक) मंजूरी	–	जीईएसी

खुशहाल बनाने वाली प्रमुख कृषि विकास योजनाएं

● संगीता यादव

भारत की 70 फीसदी से अधिक आबादी गांवों में बसती है। इनका मूल पेशा कृषि है। एक तरह से कृषि ही भारतीय अर्थव्यस्था की आधारशिला है। जब तक कृषि का विकास नहीं होगा तब तक भारतीय अर्थव्यवस्था के सुदृढ़ीकरण की बात बेमानी है। क्योंकि भारत की दो तिहाई जनसंख्या किसी न किसी रूप में कृषि एवं उससे जुड़े अन्य उपक्रमों पर आधारित है, यही वजह है कि भारत में कृषि विकास के लिए निरंतर प्रयास किए जा रहे हैं। सरकार कृषि विकास के लिए हर संभव कोशिश कर रही है। वर्ष 2010-11 के बजट में हरित क्रांति के विस्तार के लिए 400 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया। इसके अलावा 60 हज़ार दलहन-तिलहन ग्राम बनाने की योजना विकसित की गई। इतना ही नहीं वर्ष 2009-10 की एकमुश्त कृषि ऋण माफी योजना के तहत ही किसानों को कर्ज़ चुकाने के लिए छह माह का अतिरिक्त समय दिया गया। सरकार ने किसानों के लिए उपकरण सस्ते करने के साथ ही विभिन्न बैंकों को इस बात के लिए पाबंद किया कि वे किसानों को वरीयता के आधार पर ऋण मुहैया कराएं। इसी तरह समय पर ऋण चुकाने वाले किसानों को ब्याज में दो फीसदी की छूट का भी प्रावधान किया गया। कृषि विकास के लिए विभिन्न योजनाएं लागू करने के साथ ही किसानों की स्थिति में सुधार के लिए विभिन्न योजनाओं का संचालन किया जा रहा है। आज़ादी के बाद 1960 के दशक में हरित क्रांति का नारा दिया गया तो अब विभिन्न बैंकों के ज़रिये कृषि एवं उस पर आधारित उपक्रमों को संवारने की कोशिश की जा रही है। किसान क्रेडिट कार्ड, फ़सल बीमा योजना, राष्ट्रीय बागवानी मिशन आदि इसी प्रयास का एक हिस्सा हैं। वर्ष 2000 में राष्ट्रीय कृषि नीति की घोषणा की गई। इसका उद्देश्य भारतीय कृषि की विभिन्न संभावनाओं को विकसित करना है। ग्रामीण अवसंरचना को मज़बूत बनाते हुए ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि से जुड़े रोज़गार को पोषित करना और रोज़गार के नये अवसर विकसित करना भी इसके मकसद में शामिल हैं। कृषि को बढ़ावा देने के लिए केंद्र सरकार की ओर से योजनाओं का संचालन किया जा रहा है। इन योजनाओं का संक्षिप्त परिचय निम्नलिखित है:

राष्ट्रीय कृषक नीति

केंद्र सरकार ने किसानों की स्थिति में सुधार के लिए राष्ट्रीय कृषक नीति की घोषणा की है। राष्ट्रीय किसान आयोग की सिफ़ारिशों के बाद इसे वर्ष 2007 में अनुमोदित किया गया। इसकी खासियत यह है कि इसमें उत्पादन बढ़ाने के साथ ही किसानों के कल्याण को प्रमुखता दी गई है। किसानों को उपयुक्त सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने के साथ ही उनके कृषि संबंधी ज्ञान को बढ़ाने का भी इसमें प्रावधान किया गया है। इसी तरह राष्ट्रीय कृषि नीति में किसानों को जैव प्रौद्योगिकी, सूचना संचार, नैनो प्रौद्योगिकी, मृदा संरक्षण, खाद्य सुरक्षा आदि से भी जोड़ने की योजना है। निश्चित रूप से राष्ट्रीय कृषि नीति बनने के बाद किसानों को काफी लाभ हुआ है। क्योंकि किसानों की स्थिति के अनुसार समय-समय पर सुझाव-समस्या समाधान आदि के लिए अंतरमंत्रालय समिति का भी गठन किया गया है।

राष्ट्रीय कृषक नीति में निम्नलिखित प्रावधान किए गए हैं:

- **ऋण एवं बीमा :** इसके तहत जो किसान कर्ज़ में डूबे हुए हैं उनके लिए कृषि राहत पैकेज़, ऋण के लेन-देन से संबंधित सलाहकार केंद्रों का विकास, किसानों को तकनीकी ज्ञान देने के लिए प्रशिक्षण संस्थान का विकास, फ़सलों के बर्बाद होने की स्थिति में बीमा एवं मुआवज़ा का प्रावधान करना है।
- **न्यूनतम समर्थन मूल्य :** देश में ऐसी व्यवस्था बनाना जिसके ज़रिये किसानों को उनकी उपज का उचित मूल्य मिल सके एवं एकीकृत बाज़ार की व्यवस्था करना।
- **महिला सुरक्षा :** खेतों में काम करने वाली महिलाओं को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने के साथ ही उनके बच्चों के लिए पालना घर, पोषण आदि की व्यवस्था। स्वयं सहायता समूह के ज़रिये खेती करने वाली महिलाओं को प्रोत्साहन आदि।
- किसानों को तकनीकी रूप से सुदृढ़ करना। नयी तकनीकी के इस्तेमाल के प्रति जागरूक करना। जैव प्रौद्योगिकी, संचार, नैनो, जैव सुरक्षा आदि सुनिश्चित करना।

राष्ट्रीय कृषि विकास योजना

राष्ट्रीय कृषि विकास योजना के ज़रिये अलग-अलग राज्यों में विभिन्न तरह की योजनाएं चलाई जा रही हैं। राज्यों की भौगोलिक एवं उनकी आधारभूत ज़रूरतों पर आधारित योजनाएं तैयार की जा रही हैं। इसके लिए चालू वित्तीय वर्ष में क़रीब 25 हज़ार करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है। राज्य आयोजना स्कीम को इसी के तहत मदद मुहैया कराई जा रही है। इसके तहत विभिन्न राज्यों को कृषि क्षेत्र में अतिरिक्त संसाधन विकसित करने के लिए केंद्र की ओर से मदद मुहैया कराई जा रही है।

राष्ट्रीय कृषि विकास योजना के तहत गेहूं,

धान, दालों आदि फ़सलों का समेकित विकास। कृषि यंत्रीकरण, सिंचित फार्मिंग प्रणाली का विकास, बंजर भूमि का विकास, राज्यों के बीज फार्मों का विकास, कीट प्रबंधन, मंडी विकास, पशुपालन, बागवानी, जैव उर्वरक आदि का विकास करना है।

किसान क्रेडिट कार्ड

केंद्र सरकार की ओर से बैंकों पर आधारित यह योजना किसानों के लिए रामबाण साबित हो रही है। इसका फायदा बड़े किसानों के साथ ही लघु एवं सीमांत किसानों को भी भरपूर मिल रहा है। किसान क्रेडिट कार्ड ने न सिर्फ़ कृषि विकास को गति दी है बल्कि सामाजिक समस्या का भी खात्मा किया है। अब किसानों को न तो साहूकारों के जाल में फंसना पड़ता है और न ही पैसे के अभाव में उनकी फ़सल ख़राब होती है। वे समय पर फ़सल में न सिर्फ़ खाद-बीज की व्यवस्था कर लेते हैं बल्कि दूसरी आधारभूत ज़रूरतें भी पूरी करने में सफल हैं। किसान क्रेडिट कार्ड के लिए भारतीय रिजर्व बैंक एवं नाबार्ड ने योजना तैयार की और इसे वर्ष 1998 में लागू किया। मार्च 2001 में जहां क़रीब 1 करोड़ 30 लाख किसानों के पास क्रेडिट कार्ड था वहीं वर्ष 2009 में इसकी संख्या तीन करोड़ के अधिक हो गई। इस योजना में किसानों को उनके खेत के रक़बे के हिसाब से ऋण की राशि तय की गई। जिस किसान के पास जितनी ज़मीन होगी उसी हिसाब से ऋण की सीमा निर्धारित कर दी गई है। किसान जब चाहे बैंक से पैसा लें और उसका उपयोग कृषि कार्य में करें। जैसे ही उसके पास पैसा आए वह ऋण खाते में पैसा जमा कर दें और ली गई राशि पर ब्याज से मुक्ति पा लें। किसान क्रेडिट कार्ड का मूल उद्देश्य भी यही था कि किसानों को बार-बार ऋण के लिए बैंकों में आवेदन न करना पड़े। उन्हें समय पर बिना किसी बिचौलिये के आसानी से ऋण उपलब्ध कराया जाए। इतना ही नहीं किसान क्रेडिट कार्ड में हर मौसम में मूल्यांकन की भी आवश्यकता नहीं है। किसान कोई भी पहचान-पत्र बैंक को उपलब्ध कराकर अपनी फ़सल के लिए आवश्यक ऋण ले सकता है। किसान जितना ऋण लेता है, उसी पर उसे ब्याज देना होता है। इस योजना के तहत किसान को एक पासबुक दिया जाता है। पासबुक पर किसान का नाम व पता, भूमि जोत का विवरण, उधार सीमा, वैधता अवधि, पासपोर्ट आकार का फोटो लगा होता है। यह पासबुक लेनदेन के साथ ही पासपोर्ट का भी काम करती है।

इतना ही नहीं किसान क्रेडिट कार्ड को राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना के अधीन लाया गया है। कार्डधारक किसान की मृत्यु पर 50 हज़ार रुपये, स्थायी पूर्ण अक्षमता पर 50 हज़ार, दो अंग या दोनों आंख या एक अंग तथा एक आंख के खो जाने पर 50 हज़ार, अस्थायी विकलांगता पर 25 हज़ार रुपये की वैयक्तिक दुर्घटना बीमा रक्षा दी जाती है।

राष्ट्रीय फ़सल बीमा योजना

केंद्र सरकार की ओर से शुरू की गई राष्ट्रीय फ़सल बीमा योजना भी किसानों के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण साबित हो रही है। इस योजना की शुरुआत 1999 में की गई। विभिन्न कारणों से फ़सल के बर्बाद होने पर किसान को क्षतिपूर्ति मिलती है। संबंधित फ़सल की लागत एवं क्षतिपूर्ति के तहत किसानों को मुआवज़ा दिया जाता है। यह योजना ऋणी एवं गैर-ऋणी दोनों तरह के किसानों पर समान रूप से लागू होती है। वर्तमान में यह 23 राज्यों एवं दो केंद्रशासित राज्यों में लागू है। इसके तहत गन्ना, आलू, रुई, धनिया, इलायची, केला, मिर्च, हल्दी, जीरा आदि फ़सल को शामिल किया गया है। हालांकि फ़सल बीमा की शुरुआत वर्ष 1972 में ही भारतीय जीवन बीमा निगम ने शुरू कर दी थी, लेकिन जानकारी के अभाव में इसका लाभ किसानों को नहीं मिल पाता था। केंद्र सरकार की ओर से इस दिशा में पहल किए जाने से किसानों को काफी फायदा मिला है।

रूपांतरित राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना

आर्थिक मामलों की कैबिनेट समिति ने रूपांतरित राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना को मंजूरी दे दी है। इसे पायलट प्रोजेक्ट के तहत 50 जिलों में लागू किया गया है। वर्ष 2010-11 और 2011-12 के लिए 358 करोड़ रुपये के बजटीय प्रावधान को भी मंजूरी दी जा चुकी है। इस योजना से किसानों को काफी लाभ मिलने की उम्मीद है। इससे विभिन्न ज़ोखिमों के अवसर पर फ़सल के नुक़सान होने के बाद भी किसान आर्थिक रूप से ज्यादा प्रभावित नहीं होंगे और कृषि से होने वाली आय स्थिर रख सकेंगे। इसका सबसे ज्यादा फायदा कॉफी उत्पादक किसानों को मिला है।

एकीकृत आपदा बीमा

इसके तहत प्राकृतिक आग और वज्रपात, आंधी-तूफान, समुद्री तूफान, भूकंप, चक्रवात, ज्वार-भाटा, भू-स्खलन, अनावृष्टि, कीट बीमारी आदि को शामिल किया गया है। इन सभी अवस्थाओं में बीमित किसान के विकल्प से बीमित फ़सल के सकल उत्पाद तक बीमित राशि को बढ़ाया जा सकता है। फ़सल के अधिसूचित होने की स्थिति में किसान फ़सल की क़ीमत को 150 फीसदी तक बढ़ा सकता है। फ़सल कर्ज़ वितरण के मामले में भारतीय रिज़र्व बैंक और राष्ट्रीय कृषि ग्रामीण विकास बैंक की ओर से जारी होने वाले निर्देश लागू होंगे। लघु एवं सीमांत किसानों के प्रीमियम में 50 फीसदी राज्य सरकार की ओर से अनुदान होगा।

राष्ट्रीय बागवानी मिशन

राष्ट्रीय बागवानी मिशन की शुरुआत वर्ष 2005-2006 में केंद्र सरकार की ओर से की गई। इस योजना का उद्देश्य देश में बागवानी को बढ़ावा देने के साथ ही बागवानी उत्पादन को बढ़ाना भी है। इसे सिक्किम, जम्मू-कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, उत्तरांचल सहित सभी राज्यों (पूर्वोत्तर के आठ राज्य को छोड़कर) में लागू किया गया है। पूर्वोत्तर के आठों राज्यों में तकनीकी मिशन नामक योजना चलाई जा रही है।

मौसम आधारित फ़सल बीमा योजना

मौसम आधारित बीमा का लक्ष्य बीमित व्यक्ति को मौसम की विपरीत स्थितियों में फ़सल के नुक़सान की स्थिति में लाभ दिलाना है। इसे भारत में वर्ष 2003 में शुरू किया गया। इसकी शुरुआत आंध्र प्रदेश, हरियाणा, छत्तीसगढ़, गुजरात, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, पंजाब, राजस्थान से किया गया। इसके बाद इसे सभी राज्य में लागू किया गया। मौसम आधारित खरीफ फ़सल बीमा के तहत खरीफ में कम या अधिक बारिश होने, रबी में मौसम की विषम परिस्थितियों, जैसे ओलावृष्टि अथवा अधिक गर्मी होने से फ़सल के नुक़सान होने पर लागू होता है। यह उपज की गारंटी का बीमा नहीं है। जबकि राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना में सभी संभव जोखिम शामिल किए गए हैं। मौसम आधारित फ़सल बीमा योजना में नुक़सान का आकलन पूरी तरह से मौसम सूचकांक पर आधारित होता है। इस योजना का लाभ फ़सल उगाने वाले सभी किसान ले सकते हैं। इसमें अधिकतम देयता आठ हज़ार प्रति एकड़ है। इसी तरह रबी फ़सल बीमा के तहत दिसंबर एवं अप्रैल माह के बीच मौसम में आने वाले उतार-चढ़ाव से बर्बाद होने वाली

फ़सल के संबंध में सुरक्षा प्रदान किया जाता है। गेहूं, आलू, सरसों, चना आदि फ़सलों का बीमा होने की स्थिति में किसानों को चार से छह हफ्ते में दावे का भुगतान कर दिया जाता है। उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान जैसे राज्यों में गेहूं, सरसों, चना, जौ, धनिया आदि फ़सलें ओलावृष्टि अथवा एकाएक तापमान में होने वाले बदलाव के कारण ख़राब हो जाती हैं। ऐसे में मौसम बीमा किसानों को राहत प्रदान करता है। भारतीय कृषि बीमा कंपनी किसानों को क्षतिपूर्ति प्रदान करती है।

वर्षा बीमा योजना

भारतीय कृषि बीमा कंपनी लि. ने दक्षिण-पश्चिमी मानसून के दौरान वर्ष 2004 में इसका मसौदा तैयार किया। इसमें किसानों की विभिन्न ज़रूरतों के आधार पर विकल्प दिए गए। इसमें जून से सितंबर तक कुल वर्षा के आधार पर मौसमी वर्षा बीमा एवं जून से सितंबर तक के बीच वर्षा की मात्रा के अनुसार वर्षा वितरण बीमा की व्यवस्था की गई। यह वर्ष 2005 में 130 जिलों में लागू की गई। इसे आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, उत्तराखंड, उत्तर प्रदेश, छत्तीसगढ़, गुजरात, कर्नाटक, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, ओडिशा में लागू किया गया। वर्षा बीमा का लाभ भी किसान प्राप्त कर सकते हैं, बशर्ते अनावृष्टि की स्थिति में उनकी फ़सल को नुक़सान होने की आशंका हो और वह प्रीमियम देने की क्षमता रखता हो। वर्षा बीमा सभी सहकारी बैंकों, वाणिज्यिक बैंकों, ग्रामीण बैकों की शाखाओं से प्राप्त किया जा सकता है। वर्षा बीमा का कवरेज़ एनएआईएस की तरह ही ग्रामीण विकास वित्त संसाधनों, सहकारी संस्थाओं से किया जाता है। इसे खरीफ फ़सल के दौरान 30 जून तक खरीदा जा सकता है।

आम की फ़सल का बीमा

भारत में आम प्रमुख फ़सल माना गया है। कई बार मौसम की बेरुखी के कारण किसान को काफ़ी नुक़सान का सामना करना पड़ता है। ऐसे में यह योजना आम की फ़सल लेने वाले किसानों के लिए काफी फायदेमंद है।

इस योजना का संचालन खासतौर से उत्तर प्रदेश, आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र में हो रहा है। यह बीमा योजना आम में बौर आने से लेकर फल तोड़ाई तक पाला, वर्षा, तूफान आदि की स्थिति में फ़सल के ख़राब होने पर क्षतिपूर्ति प्रदान करती है। इसमें अधिकतम दायित्व एक हज़ार रुपया प्रतिवृक्ष है। दावे का निस्तारण चार सप्ताह में हो जाता है। यह योजना भी भारतीय कृषि बीमा कंपनी की ओर से संचालित की जा रही है। दावे का निबटारा मौसम का आकलन करने वाले एजेंसियों एवं सरकारी उपक्रमों की ओर से दी जाने वाली रिपोर्ट पर आधारित होता है।

सेब बीमा योजना

भारत में जम्मू-कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, उत्तरांचल के विभिन्न जिलों में सेब की खेती होती है, लेकिन यहां का मौसम आए दिन परिवर्तित होता रहता है। इससे किसानों को काफ़ी नुक़सान उठाना पड़ता है। तापमान में अस्थिरता, ओलावृष्टि, अधिक तापमान आदि की स्थिति में यह योजना किसानों को बचाती है। यह योजना पूरी तरह से मौसम सूचकांक पर आधारित है। यह योजना भारतीय कृषि बीमा कंपनी लिमिटेड एवं उत्तरांचल राज्य सरकार के सहयोग से संचालित की जा रही है। इस योजना में पुष्पन के दौरान तापमान की स्थिति से लेकर फ़सल पकने तक की स्थिति के आधार पर आकलन किया जाता है। इसी आकलन के आधार पर किसानों को राहत प्रदान की जाती है। इस योजना में कुल बीमा राशि 5 से 14 वर्ष आयु समूह के लिए पांच सौ रुपया प्रति पेड़ एवं 15 से 50 वर्ष के आयु समूह के लिए सौ रुपया प्रति पेड़ होती है।

आलू बीमा योजना

यह योजना देश के विभिन्न हिस्से में आलू उगाने वाले किसानों के लिए तैयार की गई है। यह रोपण के एक हफ्ते के बाद से फ़सल खुदाई के सात दिनों तक निवेश मूल्य कवर पर आधारित है। इस योजना में पौधों के सूखने, तूफान, पाला, ओलावृष्टि आदि के कारण फ़सल के खराब होने की स्थिति में दावा किया जा सकता है। एग्रीकल्चर इंश्योरेंस कंपनी ऑफ इंडिया एवं राज्य सरकारों के सहयोग से चल रही इस योजना से किसानों को काफी लाभ मिला है। किसी तरह का नुक़सान होने की स्थिति में बीमित व्यक्ति 48 घंटे के अंदर संबंधित बैंक को सूचना देता है। फिर 15 दिनों के अंदर नुक़सान से संबंधित लिखित जानकारी देनी होगी। इसके तहत अधिकतम जवाबदेही 25 हज़ार रुपये प्रति एकड़ निर्धारित की गई है।

अफीम फ़सल बीमा योजना

यह योजना सिर्फ़ केंद्रीय नारकोटिक्स ब्यूरो की ओर से दिए जाने वाले लाइसेंस के तहत होने वाली अफीम की खेती पर लागू होती है। जो किसान लाइसेंस लेकर यह खेती कर रहे हैं, यह योजना उन्हें चक्रवात, बाढ़, तूफान अथवा कीट के प्रकोप से होने वाले नुक़सान की स्थिति में राहत प्रदान करती है। बीमा राशि का निर्धारण बीमाकृत अफीम की फ़सल की खेती की लागत के आधार पर किया जाता है। बीमा बुवाई से फ़सल काटने की प्रथम प्रक्रिया प्रारंभ करने की तिथि तक संचालित होती है। किसी भी तरह का नुक़सान होने की स्थिति में बीमित व्यक्ति को भारतीय कृषि बीमा कंपनी को सूचना देनी होती है और फिर दावे से संबंधित दस्तावेज पेश करने होते हैं। दावे के दौरान केंद्रीय नारकोटिक्स विभाग की भी रिपोर्ट पेश करनी होती है।

इसी तरह ही देश में पेड़ बीमा योजना, गुद्देदार वृक्ष बीमा योजना, नारियल बीमा योजना एवं रबड़ वृक्ष बीमा का भी संचालन किया जा रहा है।

किसान कॉल सेंटर

कृषि मंत्रालय की ओर से शुरू की गई इस योजना से किसानों को विभिन्न तरह की तकनीकी जानकारी आसानी से मिल जाती है। इसकी शुरुआत वर्ष 2004 में की गई। देश के किसी भी हिस्से में रह रहा किसान 1551 पर डायल करके अपनी समस्या का समाधान प्राप्त कर सकता है। किसान को किस फ़सल में कितनी खाद देनी है अथवा कौन-सी प्रजाति समय के अनुकूल है। सहित कृषि संबंधी हर तरह की जानकारी किसान कॉल सेंटर से प्राप्त की जा सकती है। इसकी सबसे बड़ी खासियत यह है कि किसान अपनी क्षेत्रीय भाषा में इसकी जानकारी प्राप्त कर सकता है। इससे किसानों के बीच किसी तरह की संचार की समस्या नहीं रह जाती है।

भारतीय कृषि बीमा कंपनी लिमिटेड

भारत सरकार ने विभिन्न फ़सलों की बीमा के लिए एक संयुक्त कार्यक्रम बनाया है। राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना को लागू करने के लिए ही भारतीय कृषि बीमा कंपनी लिमिटेड नामक विशिष्ट संगठन तैयार किया गया। यह कंपनी कृषि एवं अन्य बीमा योजनाओं को भी लागू करने का कार्य कर रही है। इसमें निम्नलिखित बैकों की हिस्सेदारी शामिल की गई है :

विभिन्न बैंकों की ओर से चलाई जा रही प्रमुख योजनाएं

- **इलाहाबाद बैंक :** किसान क्रेडिट कार्ड के अलावा किसान शक्ति योजना। किसान शक्ति

योजना में किसान अपनी पसंद के कार्य में ऋण का उपयोग कर सकता है। इसमें किसी तरह की मार्जिन मनी की ज़रूरत नहीं होती। निजी कार्य के लिए 50 फीसदी तक के ऋण का उपयोग किया जा सकता है।

क्र. सं.	कंपनियां	हिस्सेदारी
1.	भारतीय साधारण बीमा निगम	35 फीसदी
2.	राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक	30 फीसदी
3.	नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड	8.75 फीसदी
4.	दि न्यू इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड	8.75 फीसदी
5.	दि ओरिएंटल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड	8.75 फीसदी
6.	यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड	8.75 फीसदी

- **आंध्र बैंक :** आंध्र बैंक किसान ग्रीन कार्ड, एवं निजी दुर्घटना बीमा योजना।
- **बैंक आफ बड़ौदा:** शुष्क मिट्टी कृषि के लिए पुराना ट्रैक्टर खरीद योजना, कृषि औज़ार खरीद योजना, डेयरी विकास योजना, सूअर पालन, मुर्गी पालन, रेशमकीट पालन आदि में कार्यरत यूनिटों के लिए कार्यगत पूंजी। कृषि औजारों, बैलों की जोड़ी, सिंचाई सुविधाओं के लिए अनुसूचित जाति-जनजाति को विशेष वित्तीय सहायता योजना।
- **बैंक ऑफ इंडिया :** साझेदारी, काश्तकारी किसानों के लिए स्टार भूमिहीन किसान कार्ड। फ़सल उत्पादन एवं अन्य संबंधित निवेश के लिए किसान क्रेडिट कार्ड। किसानों के लिए कहीं भी किसी भी समय बैंकिंग के लिए इलेक्ट्रॉनिक कार्ड, जिसे बैंक ऑफ इंडिया शताब्दी कृषि विकास कार्ड कहा जाता है। इसी तरह संकर बीज उत्पादन, कपास उद्योग, गन्ना उद्योग आदि के लिए ठेका खेती करने वालों को अनुदान। महिलाओं एवं स्वयं सहायता समूह के लिए विशेष योजना के तहत सहायता। किसानों को प्रशिक्षित करने के लिए स्टार स्वरोजगार प्रशिक्षण संस्थान।
- **देना बैंक :** देना किसान गोल्ड क्रेडिट कार्ड। कृषि औजार, ट्रैक्टरों, फौव्वारा (स्प्रिंकलर), ऑयल इंजन, इलेक्ट्रॉनिक पंपसेट आदि की खरीद पर विशेष ऋण। एग्री क्लीनिक और कृषि व्यापार के लिए पांच लाख का सहयोग।
- **इंडियन बैंक :** किसान क्रेडिट कार्ड, फ़सल ऋण, कृषि विकास के लिए समूह ऋण। ठेका कृषि, जैविक कृषि, ग्रामीण भंडारण, कोल्ड स्टोरेड, औषधीय एवं सुगंधित खेती के लिए अतिरिक्त ऋण।
- **ओरिएंटल बैंक ऑफ कॉमर्स :** ओरिएंटल ग्रामी कार्ड, कंपोजिट क्रेडिट योजना, गोदाम स्थापना, वित्त पोषण कमीशन एजेंट।
- **पंजाब नेशनल बैंक :** किसान संपूर्ण ऋण योजना, किसान इच्छापूर्ति योजना, स्वप्रेरित संयुक्त कृषक योजना, नव नर्सरी विकास योजना, बंजरभूमि विकास योजना, मशरूम, झींगापालन, कुकुरमुत्ता उत्पादन योजना। डेयरी विकास कार्ड स्कीम। मछली, सुअर पालन, मधुमक्खी पालन योजना।
- **स्टेट बैंक ऑफ हैदराबाद :** फ़सल ऋण एवं कृषि गोल्ड ऋण योजना, कृषि उत्पादन का विपणन योजना, निजी गोदाम योजना, लघु सिंचाई योजना। भूमिक विकास योजना, ट्रैक्टर पावर टिलर एवं औजार खरीद योजना, कृषि भूमि, परती, बंजर भूमि खरीद योजना, किसानों के लिए वाहन ऋण योजना, ड्रिप सिंचाई योजना, एग्री बिजनेस एवं कृषि व्यापार केंद्र योजना, युवा कृषि प्लस योजना।
- **स्टेट बैंक ऑफ इंडिया :** फ़सल ऋण योजना, किसान क्रेडिट कार्ड, भूमि विकास योजना, लघु सिंचाई योजना, फ़सल कटाई मशीन खरीद योजना, किसान गोल्ड कार्ड योजना, कृषि प्लस योजना, अर्थियाज प्लस योजना, ब्रायलर प्लस योजना, अग्रणी बैंक योजना।
- **सिंडीकेट बैंक :** किसान क्रेडिट कार्ड, सोलर वाटर हीटर योजना, एग्री क्लीनिक एवं कृषि व्यापार केंद्र। ❑

(लेखिका स्वतंत्र पत्रकार हैं।
ई-मेल: sangeetayadav.shivam@gmail.com)

(पृष्ठ 54 का शेषांश)

तथा कृषि उत्पाद विपणन कानून में कुछ ज़रूरी बदलाव किए गए हैं जिसके तहत 15 राज्यों तथा 5 केंद्रशासित प्रदेशों ने अपने एपीएमसी एक्ट में बदलाव किए हैं, ताकि बाज़ार में विपणन कार्य के सुधार के फ़ायदे किसानों तक पहुंच सकें। अब इसका अनुबंधित खेती की प्रक्रिया पर कितना असर होगा यह तो आने वाला समय ही बताएगा।

भविष्य के रूप में अनुबंध खेती

तमाम कठिनाइयों के बावजूद, देश में अनुबंधित खेती का दायरा बढ़ रहा है। इसके कुछ तो लाभ हैं ही, तभी तो किसान इसमें रुचि ले रहे हैं। किसान वैसे ज़मीनी हक़ीक़त से रू-ब-रू हैं, वे व्यवहारिक अर्थशास्त्री भी हैं, तभी तो उसी कृषि कारोबार को अपनाते हैं जिसमें उन्हें वांछित लाभ मिलता है। अनुबंध खेती में अब उन्हें स्थिर तथा बेहतर आमदनी हासिल करने की झलक दिख रही है जो उनकी मौजूदा माली हालत को सुधार सकती है। इसमें खरीदार कंपनियों को भी देश में ही नहीं, बल्कि विश्व मंडी में बेहतर व्यवसाय तथा अच्छे मुनाफ़े के अवसर दिख रहे हैं। अनुबंधित कृषि की वज़ह से स्थानीय स्तर पर छोटी-छोटी प्रसंस्करण इकाइयों के लगने से ग्रामीण महिलाओं एवं ग्रामीण क्षेत्रों के बेरोज़गार युवाओं को भी रोज़गार के अवसर दिख रहे हैं। कठिनाइयों की तुलना में यदि इसके सकारात्मक पहलुओं की ओर ध्यान दें तो बराबर की भागीदारी वाली, सामाजिक रूप से टिकाऊ यह नयी कृषि पद्धति मौजूदा कृषि उत्पादन के विकास में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। पूर्व निर्धारित एवं लाभकारी मूल्य पर अनुबंधित खेती करने वाले किसान उस हताशा से भी बच सकते हैं जिसमें कभी-कभी न्यूनतम समर्थन मूल्य जारी करने में देरी होती है। यदि यह सब संभव हुआ तो समान भागीदारी, सर्वमान्य आचार-संहिता पर आधारित अनुबंधित खेती देश के किसानों के लिए अभिशाप नहीं, वरदान ही साबित होगी। ❑

(लेखक कृषि विज्ञान संस्थान, काशी हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी के प्राध्यापक एवं संकायाध्यक्ष रह चुके हैं)

स्थानीय पत्रकारिता का अनूठा संसार

● सुभाष सेतिया

हम इस समय सूचना प्रौद्योगिकी की अभूतपूर्व क्रांति के दौर से गुज़र रहे हैं। जनसंचार के परंपरागत माध्यमों को पीछे छोड़ती हुई यह क्रांति संचार की नित नयी विधियां व तकनीकें हमारे सामने परोस रही है। पहले कोई भी नयी तकनीक बरसों तक चला करती थी किंतु अब तो महीने और सप्ताहभर के अंतराल में ही प्रौद्योगिकी नया रूप लेकर हमारे सामने प्रकट हो जाती है। कंप्यूटर, इंटरनेट, मोबाइल, ई-पॉड और न जाने और भी कितने साधनों से पल-पल घटती घटनाओं की सूचनाएं और ख़बरें इधर से उधर पहुंच रही हैं। हमारे देश में इन साधनों से जुड़ने वाले लोगों की संख्या में लगातार वृद्धि हो रही है। इंटरनेट और मोबाइल गांवों तथा दूर-दराज़ के इलाक़ों में पहुंच गए हैं। अब तो ग्रामीण इलाक़ों में बैंकिंग का कामकाज भी मोबाइल के ज़रिये करने की योजना लागू की जा रही है।

संचार के नवीनतम साधनों के विकास और विस्तार के बावजूद देश की बहुत बड़ी आबादी अशिक्षा, ग़रीबी, बिजली की कमी तथा अन्य अनेक कारणों से इन नयी तकनीकों के लाभ से वंचित है। लेकिन ऐसे उत्साही लोगों की कमी नहीं है जो परंपरागत माध्यमों के सहारे ही वैचारिक एवं भावात्मक संवाद कायम करने का सपना पूरा कर रहे हैं। यह कार्य मुद्रित पत्र-पत्रिकाओं और इलेक्ट्रॉनिक यानी रेडियो व टेलीविजन के माध्यम से हो रहा है। इन माध्यमों का उपयोग करने वाले उत्साही एवं कल्पनाशील लोग संसाधनों एवं सुविधाओं की कमी को अंगूठा दिखाते हुए सूचनाओं के प्रसार तथा जन जागरण के अपने अभियान में सफलता प्राप्त कर रहे हैं।

सबसे पहले बात करते हैं उत्तरप्रदेश के अति पिछड़े क्षेत्र बुंदेलखंड में ग्रामीण महिलाओं द्वारा पिछले 8 साल से निकाले जा रहे पत्र *ख़बर लहरिया* की। यह साप्ताहिक पत्र दिल्ली की एक स्वयंसेवी संस्था की मदद से चित्रकूट ज़िले के दलित एवं अल्पसंख्यक वर्गों की कुछ निर्धन और अल्पशिक्षित ग्रामीण महिलाओं के प्रयासों से 2002 में निकलना शुरू हुआ। ये महिलाएं अख़बार के लिए रिपोर्टिंग, संपादन, प्रूफ रीडिंग और छपाई के साथ-साथ आस-पास के गांवों में इसकी प्रतियां बांटने का दायित्व भी निभाती हैं। 2006 में इसका प्रकाशन पड़ोस के जिले बांदा से भी होने लगा। बुंदेली बोली में छपने वाले *खबर लहरिया* की चर्चा संयुक्त राष्ट्र तक में हो चुकी है। पत्र का उद्देश्य महिलाओं में अपने अधिकारों के प्रति जागरुकता लाना और उन्हें आत्मनिर्भर बनाने के लिए प्रेरित करना है। पत्र को चलाने वाली महिलाओं की प्रतिबद्धता और लगन का अंदाज़ा इसी बात से लग जाता है कि अपना घर-बार संभालने के साथ-साथ वे अख़बार का काम भी संभालती हैं। अख़बार की 5,000 प्रतियां छपती हैं और यह 25,000 से अधिक पाठकों द्वारा पढ़ा जाता है। महिलाओं के स्वयंसेवी प्रयास का यह अनूठा उदाहरण है।

कुछ इसी तरह का प्रयास झारखंड में दुमका के गौरीशंकर रजक ने कर दिखाया है। रजक का *दीन-दलित* नाम का अख़बार भी साप्ताहिक है लेकिन इस मायने में यह भिन्न है कि इसे छपवाने के बजाय हाथ से लिखा जाता है और फिर इसकी फोटोप्रतियां कराके उन्हें बेच दिया जाता है। जो प्रतियां बच जाती हैं, वे शहर के विभिन्न हिस्सों में चिपका दी जाती हैं। धोबी का व्यवसाय करने वाले रजक भले ही ज़्यादा पढ़े-लिखे नहीं हैं लेकिन पिछले 21 सालों से बिना किसी से आर्थिक मदद लिए इसे निकाल रहे हैं। अख़बार बाकायदा पंजीयक, समाचारपत्र के कार्यालय में पंजीकृत है। हालांकि इसकी प्रक्रिया को पूरा करने के लिए रजक को काफी पापड़ बेलने पड़े। चार पृष्ठों के इस साप्ताहिक पत्र के लिए ख़बरें एकत्र करने से लेकर, लिखने, फोटोकॉपी करने और बेचने व चिपकाने तक का सारा काम वे अकेले करते हैं। *दीन दलित* का पहला अंक अक्तूबर 1986 में निकला था। अख़बार में मुख्यतया स्थानीय ख़बरें छपती हैं जिनमें प्रशासन, व्यापार तथा अन्य क्षेत्रों में फैले भ्रष्टाचार का भी भंडाफोड़ किया जाता है।

हरियाणा में एक ऐसे वर्ग ने भी अपने समुदाय की समस्याओं को समाज के सामने लाने के लिए पत्रकारिता का आश्रय लिया है, जिससे समाज दूरी बनाए रखना चाहता है। वेश्यावृति के लिए बदनाम कमाठीपुरा की महिलाओं ने *लालबत्ती दस्तावेज़* नाम का पत्र निकालने का साहस किया है। गैर-सरकारी संगठन 'अपने आप' के सहयोग से निकलने वाले इस मासिक पत्र के लिए रिपोर्टिंग का काम वे महिलाएं करती हैं जो पहले इस पेशे से जुड़ी रही हैं। इसमें स्थानीय ख़बरों को ही स्थान दिया जाता है। इसमें इलाक़े की महिलाओं के स्वास्थ्य, मानवाधिकारों तथा व्यक्तिगत सुख-दुख से जुड़ी ख़बरों को प्राथमिकता दी जाती है।

स्थानीय पत्रकारिता का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष

ऐसे पत्र हैं जो बच्चों के लिए, बच्चों द्वारा ही निकाले जा रहे हैं। सौभाग्यवश हिंदी में ऐसे पत्रों की संख्या अत्यंत उत्साहजनक है। हम यहां कुछ ही पत्रों का संक्षिप्त परिचय दे रहे हैं। दिल्ली के वसुंधरा एन्कलेव के बच्चे *नन्ही कलम* नाम की हस्तलिखित पत्रिका निकालते हैं। पत्रिका में जिस लेखक की रचना शामिल की जाती है वो उसकी अपनी लिखावट में होती है। रचनाओं के संकलन के बाद पत्रिका की फोटोप्रतियां करा ली जाती हैं। पत्रिका की बाइंडिंग और उसे घरों में पहुंचाने का काम भी बच्चे खुद करते हैं।

दिल्ली के ही मदनगीर क्षेत्र की एक झुग्गी बस्ती के बच्चे चार पृष्ठों का अख़बार निकालते हैं। बच्चों को *उदयाचल* नाम के इस पत्र के संपादन तथा अन्य कार्यों का प्रशिक्षण गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति की ओर से दिया गया। अखबार के प्रकाशन से जुड़े सभी काम बच्चे ही संभालते हैं। गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति के निर्देशन में बच्चों की ओर से एक अखबार मणिपुरी भाषा में भी निकलता है। *नवाकोल* नाम के इस अख़बार में बच्चों की समस्याओं और अनुभवों को सामने लाया जाता है। *नवाकोल* का अर्थ है– बच्चों की आवाज़।

स्थानीय स्तर पर स्वयंसेवी प्रयासों से निकलने वाले ये पत्र हालांकि अपने-अपने ढंग से संबंधित वर्गों व समुदायों की सेवा कर रहे हैं लेकिन प्रिंट मीडिया की एक सीमा यह होती है कि केवल साक्षर या पढ़े-लिखे लोग ही इसका लाभ उठा सकते हैं। इस दृष्टि से रेडियो और टेलीविज़न अधिक प्रभावकारी माध्यम है क्योंकि इन्हें अनपढ़ लोग भी सुन व देख सकते हैं। इसलिए समाज के जागरूक लोग विशेषकर महिलाएं इन दोनों माध्यमों का भी इस्तेमाल करके जनचेतना का अपना उद्देश्य पूरा करने में जुटी हैं। सामुदायिक रेडियो के चलने के बाद रेडियो प्रसारण की लोकप्रियता व उपयोगिता में तेज़ी से बढ़ोतरी देखी जा रही है। दूर-दराज़ और ग्रामीण क्षेत्रों में साक्षरता, सामुदायिक सद्भाव और समाज के उपेक्षित वर्गों में अंधविश्वास दूर करने, नये-नये व्यवसायों की जानकारी देने जैसे पहलुओं की दृष्टि से सामुदायिक रेडियो महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। हाल में केंद्रीय मंत्रिमंडल ने देश में 400 नये सामुदायिक रेडियो केंद्र खोलने के प्रस्ताव को मंजूरी दी है।

इसी कड़ी में हरियाणा में गुड़गांव के ग्रामीण क्षेत्र में ग्रमीण लोगों द्वारा *गुड़गांव की आवाज़* नाम का सामुदायिक रेडियो केंद्र चलाया जा रहा है। 107.8 मेगाहर्ट्स पर प्रसारित होने वाले इस चैनल पर हिंदी और हरियाणवी बोली में कार्यक्रम सुने जा सकते हैं। 19 नवंबर, 2009 से शुरू हुए इस रेडियो स्टेशन से मनोरंजन और जनजागरण दोनों तरह के कार्यक्रम प्रसारित होते हैं जिनमें कैरियर से जुड़ी ताज़ा सूचनाएं, महिला सशक्तीकरण, स्वास्थ्य, संगीत, खेलकूद तथा स्थानीय मुद्दों से जुड़े कार्यक्रम प्रसारित किए जाते हैं। कार्यक्रमों की एंकरिंग, लेखन, संपादन आदि सभी दायित्व स्थानीय लोग संभालते हैं, जिसके लिए उन्होंने नियमित प्रशिक्षण प्राप्त किया। 24 घंटे चलने वाले इस चैनल की एक विशेषता यह है कि अन्य एफएम चैनलों के विपरीत मनोरंजन के लिए यहां से फिल्मी संगीत के बजाय लोक संगीत का प्रसारण किया जाता है। गांवों के लोग ही रिपोर्टर के रूप में अपने आस-पास घट रही घटनाओं की सूचना चैनल तक पहुंचाते हैं जिन्हें संपादन के बाद प्रसारित किया जाता है।

इससे लगभग एक महीना पहले 14 अक्तूबर को दक्षिणी राज्य आंध्र प्रदेश में दलित महिलाओं ने महिलाओं में जागृति लाने के लिए *संघम रेडियो* चैनल शुरू किया। हैदराबाद से 110 किलोमीटर दूर मचनूर गांव में इस ग्रामीण सामुदायिक रेडियो केंद्र का उद्घाटन उच्चतम न्यायालय के अवकाश प्राप्त न्यायाधीश जस्टिस पी.बी. सावंत ने किया। एक स्वयंसेवी संगठन, डक्कन डेवलपमेंट सोसायटी के सहयोग से चल रहे इस चैनल के कार्यक्रम केवल महिलाओं को संबोधित होते हैं। निर्धन परिवारों की महिलाएं ही इसके कार्यक्रम तैयार करने और उन्हें प्रसारित करने का काम संभालती हैं। *संघम रेडियो* से तेलुगु भाषा में प्रतिदिन डेढ़ घंटे का प्रसारण हो रहा है और जल्दी ही इसकी अवधि बढ़ा दी जाएगी।

रेडियो की तरह टेलीविज़न माध्यम का भी स्थानीय स्तर पर भरपूर इस्तेमाल हो रहा है। इसमें कोई शक नहीं कि टेलीविज़न सभी जनसंचार माध्यमों में सबसे अधिक प्रभावकारी है किंतु यह ख़र्चीला माध्यम है। इसके बावजूद कुछ ऐसे लोग हैं जो संसाधनों के अभाव की समस्या से घबराए बिना इस माध्यम से जनचेतना का अपना लक्ष्य पूरा कर रहे हैं। स्वयंसेवी आधार पर चलने वाले स्थानीय टीवी चैनलों की श्रेणी में बिहार के मुजफरपुर का चैनल *अप्पन समाचार* अपना विशेष स्थान रखता है। बुंदेलखंड से निकलने वाले अख़बार *खबर लहरिया* की भांति *अप्पन समाचार* भी महिलाओं द्वारा महिलाओं के लिए चल रहा है। ग्रामीण महिलाओं द्वारा चलाया जा रहा यह चैनल अद्भुत सामुदायिक प्रयास के साथ-साथ महिला सशक्तीकरण की दिशा में उठाया गया एक सराहनीय क़दम है। यह तथ्य अपनेआप में दिलचस्प और प्रेरक है कि *अप्पन समाचार* के कार्यक्रमों का निर्माण रामलीला माही गांव के एक कमरे की इमारत में किया जाता है। इस गांव में अभी तक केबल टीवी नहीं पहुंचा है और पिछले लगभग 4 वर्षों से यहां बिजली भी नहीं है। समाचारों का कार्यक्रम कभी प्रोजेक्टर तो कभी किराए पर लिए वीडियो प्लेयर या बड़े टेलीविज़न सेट पर दिखाया जाता है। बिजली के लिए जेनरेटर भी किराए पर लिया जाता है। *अप्पन समाचार* के कार्यक्रम का प्रसारण आमतौर पर शाम के समय जुटने वाली चौपालों या मेले-ठेले अथवा साप्ताहिक हाट-बाज़ार में किया जाता है। कार्यक्रम में महिला सशक्तीकरण, ग़रीबी से छुटकारा पाने के उपायों, कृषि, स्वास्थ्य और शिक्षा तथा अन्य स्थानीय समस्याओं से जुड़ी ख़बरें दिखाई जाती हैं। यह प्रसारण निःशुल्क होता है। स्थानीय महिलाएं ही एंकरिंग, फोटोग्राफी, रिपोर्टिंग व समाचार संपादन का दायित्व निभाती हैं। अपने अधक़चरे और खुरदरे स्वरूप के बावजूद 'अप्पन समाचार' चैनल मुजफ्फरपुर के गांवों में अन्य समाचार चैनलों से अधिक पसंद किया जाता है।

ज़ाहिर है कि पत्रकारिता के माध्यम से जन जागरण के प्रयासों का यह ब्योरा अधूरा है। और भी अनेक संस्थाएं व समूह अपने-अपने स्तर पर इसी तरह के सराहनीय प्रयास कर रहे होंगे जिनकी जानकारी अभी मुख्यधारा के जनसंचार माध्यमों तक नहीं पहुंच सकी है। किंतु इनका महत्व उन तथाकथित राष्ट्रीय व क्षेत्रीय चैनलों से कहीं अधिक है जो समाचारों के नाम पर सनसनी, क्रिकेट, सेक्स और जादू-टोने की ख़बरें परोस कर टीआरपी की राह पर सरपट दौड़े जा रहे हैं। इससे भी अधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि ये स्थानीय प्रयास आशा जगाते हैं कि देश में लोकतंत्र की जड़ें लगातार गहरी हो रही हैं। ❑

(लेखक आकाशवाणी के समाचार निदेशक रह चुके हैं।
ई-मेलः setia_subhash@yahoo.co.in)

स्वचालित सिंचाई प्रणाली

देवरिया, उत्तर प्रदेश के निवासी अब्दुल कलीम एक ऐसे नवाचारी युवक हैं जो निरंतर कुछ-न-कुछ नया करते ही रहते हैं। चौबीस वर्षीय अब्दुल कलीम ने अनेक नवाचारी उपकरणों का विकास किया है, जिनमें सबसे रोचक हैं– गमलों में पौधों को पानी देने वाली स्वचालित प्रणाली, शॉर्ट सर्किट अलार्म, चोरों की सूचना देने वाला जीएसएम आधारित अलार्म और ओवरहेड टंकी की निरीक्षण और नियमन प्रणाली। गोरखपुर से वर्ष 2007 में बीए पास करने के बाद वे इस समय गैर-पारंपरिक ऊर्जा विकास एजेंसी (एनईडीए) से जुड़े हुए हैं और पथ-प्रकाश नियंत्रक यंत्र से जुड़ी परियोजना पर काम कर रहे हैं। एनआईएफ के पांचवें अभियान के लिए जब उनकी प्रविष्टि प्राप्त हुई, वे छात्र के रूप में अध्ययनरत थे। उनका संबंध एक सुशिक्षित परिवार से है। पढ़ाई-लिखाई में तो वे औसत ही थे, पर विद्युत उपकरणों और इलेक्ट्रॉनिक्स में उनकी रुचि बचपन से ही थी। प्रयोग करने की अपनी आदत के कारण, कभी-कभी उन्हें चीज़ें बिगाड़ने के लिए सजा भी भुगतनी पड़ती थी। कई बार उन्हें समय नष्ट करने के लिए डांट भी पड़ी। हालांकि वे आमतौर पर बेकाम की कबाड़ सामग्री का इस्तेमाल करते थे, परंतु कभी-कभी बाज़ार से विभिन्न वस्तुओं को ख़रीदने के लिए उन्हें अपनी जेब ख़र्च के पैसे खरचने पड़ते थे। कभी-कभार, अतिरिक्त पैसा कमाने के लिए इधर-उधर के कुछ फालतू काम भी किया करते थे। उनकी बड़ी बहन, जीजा और उनके कक्षा शिक्षक तथा उनके एक मित्र ने हमेशा ही उनको प्रोत्साहित किया और कुछ बेहतर करने के लिए वे उनकी सहायता किया करते थे। उनके रचनात्मक क्रियाकलापों और उपलब्धियों को पिछले दो वर्षों में स्थानीय मीडिया में अच्छा कवरेज मिला है। अपने कार्य के माध्यम से विज्ञान और प्रौद्योगिकी के उन्नयन एवं संवर्धन के प्रयासों के लिए उत्तर प्रदेश सरकार ने उन्हें फरवरी 2009 में नव अन्वेषक सम्मान से नवाज़ा।

गमलों में पानी देने की स्वचालित प्रणाली

प्राय: देखने में आता है कि समय पर पानी नहीं दिए जाने के कारण हमारे बगीचे के फूल-पौधे सूखने लगते हैं। बागवानी अब्दुल का पुराना शौक था। पानी देने की समस्या पर ग़ौर करते हुए उन्होंने सेंसर नियंत्रित एक ऐसा यंत्र बनाया जो गमले में नमी की मात्रा के आधार पर मोटर को अपने आप ही चालू और बंद कर दिया करता है। यह यंत्र इस प्रकार तैयार किया गया है कि जब भी मिट्टी की नमी पूर्व निर्धारित मानक से कम हो जाती है, सेंसर सक्रिय हो उठता है और पानी के पंप को चालू कर देता है और जब मिट्टी को पर्याप्त पानी मिल जाता है, यानी नमी का स्तर पूर्व निर्धारित मानक पर पहुंच जाता है; सेंसर मोटर को बंद कर देता है। सेंसर बॉक्स पर लाल और हरे रंग

के दो एलईडी (प्रकाश छोड़ने वाले यंत्र) लगे हाते हैं। लाल रंग का एलईडी पानी की कमी के बारे में सूचित करता है, जबकि हरे रंग का एलईडी बताता है कि पानी की मात्रा पर्याप्त है।

इस यंत्र को तैयार करते समय अब्दुल कलीम को काफी वित्तीय समस्याओं का सामना करना पड़ा। उन्होंने कई नमूने बनाए और तोड़े। अंत में जो नमूना तैयार हुआ, उस पर ₹ 600 का ख़र्च आया। उन्होंने एनआईएफ के माध्यम से पेटेंट के लिए आवेदन किया है। (स्वचालित रूप से पौधों को पानी देने की अवधारणा का उल्लेख कला में उपलब्ध है, परंतु पूर्व की कला में इसके अनेक दृष्टिकोणों के बारे में बतलाया गया है। इस प्रकार के यंत्रों के अनेक अमरीकी पेटेंट हैं, परंतु सभी की यांत्रिकी अलग-अलग है) वह मोटर को हटाकर और उसके स्थान पर एक चुंबकीय प्रणाली का इस्तेमाल कर इस यंत्र को संशोधित करना चाहते हैं। वह अब भी इस अवधारणा पर काम कर रहे हैं। इस नमूने के विकास और कुछ अन्य अन्वेषणों के लिए एनआईएफ ने उनकी सहायता की थी।

शॉर्ट सर्किट अलार्म

अब्दुल प्राय: सोचा करते थे कि क्या वह बिजली का करंट लगने से होने वाली मौतों को रोकने के लिए कुछ कर सकते हैं?

उन्होंने अनुभव किया कि बिजली का करंट मुख्यत: शॉर्ट सर्किट के कारण ही लगता है। उन्होंने एक ऐसा यंत्र बनाने के बारे में विचार किया, जोकि बिजली के प्लग में कोई भी ग़लत यंत्र डालने अथवा आंतरिक शॉर्ट सर्किट की स्थिति में उपयोगकर्ता को सतर्क कर दिया करें। इस यंत्र में एक ट्रांसफार्मर, डायोड्स, कैपसिटर, एक अलार्म, एलईडी, एक स्विच और विद्युत धारा के बहिर्प्रवाह (आउटपुट) के लिए एक सॉकेट लगा होता है। पहले संस्करण में उन्होंने मिनिएचर सर्किट ब्रोकर (एमसीवी) का इस्तेमाल किया था, परंतु उससे लागत बढ़ जाती थी। अत: दूसरी डिज़ाइन तैयार करते समय उन्होंने एमसीवी का इस्तेमाल नहीं किया। पहले संस्करण में एक फायर अलार्म भी लगा हुआ था, जो दूसरे संस्करण में हटा दिया गया। चार सौ ग्राम वज़न वाला यह यंत्र बिजली के मुख्य बोर्ड के पास लगाया जाता है। उपकरण का प्लग निकालने से अलार्म अपने आप बज उठता है। यह तरकीब उन्हीं मामलों में काम करती है जब उपकरणों में 'अर्थ' का तार लगा होता है (यानी तीन पिन वाले उपकरणों में)। उन्हें यह यंत्र तैयार करने में 6 महीने लगे और क़रीब सात सौ रुपये का ख़र्च आया। उनका अनुमान है कि अब इस पर कुल तीन सौ रुपये की लागत ही आएगी।

चोर की सूचना देने वाला जीएसएम आधारित यंत्र (अलार्म) : गृहस्वामी के घर से बाहर रहने पर उसके घर में चोरी करने के इरादे से घुसे चोर की सूचना इस यंत्र से दी जाती है। इस यंत्र में मुख्य द्वार पर एक लीफ स्विच लगा होता है। जब भी दरवाज़े को जबरन खोला जाता है, एक रिले स्विच ऑन हो जाता है और सर्किट सक्रिय हो जाता है। तब सर्किट से संबद्ध जीएसएम प्रणाली पहले से ही सेट किए हुए मोबाइल फोन के नंबर को डायल कर देती है। डायलिंग की यह प्रक्रिया तब तक चलती रहती है, जब तक उसका स्विच ऑफ नहीं किया जाता या फोन उठाया नहीं जाता। इस प्रणाली को आवश्यकतानुसार चालू अथवा बंद किया जा सकता है। इसे घरों, कार्यालयों, दुकानों और यहां तक कि कारखानों में भी इस्तेमाल किया जा सकता है। इस यंत्र के निर्माण में अब्दुल ने कलपुर्जों को फिट करने के लिए कार्डबोर्ड का इस्तेमाल किया है। इसके निर्माण में उन्हें तीन महीने लगे और दो मोबाइल फोनों का बलिदान करना पड़ा। मोबाइल फोन की लागत के अतिरिक्त इस यंत्र के निर्माण पर 1,500 रुपये का ख़र्च आया।

उष्मक तंतु (हीटिंग फिलामेंट) वाला सेरामिक पात्र : अब्दुल ने 50 रुपये की लागत से चीनी मिट्टी के पात्र में एक हीटिंग फिलामेंट लगाया है जिसका उपयोग मच्छर मार क्वायल/टिकिया, नीम के सूखे पत्तों, हवन सामग्री और लोबान आदि को धीरे-धीरे जलाने के लिए किया जा सकता है। जलने के बाद बची हुई राख को बर्तन को पलटकर आसानी से निकाला जा सकता है। इस प्रकार पूरी प्रक्रिया स्वच्छ बनी रहती है।

स्वचालित जल पंप नियंत्रक : अब्दुल कलीम ने एक हज़ार रुपये की लागत से घरों और अन्य इमारतों की छत पर रखी टंकियों में पानी भरने के काम आने वाला एक जल पंप भी बनाया है। यह यंत्र स्वत: ही चल सकता है और टंकी भरने के बाद बंद हो सकता है। परंतु इस प्रकार के यंत्र पहले से ही बाज़ार में उपलब्ध हैं।

स्वचालित बाढ़ सूचक यंत्र : अब्दुल ने बाढ़ से सतर्क करने वाले यंत्र का आदर्श तैयार किया है। यह देखते हुए कि अचानक आने वाली तूफानी बाढ़ से जन-धन और पशुधन की भारी हानि होती है, उन्होंने यह यंत्र बनाने की सोची। इस नमूने में एक जीएसएम आधारित पारेषण (ट्रांसमिटिंग) टावर नदी में लगा होगा जिसमें विभिन्न ऊंचाइयों पर सेंसर लगे होंगे। इस यंत्र के पूरक के तौर पर पड़ोस के गांवों में रिसीविंग टावर लगे होंगे। जब भी नदी में पानी का स्तर बढ़ने लगेगा, विभिन्न ऊंचाइयों पर लगे सेंसर काम करने लगेंगे और विभिन्न गांवों में लगे रिसीविंग टावर को संकेत देना शुरू कर देंगे। रिसीविंग टावर द्वारा बढ़ते पानी के स्तर के बारे में प्रकाश अथवा अलार्म के ज़रिये सूचित किया जा सकेगा। अब्दुल ने इस काम के लिए तीन प्रकार के प्रकाश का उपयोग किया है। ❑

तकनीक से तरक़्क़ी
किसान ने बदली गांव की तकदीर

● हरि विश्नोई

कुदरती मिठास के महाभंडार गन्ने की खेती किसानों की खुशहाली व हमारे देश के विशाल चीनी उद्योग का मुख्य आधार है। औद्योगिक प्रगति के माध्यम से समृद्धि की यह मिठास हमारे जनजीवन में और अधिक गहराई तक उतर सके, इस मकसद से सरकार गन्ने की उन्नत खेती को प्रोत्साहित कर रही है। कृषकों के सक्रिय सहयोग के कारण पश्चिमी उत्तर प्रदेश के जिले गन्ने की भरपूर पैदावार करने की स्थिति में आ गए हैं। इसमें शोधरत कृषि वैज्ञानिकों एवं गन्ना विकास विभाग के कर्मचारियों के साथ-साथ प्रगतिशील किसानों का योगदान भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। वस्तुत: जहां चाह होती है वहां राह स्वयं निकल आती है, क्योंकि कर्मवीरों के लिए कुछ भी असंभव नहीं होता है। वे बाधाओं के पर्वत को चीरकर नया रास्ता बनाते हैं। वे उस पर न केवल खुद चलते हैं, अपितु दूसरों को भी उस राह पर आगे बढ़ाकर मंज़िल तक पहुंचाते हैं।

ग्राम लावड़, मेरठ में दो आंख की पोटी वाले उन्नत गन्ना प्रजाति का स्वस्थ ताजा बीज का निरीक्षण करते हुए कृषक एवं अधिकारीगण

मेरठ जिले के लावड़ गांव के किसान इरशाद अहमद ने अपनी चाहत के बल पर न केवल अपनी तक़दीर बल्कि पूरे इलाक़े की तस्वीर बदल डाली। दूर-दूर से किसान उनके खेत देखने व उनसे खेती से फायदे के गुर सीखने आते हैं, क्योंकि अहमद चलता-फिरता स्कूल बन गए हैं। आसपास के लोग उन्हें व्यक्ति नहीं विचार कहते हैं। अपनी उपलब्धियों पर उन्हें तनिक भी घमंड नहीं है। आज उनके पास ट्रैक्टर व अन्य कई वाहन हैं। बच्चे उच्च शिक्षा प्राप्त कर चुके हैं। फिर भी वह बेहद सहज व सरल हैं।

कहते हैं कि अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ता, लेकिन यह भी सच है कि एक अकेला दीपक अपने आसपास का अंधेरा दूर कर देता है। साथ ही अपने जैसे दूसरे अनेक दीपकों की लौ को भी प्रज्ज्वलित कर देता है। इरशाद अहमद ने भी यही किया। उन्होंने कृषि की उन्नत तक़नीक अपनाकर पेड़ी गन्ने से सर्वाधिक 1,600 क्विंटल प्रति हेक्टेयर की रिकार्ड पैदावार लेने में क़ामयाबी हासिल की और यह साबित करके दिखा दिया कि कुछ भी मुश्किल नहीं है। उत्तर प्रदेश के गन्ना विकास विभाग ने उन्हें प्रोत्साहित भी किया। अपनी मेहनत व सूझबूझ से उन्होंने वर्ष 2009 की राज्य गन्ना प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार जीता। इसके लिए उन्हें 23 दिसंबर, 2009 को सरदार बल्लभभाई कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मोदीपुरम, मेरठ में आयोजित एक समारोह में उन्हें प्रशस्ति-पत्र, स्मृतिचिह्न एवं दस हज़ार रुपये का चेक देकर सार्वजनिक रूप से सम्मानित किया गया।

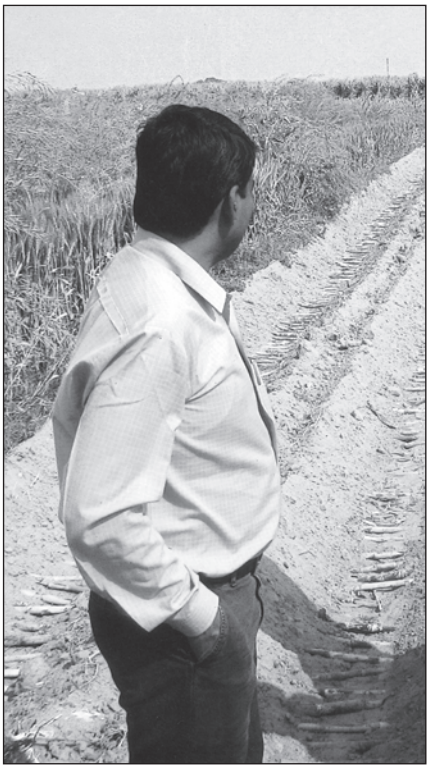

इरशाद अहमद ने वैज्ञानिक ढंग से गन्ने की खेती करके मिसाल पेश की है जो दूसरों को रास्ता दिखाने के लिए मशाल बन गई है। उनकी सफलता दूसरों के लिए प्रेरणा का स्रोत सिद्ध हो रही है। उपज बढ़ाने के लिए उन्होंने योजना बनाकर काम किया। अपने खेत की मिट्टी की जांच कराई। उसके बाद प्राप्त रिपोर्ट के आधार पर ज़मीन में जिन तत्वों की कमी थी माइक्रोन्यूट्रिएंट मिश्रण डालकर उस कमी को पूरा किया। इसके बाद रासायनिक उर्वरकों के साथ पर्याप्त मात्रा में जैविक खादों का भी प्रयोग किया। उपयुक्त समय पर बुवाई की। परिणामस्वरूप उन्हें दुगनी से भी ज्यादा गन्ने की फ़सल प्राप्त हुई।

इरशाद अहमद का कहना है कि ''आज सिर्फ़ अकेले की नहीं बल्कि सामूहिक तरक़्क़ी ज़रूरी है। इसके लिए नया नज़रिया एवं दूसरों के अंदर भी बेहतरी की ओर बढ़ने का ज़ज्बा होना चाहिए।''

वह कहते हैं कि ''खेती के पुराने ढर्रे की जगह मैंने नये व बेहतर तरीक़े सीखे, उन्हें अपनाया और अपने आसपास जो मिले उन्हें भी बताया व सिखाया। ताकि दूसरी हरित क्रांति शीघ्र हो और हमारा देश खुशहाल हो सके तथा किसानों के कष्ट कम हों। नये काम को बेहतर तरीक़े से करने के लिए सबसे पहले उसकी सही व पूरी जानकारी ज़रूरी है। अत: मैं प्रशिक्षण लेने का कोई मौका नहीं चूकता, क्योंकि मेरा मानना है कि जो जितना ज्यादा जानकार है वह उतना ही आगे है।"

इरशाद अहमद की इस सोच को सलाम। उनके ख़्यालात सचमुच क़ाबिले-तारीफ़ हैं। आज हमारे समाज व देश को ऐसे ही लोगों की ज़रूरत है, क्योंकि सरकार तो सिर्फ़ मदद कर सकती है, रास्ता दिखा सकती है। अपने उत्थान के लिए पहल तो किसानों को स्वयं ही करनी होगी। अत: इरशाद अहमद जैसे किसानों की हौसला अफ़जाई ज़रूरी है।

इरशाद ने नयी तकनीक ट्रैंच विधि को अपनाया है। इस तरीक़े से गन्ना बोने में 3 आंख के टुकड़े लंबाई में डालने की जगह 2 आंख के टुकड़े नालियों में चौड़ाई में अगल-बगल डाले जाते हैं। गन्ना शोध वैज्ञानिकों के मुताबिक़ ट्रैंच विधि से बुवाई करने में गन्ने की पैदावार में 40 फीसदी तक की बढ़ोतरी होती है। साथ ही इरशाद अहमद ने गन्ने की 2 नालियों के बीच में बची हुई 90 सेमी. की खाली जगह में गेंदे के फूलों की खेती शुरू की है। गेंदे की खुशबू से एक तो गन्ने की फ़सल में कीड़े लगने का ख़तरा घटेगा साथ में फूलों की बिक्री से आमदनी भी बढ़ेगी। उन्हें देखकर दूसरे किसान भी प्रेरणा लेने लगे हैं। इससे निश्चय ही खेतों में हरियाली व गांवों में खुशहाली तेज़ी से बढ़ेगी। ❑

(लेखक मेरठ उ.प्र. में क्षेत्रीय प्रचार अधिकारी कार्यालय उप गन्ना आयुक्त के पद पर हैं)

(पृष्ठ 58 का शेषांश)

निराकरण की रणनीति बनाई है। जैव सुरक्षा संबंधी सभी मुद्दे पर्यावरणात्मक सुरक्षा आदि पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986 में प्रावधानों के तहत कठोर नियामक व्यवस्था के अधीन हैं। जीएम फ़सलें 25 देशों में पहले से ही पैदा की जा रही हैं। आईएसएएए 2008 के मुताबिक इनमें 15 विकसित और 10 औद्योगिक देश शामिल हैं।

● ***जीएम खाद्य उत्पाद/फ़सलों पर कौन-सी अंतरराष्ट्रीय नियामक प्रणालियां लागू हैं?***

वर्तमान समय में कोई निश्चित नियामक प्रणालियां लागू नहीं हैं। इसके बावजूद जीएमओ (जेनेटिकली मोडीफाइड आर्गेनिज्म) के विभिन्न अंतरराष्ट्रीय संगठन प्रोटोकॉल विकसित करने में लगे हैं।

कोडेक्स एलीमेंटैरियस कमीशन (कोडेक्स) एफएओ/डब्ल्यूएचओ का संयुक्त निकाय है जो इसके मानक तैयार करने के लिए जिम्मेदार है। इनमें प्रक्रिया मानक और दिशानिर्देश भी शामिल हैं। इसके साथ ही यह अंतरराष्ट्रीय खाद्य कोड कोडेक्स एलीमेंटैरियस से संबंधित सिफ़ारिशें करती है। राष्ट्रीय कानून पर कोडेक्स सिद्धांत बाध्यकारी नहीं है। लेकिन यह विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यूटीओ) के खासतौर पर स्वच्छता एवं पादप स्वच्छता समझौते (एसपीएस एग्रीमेंट) से संबंधित है। व्यापार विवाद पैदा होने पर इसे संदर्भ के तौर पर प्रयोग किया जा सकता है। ये सिद्धांत ऐसे हर मामले का अलग-अलग बाज़ार पूर्व आकलन करने की प्रक्रिया सुनिश्चित करते हैं। इसमें दोनों प्रकारों के प्रभावों का आकलन किया जाता है– पहला प्रत्यक्ष प्रभाव (इसमें जोड़े या शामिल किए गए जीन का प्रभाव शामिल किया गया है) और दूसरा अप्रत्याशित प्रभाव (इसमें नये जीन के जोड़े जाने कें परिणामस्वरूप कोई नया प्रभाव सामने आ सकता है)।

पर्यावरण संधि जैव सुरक्षा पर कार्टाजीना प्रोटोकॉल (सीपीबी) कानूनी तौर पर सभी सदस्यों पर बाध्यकारी है। यह प्रोटोकॉल विभिन्न देशों के बीच जीवित संशोधित उत्पत्ति विषयक पदार्थ (एलएमओ) का नियमन करता है। उसका उद्देश्य इसके ज़रिये किसी भी देश की जैव विविधता को संभावित ज़ोखिमों से संरक्षित करना है। इस प्रोटोकॉल के दायरे में जीएम खाद्य उत्पाद तभी आएंगे जब उनमें एलएमओ शामिल होंगे क्योंकि उत्पत्ति पदार्थ कहीं पर भी प्रत्यारोपित करने के लिए उपयुक्त होते हैं। सीपीबी का अहम पहलू यह ज़रूरत है कि निर्यातक एलएमओ की पहली शिपमेंट से पहले आयातकों से सहमति मांगते हैं। यह सहमति सीपीबी के तहत हरी झंडी के रूप में होती है जो पर्यावरण संरक्षण से संबंधित है। भारत ने भी इस प्रोटोकॉल का अनुमोदन किया है। ❑

सांस्कृतिक राष्ट्रीयता के जनक

स्वामी विवेकानंद

● सरोज कुमार वर्मा

उन्तालीस साल की उम्र बड़ी नहीं होती। मगर, इतनी ही आयु मिली थी स्वामी विवेकानंद को। अल्पायु में संसार को छोड़ जाने वाले इस सन्यासी ने भारतीय धर्म और संस्कृति को इतना दिया है कि सदियों-सदियों तक उन्हें भुलाया नहीं जा सकता। उनके गुरु स्वामी रामकृष्ण परमहंस ने अपनी मृत्यु से कुछ समय पूर्व उसने यह कहा कि "ओ नरेन! आज मैंने अपना सब कुछ तुम्हें दे दिया है और मैं भिखारी हो गया हूं। इस शक्ति को लेकर तुम महान कार्य करोगे और उसके पश्चात ही तुम वापस जाओगे, जहां से तुम आए हो।" विवेकानंद को जो उत्तरदायित्व उनके गुरु ने सौंपा था उसे उन्होंने बखूबी निभाया। तभी तो स्वामी विवेकानंद ने लिखा है कि "शिष्य की आवाज़ द्वारा वास्तव में संसार गुरु की आवाज़ सुन रहा है। शिष्य गुरु का क्रियात्मक पूरक है। यदि गुरु का जीवन अमूल्य सिद्धांतों की पुस्तक है तो शिष्य का जीवन उन सिद्धांतों की व्याख्या करते हुए उनका व्यावहारिक स्वरूप है।"

मगर गुरु के उद्देश्यों के प्रचार-प्रसार के लिए अपना जीवन समर्पित कर देने वाले स्वामी विवेकानंद की पहली मुलाकात जब स्वामी रामकृष्ण से हुई थी तब रामकृष्ण के विचारों से उनकी कोई समानता नहीं थी। क्योंकि तब रामकृष्ण हिंदू धर्म के प्रतीक थे और विवेकानंद, जो उस समय नरेंद्रनाथ के नाम से जाने जाते थे, पश्चिम के तर्क़, विचार और बुद्धिवाद के पक्षधर थे। उन्होंने पाश्चात्य दर्शन का गहन अध्ययन किया था तथा शेली, वर्ड्सवर्थ, हेगेल, दांते, रूसो, मिल एवं स्पेंसर जैसे पश्चिम के विद्वानों से अभिभूत थे। उनकी ईश्वर में आस्था नहीं थी और वे साधु-महात्माओं का उपहास उड़ाया करते थे। लेकिन इन सब के बावजूद नरेंद्र में एक प्रखर जिज्ञासा थी जो उन्हें सत्य और ज्ञान की खोज में सतत भटकाए रखती थी। यही भटकन उन्हें रामकृष्ण के पास ले आई थी। परंतु वह विश्वास नहीं कर पा रहे थे कि इस अशिक्षित संत से उनकी जिज्ञासाओं का समाधान हो पाएगा। फिर भी वह एकबारगी स्वामी रामकृष्ण को इंकार नहीं कर सके। परिणाम यह हुआ कि स्वामी रामकृष्ण का प्रभाव उन पर धीरे-धीरे गहरा होता गया। उन्होंने तर्क, बुद्धि, संदेह सभी प्रकार से रामकृष्ण से बातचीत की और अंतत यह स्वीकार कर लिया कि उनके द्वारा बताया गया मार्ग ही सत्य है। उसके बाद उन्होंने रामकृष्ण का शिष्यत्व ग्रहण कर लिया और रामकृष्ण ने भी पूरे विश्वास के साथ अपनी जिम्मेदारी अपने प्रिय शिष्य को देकर देह त्याग दिया।

गुरु की मृत्यु के बाद नरेंद्र ने अपने कुछ साथियों के साथ वराह नगर में एक मठ की स्थापना की, जिसमें बाद में कुछ और युवक आ गए। इस समय तक नरेंद्र के पिता की मृत्यु हो चुकी थी जिसके कारण उनकी आर्थिक कठिनाइयां बहुत बढ़ गई थीं। मगर वह विचलित नहीं हुए। महीनों बिम्बा वृक्ष के उबले पत्ते, चावल और नमक खाकर रहते हुए अपने प्रयास में लगे रहे और अंततः सन् 1888 में पहली बार मठ के कुछ युवकों ने वैदिक क्रियाओं के अनुसार सन्यास ग्रहण कर अपने नाम बदल डाले। नरेंद्रनाथ भी उसी समय स्वामी विवेकानंद बन गए। रोमां रोलां के शब्दों में, "वराह नगर मठ की चारदीवारी में दैनिकचर्या और मित्रों के साथ सत्संग के बीच इस युवक में अपार शक्ति का संचय हो रहा था। इसे बांधे रखना संभव न था। अपनी जीवनशैली, नाम, शरीर जो नरेंद्र के साथ जुड़ा था, उन सब बंधनों एवं बेड़ियों को उतार भिन्न प्रकार के नये व्यक्तित्व का निर्माण करने के लिए, नया जन्म लेने के लिए वह प्रेरित हुए। एक नयी विराट आत्मा जिस शरीर में सांस ले सके ऐसे एक नये व्यक्ति विवेकानंद का पुनर्जन्म हुआ।"

उसके बाद विवेकानंद भारत-भ्रमण पर निकल गए। इस दौरान उन्हें भारत की ग़रीबी, अज्ञानता, अंधविश्वास और पतन का ज्ञान हुआ। वे इस

विनाश से बचने का उपाय सोचने लगे। भारत-भ्रमण के क्रम में ही उन्हें अमरीका के शिकागो शहर में होने वाले धर्म-संसद की जानकारी मिली। वे वहां गए। वहां जाने के पीछे उनका उद्देश्य भारत की निर्धनता दूर करने के लिए धन जुटाना था। उस धर्म संसद में अपने संबोधन में अन्य वक्ताओं की तरह अमरीका के स्त्रियों और पुरुषों, संबोधित करने के बदले 'अमरीका के बहनों और भाइयो' के संबोधन से भाषण की शुरुआत करके भारत की 'वसुधैव कुटुंबकम्' की अवधारणा को स्थापित कर दिया। तभी तो द *बोस्टन इवनिंग ट्रांसक्रीप्ट* ने उन्हें सर्वधर्म सम्मेलन का सबसे प्रिय व्यक्ति कहा तो द *न्यूयार्क हेराल्ड* ने उनके बारे में लिखा– "उन्हें सुनने के बाद हम यह अनुभव करते हैं कि भारत जैसे ज्ञानी राष्ट्र में मिशनरी भेजना कितनी मूर्खता है।" इस धर्म संसद के बाद विवेकानंद अमरीका के विभिन्न स्थानों पर गए और फिर इंग्लैंड गए। इंग्लैंड से पुन: अमरीका लौटे। वहां न्यूयार्क में सन् 1896 में वेदांत सभा की स्थापना की और इसके बाद इंग्लैंड के मित्रों के बुलावे पर वे पुन: इंग्लैंड गए। इंग्लैंड से वे स्वीटज़रलैंड गए और वहां से फिर लंदन आ गए। लंदन में पाल ड्यूसन के साथ वेदांत पर विचारों का आदान-प्रदान करने के बाद सन् 1897 में वे भारत लौट आए।

भारत लौटकर उन्होंने फिर संपूर्ण भारत की यात्रा करते हुए यहां कि निर्धनता, अशिक्षा, जातीयता तथा कर्मकांड को दूर करने का अभियान छेड़ दिया। उनका मानना था कि भारत के पास असीम शक्ति है, जिसे जागृत करके यहां की सारी समस्याओं का समाधान किया जा सकता है और यह जागृति धर्म के द्वारा संभव हो सकती है। इसीलिए उन्होंने 1 मई, 1897 को रामकृष्ण मिशन की स्थापना की और 2 जनवरी, 1899 को अपने पुराने मठ को बेलूर में स्थानांतरित कर दिया जो अब भी रामकृष्ण मठों का केंद्र स्थल है। इस स्थानांतरण के बाद वे पुन: इंग्लैंड गए, फिर अमरीका, उसके बाद फ्रांस, पेरिस, ग्रीस और मिस्र आदि का भ्रमण करते हुए सन् 1900 में भारत वापस आ गए। यहां आकर उन्होंने एक बार फिर बंगाल का भ्रमण किया। परंतु इस लगातार भ्रमण के कारण उनकी तबियत खराब रहने लगी। वे स्वास्थ्य लाभ के लिए बनारस भी गए लेकिन अधिक लाभ नहीं हुआ। वहां से कलकत्ता वापस लौटने पर उनकी हालत अत्यधिक ख़राब हो गई और अंतत 4 जुलाई, 1902 को उनका देहावसान हो गया। इस प्रकार 12 जनवरी, 1863 को जन्मे इस कर्मठ वेदांती ने 40 वर्ष भी पूरे नहीं किए थे अपनी ज़िदगी के।

अपनी दैहिक मृत्यु के बावजूद विवेकानंद मरे नहीं हैं। वे सदैव जीवित रहेंगे, क्योंकि उन्होंने भारतीयता को जागृत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उन्होंने भारतीय सभ्यता और विचारों की श्रेष्ठता को संपूर्ण संसार के सामने अभिव्यक्त किया तथा हिंदू अध्यात्मवाद के सहारे हिंदू धर्म, भारतीय समाज और राष्ट्र-निर्माण में अहम योगदान किया। उन्होंने 'सर्व धर्म समभाव' तथा मानव मात्र की सेवा का अनूठा संदेश पश्चिम के राष्ट्रों को दिया तथा अपने व्यक्तित्व एवं परिश्रम के द्वारा अपने गुरु रामकृष्ण परमहंस के उपदेशों, विचारों तथा शिक्षाओं को संपूर्ण संसार में फैलाया। उन्होंने लोगों को मानवीय प्रगति के साथ-साथ राष्ट्रीय प्रगति का भी रास्ता दिखलाया। उन्होंने बताया कि यदि भारतवासी वेदांत के आदर्शों पर चलकर अपनी आत्मा का बोध करते हुए आदमी को आदमी से अलग करने वाली दीवारों को तोड़ देते हैं तो वे फिर से एक गौरवशाली और ताक़तवर समाज और राष्ट्र का निर्माण करने में सक्षम हो सकते हैं। उनके इसी उद्घोष के कारण उन्हें सांस्कृतिक राष्ट्रीयता का जन्मदाता कहा जाता है। राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर' इस संबंध में लिखते हैं– "स्वामीजी ने अपनी वाणी और कर्तव्य से भारतवासियों में यह अभिमान जगाया कि हम अत्यंत प्राचीन सभ्यता के उत्तराधिकारी हैं, हमारे धार्मिक ग्रंथ संसार में सबसे उन्नत और हमारा इतिहास सबसे महान है। हमारी संस्कृत भाषा विश्व की सबसे प्राचीन भाषा है और हमारा साहित्य सबसे उन्नत साहित्य है। यही नहीं, प्रत्युत हमारा धर्म ऐसा है जो विज्ञान की कसौटी पर ख़रा उतरता है और जो विश्व के सभी धर्मों का सार होता हुआ भी उन सबसे अधिक है। स्वामीजी की वाणी से हिंदुओं में यह विश्वास उत्पन्न हुआ कि उन्हें किसी के सामने मस्तक झुकाने अथवा लज्जित होने की आवश्यकता नहीं है। भारत में सांस्कृतिक राष्ट्रीयता पहले उत्पन्न हुई। राजनीतिक राष्ट्रीयता बाद में जन्मी और इस सांस्कृतिक राष्ट्रीयता के पिता स्वामी विवेकानंद थे।"

स्वामी विवेकानंद ने भारत की सांस्कृतिक राष्ट्रीयता को जन्म देने के साथ-साथ समूची दुनिया में अध्यात्मवाद के महत्व को स्थापित किया। उनके अनुसार धर्म वास्तव में आत्मज्ञान है। इसलिए जब मनुष्य अपनी प्रकृति पर अधिकार करके आत्मज्ञान प्राप्त कर लेता है तो उसे ईश्वर की भी प्राप्ति हो जाती है। वे कहते हैं, "धर्म न पुस्तकों में है, न बौद्धिक विकास में और न तर्क़ में। तर्क़, सिद्धांत, पुस्तकें, धार्मिक क्रियाएं आदि केवल धर्म के सहायक हैं। धर्म आत्मज्ञान में है।" धर्म को आत्मज्ञान मानने के कारण ही वे सभी धर्मों की एकता में विश्वास करते थे तथा धार्मिक उदारता, समानता तथा सहयोग पर बल देते थे। उनका कहना था कि धार्मिक झगड़ों का मूल कारण धर्म का बाहरी पहलू है जिसके अंतर्गत सिद्धांत, पुस्तकें, क्रियाएं तथा मार्ग आदि आते हैं। जबकि धर्म का आंतरिक पहलू एक है और वह है आत्मज्ञान। इस संबंध में उनका कहना है– "धर्म आत्मा से संबंधित है, लेकिन वह विभिन्न भाषाओं, विभिन्न राष्ट्रों और विभिन्न रिवाज़ों के माध्यम से प्रकट होता है।"

विवेकानंद ने अपने धर्म में मनुष्य-मात्र की सेवा को महत्वपूर्ण स्थान दिया है। उन्होंने वास्तविक शिक्षा, स्त्री पुनरुत्थान तथा आर्थिक प्रगति के संबंध में भी अपने विचार प्रस्तुत किए। वे ग़रीबी, अंधविश्वास तथा रुढ़िवादिता के सख़्त ख़िलाफ़ थे और मानव सेवा को धर्म का आवश्यक अंग मानते थे। इसलिए उन्होंने कहा– "ईश्वर तुम्हारे सामने यहीं विभिन्न रूपों में हैं। जो ईश्वर के बच्चों को प्यार करता है वह ईश्वर की सेवा करता है।" उन्होंने अपने एक मित्र को पत्र में लिखा है, "निर्धन, नासमझ, अशिक्षित और असहाय को अपना ईश्वर बनाओ। उनकी सेवा करना ही धर्म है।" विवेकानंद यह मानते थे कि जब तक समाज से निर्धनता और अशिक्षा को मिटाया नहीं जाता तब तक समाज, समाज नहीं हो सकता। अत: पहले देश में फैली ग़रीबी और अज्ञानता को दूर करना आवश्यक है, क्योंकि इन्हें दूर करके ही देश का नवनिर्माण किया जा सकता है। इस प्रकार स्वामी विवेकानंद ने भारतीय सभ्यता, संस्कृति और धर्म के उत्थान में महत्वपूर्ण योगदान किया। उन्होंने हिंदू धर्म के प्राचीन गौरव की याद दिलाते हुए अपनी श्रेष्ठता को फिर से स्थापित किया तथा देशवासियों में राष्ट्रीयता की भावना को जागृत किया। उनके इन्हीं योगदानों के कारण रवीन्द्रनाथ टैगोर ने कहा है– "यदि कोई भारत को समझना चाहता है तो उसे विवेकानंद को पढ़ना चाहिए।" ❑

(लेखक बी.आर.ए बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर के दर्शनशास्त्र विभाग में रीडर हैं)

ख़बरों में

● मुद्रास्फीति डेढ़ साल में न्यूनतम

लंबे समय तक ऊंचाई पर बने रहने के बाद गत नवंबर के समाप्त सप्ताह में खाद्य मुद्रास्फीति 18 महीनों के न्यूनतम स्तर 8.60 फीसदी पर आ गई। इससे पहले मई 2009 में ही यह इससे नीचे रही थी। खाद्य मुद्रास्फीति गत वर्ष ज्यादातर दो अंकों में बनी रही। केवल 17 जुलाई को यह इकाई में पहुंची थी, जब यह 9.67 फीसदी पर आ गई थी। अर्थशास्त्रियों का मानना है कि खाद्य मुद्रास्फीति के नीचे आने से अब रिजर्व बैंक को मौद्रिक नीति तैयार करने में अधिक मशक्क़त नहीं करनी होगी।

आर्थिक विशेषज्ञों ने मुद्रास्फीति में आई गिरावट को उम्मीद से बढ़कर बताया है। उन्होंने कहा है कि यदि यह निम्न स्तर पर बनी रहती है तो मार्च तक सकल मुद्रास्फीति की दर सरकारी अनुमान के मुताबिक 5.5 फीसदी तक आ जाएगी। वित्त सचिव अशोक चावला ने कहा, "सकल मुद्रास्फीति की दर वही रहेगी जैसा हम पहले कह चुके हैं। जैसाकि रिज़र्व बैंक ने भी कहा है कि यह मार्च 2011 तक 5.5 फीसदी पर होगी।"

आंकड़ों के अनुसार गत नवंबर के समाप्त सप्ताह में एक साल पहले के मुक़ाबले दालों के दाम 10 फीसदी तक घट गए। आलू के दाम में गिरावट से सब्ज़ियों के मूल्यों में गिरावट दर्ज़ की गई। गेहूं के दाम 3.16 फीसदी नीचे रहे। जबकि अंडा, मांस और मछली के दाम 15.58 फीसदी तक ऊंचे रहे। अक्तूबर महीने में थोक मूल्य सूचकांक पर आधारित सकल मुद्रास्फीति 8.58 फीसदी रही है। सकल मुद्रास्फीति में खाद्य पदार्थों के साथ ही प्राथमिक वस्तुएं, विनिर्मित उत्पाद और ईंधन समूह में आने वाली विभिन्न उपभोक्ता वस्तुएं शामिल होती हैं।

क्रिसिल के मुख्य अर्थशास्त्री डी.के. जोशी ने कहा, "हमारा मानना है कि खाद्य मुद्रास्फीति निकट भविष्य में नीचे बनी रहेगी, हमें नहीं लगता कि यह फिर से दो अंकों में पहुंचेगी।" वित्त मंत्रालय में मुख्य आर्थिक सलाहकार कौशिक बसु ने पहले ही इसकी भविष्यवाणी कर दी थी। उन्होंने कहा था कि खाद्य मुद्रास्फीति 9 फीसदी से भी नीचे आ जाएगी।

● अब छठी कक्षा से चीनी भाषा की पढ़ाई

सीबीएसई की पहल के तहत अब देशभर के स्कूलों में चीनी भाषा की पढ़ाई शुरू होने जा रही है। अप्रैल 2011 से शुरू हो रहे नये सत्र में छठी कक्षा के छात्रों को चीनी भाषा सीखने का अवसर मिलेगा। सीबीएसई ने विदेशी भाषा के तौर पर इसे पढ़ाने की घोषणा की है। यह पहली बार है जब इतनी छोटी कक्षा से किसी विदेशी भाषा को सिखाने की कवायद की जा रही है। अभी तक सेकेंडरी व सीनियर सेकेंडरी स्तर पर विश्व स्तर पर 12 अन्य विदेशी भाषाओं की पढ़ाई सीबीएसई बोर्ड कराता है। यही कारण है कि चीनी भाषा का ज्ञान छात्रों तक पहुंचाने के लिए बोर्ड शिक्षकों को भी ख़ास तरह की प्रशिक्षण देने की तैयारी कर रहा है। सीबीएसई अध्यक्ष विनीत जोशी ने सत्र 2011-12 से चीनी भाषा की पढ़ाई शुरू कराने की घोषणा करने के साथ-साथ यह भी स्पष्ट किया है कि आखिर यह भाषा आज छात्रों के लिए क्यों महत्वपूर्ण है।

उनका कहना है कि वैश्विक अर्थव्यवस्था के तहत संसार का एक बहुत बड़ा हिस्सा चीनी भाषा बोलता है और चूंकि भारत पड़ोसी देश है, इसलिए यहां के छात्रों के लिए प्रारंभ से ही इस भाषा का ज्ञान होना ज़रूरी है। चीनी भाषा की पढ़ाई शुरू करने के पीछे बोर्ड का उद्देश्य है कि छात्र चीनी भाषा में प्रभावी ढंग से संवाद कर सकें। साथ ही इसका मकसद सुनने, पढ़ने, बोलने के कौशल का निर्माण करना, लिखित व मौखिक रूप से इसके इस्तेमाल करने के लिए आत्मविश्वास का निर्माण करना और पड़ोसी देश होने के नाते चीनी संस्कृति व परंपरा से रु-ब-रु होना भी है।

● फ़िल्म *मोनेर मानुष* को गोल्डन पीकॉक पुरस्कार

प्रसिद्ध फ़िल्मकार गौतम घोष की 19वीं शताब्दी के कवि ललोन फ़कीर के जीवन पर आधारित फ़िल्म *मोनेर मानुष* को भारत के 41वें अंतरराष्ट्रीय फ़िल्म महोत्सव (आईएफएफआई) में गोल्डन पीकॉक (स्वर्ण मयूर) पुरस्कार से सम्मानित किया गया है।

दस साल बाद किसी भारतीय फ़िल्म ने आईएफएफआई का शीर्ष पुरस्कार हासिल किया है। इससे पहले वर्ष 2000 में जयराज की फ़िल्म *करुणम* ने इस ख़िताब पर कब्ज़ा किया था। पहली बार भारत और बांग्लादेश की साझेदारी में बनी फ़िल्म *मोनेर मानुष* को इसकी शानदार सिनेमाई सुंदरता और ईर्ष्या की दुनिया में प्यार की करुणामयी चित्रण करने पर यह सम्मान हासिल हुआ।

दखल, पद्म नादिर माझी, पार और *अबार अरन्ने* जैसी आलोचकों द्वारा सराही गई फ़िल्मों के निर्देशक गौतम घोष ने कहा कि यह पुरस्कार असहनशील समाज में सहनशीलता पर मंजूरी है। इस सम्मानित फ़िल्म में बंगाली सुपरस्टार प्रोसेनजीत चटर्जी ने भूमिका निभाई है। फ़िल्म को सोने की ट्रॉफी के अलावा निर्देशक एवं निर्माता को 20-20 लाख रुपये दिए गए। कौशिक गांगुली की समलैंगिकों पर बनी एक अन्य भारतीय फ़िल्म *जस्ट अनदर लव स्टोरी* को सिल्वर पीकॉक पुरस्कार, प्रतीक चिह्न और 15 लाख रुपये का नक़द इनाम दिया गया। इस फ़िल्म में समलैंगिकता जैसे संवेदनशील विषय को निर्भीक रूप से चित्रित किया गया है।

जस्ट अनदर लव स्टोरी फ़िल्म में एक समलैंगिक फ़िल्मकार और उभयलिंगी सिनेमेटोग्राफर की कहानी है जो अपने प्यार का पुनर्मूल्यांकन करने का फ़ैसला करते हैं। इस फ़िल्म के अलावा न्यूजीलैंड की फ़िल्म *बॉय* को भी यह पुरस्कार संयुक्त रूप से दिया गया। तुर्की की फ़िल्म द *क्रासिंग* फ़िल्मोत्सव की दूसरी सर्वश्रेष्ठ फ़िल्म रही।

सर्वश्रेष्ठ निर्देशक का पुरस्कार डेनमार्क की फ़िल्म निर्देशक सुसैन बीअर को उनकी फ़िल्म *इन ए बेटर वर्ल्ड* के लिए दिया गया। इस साल से शुरु हुआ सर्वश्रेष्ठ अभिनेत्री का पुरस्कार पोलैंड की फ़िल्म *लिटिल रोज* की अभिनेत्री मैगडालेना बाकजारस्का को मिला। समारोह में केंद्रीय सूचना व प्रसारण राज्यमंत्री चौधरी मोहन जटुआ, गोवा के मुख्यमंत्री दिगंबर कामथ एवं बालीवुड कलाकार सैफ अली खान मुख्य अतिथि थे। इस मौके पर *लगान* फ़िल्म की अभिनेत्री ग्रेसी सिंह ने रंगारंग कार्यक्रम प्रस्तुत किया।

● एशिया पेसिफिक पुरस्कार मराठी फ़िल्म *विहिर* को

मराठी फ़िल्म *विहिर* लगातार अंतरराष्ट्रीय ख्याति अर्जित कर रही है और अब इसे 'पूर्व के

ऑस्कर' के नाम से मशहूर एशिया पेसिफिक स्क्रीन अवार्ड से फ़िल्म को नवाज़ा गया है। ऑस्ट्रेलिया के गोल्ड कोस्ट में हुए समारोह में यह पुरस्कार जीतने वाली *विहित* पहली भारतीय फ़िल्म बन गई है। फ़िल्म के तकनीकी विभाग ने इसे सम्मान दिलाने में कामयाबी हासिल की है। सुधीर पालसाने को फ़िल्म में सर्वश्रेष्ठ सिनेमेटोग्राफी के 2010 के एशिया पेसिफिक स्क्रीन अवार्ड से नवाज़ा गया। श्री सुधीर ने इस सम्मान को पूरी टीम की उपलब्धि बताते हुए कहा कि *विहिर* के लिए काम करते वक्त हर क्षण चुनौतीपूर्ण था। उन्होंने कहा, "ख़राब ढांचागत सुविधाओं और कठिन परिस्थितियों में काम करने के बावजूद हमने अच्छी तरह इसे पूरा किया। इसके लिए केवल मेरी नहीं बल्कि पूरी टीम को सराहना की ज़रूरत है।"

एफटीआईआई में प्रशिक्षण लेने वाले श्री सुधीर इससे पहले फ्रांसीसी फ़िल्म द *क्ले बर्ड* (2002) में भी काम कर चुके हैं जो कान फ़िल्म महोत्सव में सम्मानित हो चुकी है।

इसके अलावा उन्होंने हिंदी बाल फ़िल्म *ये है चक्कड़ बक्कड़ बंबे बो* (2003), हिंदी नाटक *आपका अक्का* (2009), इतालवी-जर्मनी वृत्तचित्र *डाय जुंगफ्राउ वान पालेरमो* (2005), मराठी भाषा की हास्य फ़िल्म द *वाइल्ड बुल* (2008) आदि के लिए भी काम किया है।

● भारत व फ्रांस बंगलुरु में खोलेंगे अंतरराष्ट्रीय प्रयोशाला

भारत और फ्रांस ने उच्च शिक्षा के क्षेत्र में वैज्ञानिक अनुसंधान में साझा काम करने के लिए हाथ मिलाया है। दोनों देश बंगलुरु में अंतरराष्ट्रीय स्तर की प्रयोगशाला स्थापित करेंगे। शैक्षिक क्षेत्र में आपसी सहयोग के लिए भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थानों (आइआइटी) और फ्रांस के पेरिस इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एंड टेक्नोलॉजी के बीच एक अन्य समझौता भी हुआ है।

मानव संसाधन विकास मंत्री कपिल सिब्बल की मौजूदगी में दोनों देशों के बीच दो अलग-अलग सहमति-पत्रों पर हस्ताक्षर किए गए। दोनों देशों के बीच अनुसंधान और प्रशिक्षण के लिए अंतरराष्ट्रीय प्रयोगशाला की स्थापना भारतीय विज्ञान संस्थान के बंगलुरु परिसर में की जाएगी। यह प्रयोगशाला इंडो-फ्रेंच सेल फॉर वाटर साइंस नाम से जानी जाएगी। दूसरा सहमति-पत्र सात भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थानों और फ्रांस के पेरिस इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एंड टेक्नोलॉजी के बीच हुआ है। ❑

भारत-फ्रांस में सहयोग का नया दौर

भारत और फ्रांस ने गत 6 दिसंबर को महाराष्ट्र में परमाणु संयंत्र स्थापित करने समेत सात समझौतों पर दस्तखत किए। इसमें से पांच समझौते असैन्य परमाणु क्षेत्र में सहयोग पर हुए। लंबी अवधि तक परमाणु ऊर्जा क्षेत्र में विश्व में अलग-थलग पड़े भारत का इस प्रकार का यह पहला समझौता है। सबसे अहम समझौता न्यूक्लीयर पावर कॉरपोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड (एनपीसीआईएल) और फ्रांसीसी कंपनी अरेवा के बीच हुआ।

दोनों देशों ने 2012 तक द्विपक्षीय कारोबार दोगुना कर 12 अरब यूरो तक करने का लक्ष्य हासिल करने की दिशा में काम करने का भी फ़ैसला किया।

एक बड़े प्रतिनिधिमंडल के साथ भारत आए फ्रांस के राष्ट्रपति निकोलस सरकोजी की प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह से हुई लंबी बातचीत में रक्षा, अंतरिक्ष, विज्ञान और प्रौद्योगिकी सहित विभिन्न क्षेत्रों के साथ दोनों ने आतंकवाद के ख़िलाफ़ परस्पर सहयोग को बढ़ाने के मुद्दे पर भी बातचीत की। दोनों देशों ने अफगानिस्तान और पाकिस्तान की स्थिति पर भी चर्चा की।

राष्ट्रपति सरकोजी ने भारत के दावे का समर्थन करते हुए कहा कि संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में भारत के लिए स्थायी सदस्यता विश्व में समानता के लिए महत्वपूर्ण है। उन्होंने कहा कि आप एक अरब लोगों को वैश्विक मामलों के निपटारे से अलग नहीं रख सकते। उन्होंने कहा कि 2008 में ही उन्होंने खुद भारत को विश्व के परमाणु संपन्न देशों के संगठन का सदस्य बनाने के विचार का समर्थन किया था।

एनपीसीआईएल और अरेवा के बीच इस परियोजना के लिए 'अर्ली वर्क्स समझौते' पर भी दस्तखत हुए। यह समझौता जैतपुर में 10,000 मेगावाट की परमाणु परियोजना का क्रियान्वयन शुरू करने के लिए ज़रूरी है। संयंत्र में 25 अरब डॉलर के निवेश से कुल छह रिएक्टर स्थापित किए जाएंगे। हालांकि समझौते के अमल में आने में अभी कुछ समय लगेगा क्योंकि क़ीमत जैसे कुछ तकनीकी मुद्दों पर बातचीत अभी होनी है।

समझौते के बाद राष्ट्रपति निकोलस सरकोजी के साथ साक्षा प्रेस कांफ्रेंस में प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने मौजूदा 4,000 मेगावाट परमाणु ऊर्जा क्षमता को रेखांकित करते हुए कहा कि अरेवा के साथ सहयोग से संयंत्र की स्थापना से देश की बिजली उत्पादन क्षमता में उल्लेखनीय वृद्धि होगी। अरेवा ने कहा है कि निर्माण कार्य शुरू होने के बाद पहला परमाणु ऊर्जा संयंत्र स्थापित होने में सात साल का वक्त लगेगा।

मनमोहन सिंह ने आतंकवाद को लेकर दोनों नेताओं के बीच हुई बातचीत की ओर संकेत करते हुए कहा कि आतंकवाद के ख़िलाफ़ संघर्ष एक और ऐसा क्षेत्र है, जिसमें भारत और फ्रांस तेज़ी से प्रगति कर रहे हैं। फ्रांस को भारत का महत्वपूर्ण मित्र करार देते हुए प्रधानमंत्री ने यूरोपीय देश की अत्याधुनिक रक्षा प्रौद्योगिकी देने की इच्छा की सराहना की।

आतंकवाद के मुद्दे पर श्री सरकोजी ने पाकिस्तान से इस बुराई पर काबू पाने के लिए प्रतिबद्धतापूर्वक काम करने को कहा। साथ ही उन्होंने पाकिस्तान के साथ संबंध सामन्य बनाने की दिश में भारत की कोशिशों की सराहना की।

दोनों नेता इस बात पर सहमत हुए कि आतंकवाद से अंतरराष्ट्रीय समुदाय को कड़ाई से निपटना चाहिए। साथ ही अफगानिस्तान के पड़ोसी देशों से देश को स्थिर बनाने की दिशा में रचनात्मक भूमिका निभाने को कहा। श्री सरकोजी ने कहा कि आतंकवाद निरोधी उपायों में दोनों देश सहयोग कर सकते हैं। दोनों पक्षों ने आतंकवाद के वित्त पोषण और अवैध वित्तशोधन को रोकने के लिए मिलकर काम करने का फ़ैसला किया।

जैतपुर के दो रिएक्टरों के निर्माण पर सात अरब डॉलर का ख़र्च आएगा। फ्रांस ने 25 साल तक इसके लिए ईंधन आपूर्ति की गारंटी दी है। ❑

रोज़गार समाचार

साप्ताहिक

क्या आप सरकारी/सार्वजनिक क्षेत्र उपक्रम/कर्मचारी चयन आयोग/संघ लोक सेवा आयोग/ रेलवे भर्ती बोर्ड/सशस्त्र सेनाओं/बैंकों में रोज़गार तलाश रहे हैं?

रोज़गार समाचार आपका श्रेष्ठ मार्गदर्शक है। यह विगत तीस वर्षों से नौकरियों के लिए सबसे अधिक बिकने वाला साप्ताहिक है। आप भी इसके सहभागी बनें।

आपका हमारी वेबसाइट: *employmentnews.gov.in* पर स्वागत है, जो कि

- नवीनतम प्रौद्योगिकी से विकसित है।
- उन्नत किस्म के सर्च इंजिन से युक्त है।
- आपके प्रश्नों का विशेषज्ञों द्वारा शीघ्र समाधान करती है।

रोज़गार समाचार/एम्प्लाएमेंट न्यूज़ की प्रति के लिए निकटतम वितरक से संपर्क करें।

व्यापार संबंधी पूछताछ के लिए संपर्क करें:

रोज़गारसमाचार, पूर्वीखण्ड4, तल 5, रामकृष्णपुरम, नईदिल्ली।

फोन: 26182079, 26107405, ई-मेल: emabm sa@yahoo.com

प्रकाशन विभाग

सूचना और प्रसारण मंत्रालय

भारत सरकार

प्रकाशक व मुद्रक अरविंद मंजीत सिंह, अपर महानिदेशक द्वारा प्रकाशन विभाग के लिए ब्रजबासी आर्ट प्रेस लिमिटेड, ई-46/11, ओखला औद्योगिक क्षेत्र, फेस-2, नयी दिल्ली-110 020 से मुद्रित एवं प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, सी.जी.ओ. कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, नयी दिल्ली-110 003 से प्रकाशित। वरिष्ठ संपादक : राकेशरेणु

Licenced under U (DN)-53/09-11
आर.एन.आई. 951/57
R.N.I. 951/57

रजि.सं.डीएल (एस)-05/3231/2009-11 तथा डाक व्यय की पूर्व अदायगी के बिना डाक में डालने के लिए लाइसेंस-प्राप्त
Reg. No. D.L.(S)-05/3231/2009-11 Licenced to post without pre-payment at RMS, Delhi
26 दिसंबर, 2010 को प्रकाशित • 29-30 दिसंबर, 2010 को डाक द्वारा जारी

प्रतियोगिता परीक्षाओं में

सफलता

एक सम्पूर्ण वार्षिक संदर्भ ग्रंथ के साथ

कोड 270

मूल्य 225/-

समसामयिक ताजा घटनाओं का विश्लेषण, खेल समाचार, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी, उद्योग व्यापार, विशिष्ट व्यक्तियों, पुरस्कारों एवं अन्य महत्वपूर्ण विषयों पर उपयोगी सामग्री

निःशुल्क पुस्तिका

(15 नवम्बर, 2010 तक के अद्यतन आँकड़े)

English Edition Soon !!
Rs. 250.00

नोट : Vol. 2 अप्रैल 2011 में प्रकाशित किया जाएगा

समसामयिक महत्वपूर्ण घटनाओं का विवेचन

प्रतियोगिता दर्पण 2/11 ए, स्वदेशी मीला नगर, आगरा-282 002 फोन : 4053333, 2530966, 2531101
• Fax : (0562) 4053330 • E-mail : care@pdgroup.in
ब्रांच ऑफिस : • नई दिल्ली फोन : 011-25251844/66 • हैदराबाद फोन : 040-66753330
To purchase online log on to www.pdgroup.in

YH-01/11/1